चतुर्भुजदास कृत

मधुमालती वार्ता

तथा

उसका माधव शर्मा कृत संशोधित रूपांतर

ग्रंथमाला-संपादक-मंडल

कृष्णदेवप्रसाद गौड़, हरवंशलाल शर्मा, सुरेश अवस्थी,
करुणापति त्रिपाठी, सुधाकर पांडेय, भोलाशंकर व्यास,
शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र' (संयोजक)

संपादक

डॉ० माताप्रसाद गुप्त
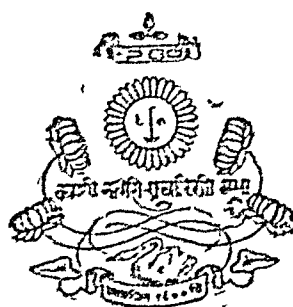
नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

प्रकाशक : नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

मुद्रक : शंभुनाथ वाजपेयी, नागरी मुद्रण, वाराणसी

प्रथम बार, ११०० प्रतियाँ, सं० २०२१ वि०

मूल्य ८)

आकर ग्रंथमाला का परिचय

नागरीप्रचारिणी सभा ने अपनी हीरक जयंती के अवसर पर जिन भिन्न-भिन्न साहित्यिक अनुष्ठानों का श्रीगणेश करना निश्चित किया था उनमें से एक कार्य हिंदी के आकर ग्रंथों के सुसंपादित संस्करणों की पुस्तकमाला प्रकाशित करना भी था। जयंतियों अथवा बड़े बड़े आयोजनों पर एकमात्र उत्सव आदि न कर स्थायी महत्व के ऐसे रचनात्मक कार्य करना सभा की परंपरा रही है जिनसे भाषा और साहित्य की ठोस सेवा हो। इसी दृष्टि से सभा ने हीरक जयंती के पूर्व एक योजना बनाकर विभिन्न राज्य सरकारों और केंद्रीय सरकार के पास भेजी थी। इस योजना में सभा की वर्तमान विभिन्न प्रवृत्तियों को संपुष्ट करने के अतिरिक्त कतिपय नवीन कार्यों की रूपरेखा देकर आर्थिक संरक्षण के लिये सरकारों से आग्रह किया गया था, जिनमें से केंद्रीय सरकार ने हिंदी शब्दसागर के संशोधन परिवर्धन तथा आकर ग्रंथों की एक माला के प्रकाशन में विशेष रुचि दिखलाई और ६–३–५४ को सभा की हीरक जयंती का उद्घाटन करते हुए राष्ट्रपति देशरत्न डॉ० राजेंद्र प्रसाद जी ने घोषित किया—'मैं आपके निश्चयों का, विशेषकर इन दो (शब्दसागर संशोधन तथा आकर ग्रंथमाला) का स्वागत करता हूँ। भारत सरकार की ओर से शब्दसागर का नया संस्करण तैयार करने के सहायतार्थ एक लाख रुपए की सहायता, जो पाँच वर्षों में, बीस बीस हजार करके दिए जायँगे, देने का निश्चय हुआ है। इसी तरह से मौलिक प्राचीन ग्रंथों के प्रकाशन के लिये पच्चीस हजार रुपए की, पाँच वर्षों में पाँच पाँच हजार करके, सहायता दी जायगी। मैं आशा करता हूँ कि इस सहायता से आपका काम कुछ सुगम हो जायगा और आप इस काम में अग्रसर होंगे।'

केंद्रीय शिक्षामंत्रालय ने ११–५–५४ को एफ ४–३–५४ एच ४ संख्यक एतत्संबंधी राजाज्ञा निकाली। राजाज्ञा की शर्तों के अनुसार इस माला के लिये संपादक मंडल का संघटन तथा इसमें प्रकाश्य एक सौ उत्तमोत्तम ग्रंथों का निर्धारण कर लिया गया है। संपादक मंडल तथा ग्रंथसूची की संपुष्टि भी केंद्रीय शिक्षामंत्रालय ने कर दी है। ज्यों ज्यो ग्रंथ तैयार होते चलेंगे, इस माला में प्रकाशित होते रहेंगे। हिंदी के प्राचीन साहित्य को इस प्रकार उच्च-स्तर के विद्यार्थियों, शोधकर्ताओं तथा इतर अध्येताओं के लिये सुलभ करके केंद्रीय सरकार ने जो स्तुत्य कार्य किया है उसके लिये वह धन्यवादार्ह है।

———

प्रकाशकीय वक्तव्य

अपनी स्थापना के समय से ही नागरी लिपि एवं हिंदी साहित्य के उन्नयन एवं विकास के विभिन्न विधायक संकल्पों के साथ ही नागरीप्रचारिणी सभा ने हिंदी के युगनिर्माता मूर्धन्य साहित्यस्रष्टाओं की ग्रंथावलियों का प्रकाशन भी आरंभ किया। हिंदी के सुप्रसिद्ध गंभीर शीर्ष विद्वानों का सहयोग इस क्षेत्र में सभा को सतत मिलता रहा। फलतः, तुलसी ग्रंथावली, भूषण ग्रंथावली, भारतेंदु ग्रंथावली, रत्नाकर (कवितावली), पृथ्वीराज रासो, बाँकीदास ग्रंथावली, ब्रजनिधि ग्रंथावली और श्रीनिवास ग्रंथावली आदि का प्रकाशन सभा ने किया।

अपनी हीरक जयंती के अवसर पर सभा ने इस दिशा में केंद्रीय सरकार की सहायता से योजनाबद्ध रूप से नूतन प्रयत्न आकर ग्रंथमाला के रूप में आरंभ किया। इस ग्रंथमाला में अबतक भिखारीदास ग्रंथावली, मान राजविलास, गंग कवित्त, पद्माकर ग्रंथावली का प्रकाशन सभा कर चुकी है। इधर धनाभाव के कारण यह कार्य कुछ शिथिल था किंतु ग्रंथमाला का कार्य चलता रहा। जसवंतसिंह ग्रंथावली यंत्रस्थ है और शीघ्र ही प्रकाशित हो रही है।

दादूदयाल ग्रंथावली (सं०-पं० परशुराम चतुर्वेदी), बोधा ग्रंथावली (सं०-पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र), नागरीदास ग्रंथावली (सं०-डॉ० किशोरीलाल गुप्त) एवं ठाकुर ग्रंथावली (सं०-श्री चन्द्रशेखर मिश्र) को संवत् २०२१ तक प्रकाशित करने का हमारा संकल्प है। केंद्रीय सरकार के शिक्षा विभाग की आर्थिक सहायता से यह संकल्प मूर्त हो रहा है। इसके लिये सभा सरकार के प्रति कृतज्ञ है और हमें विश्वास है कि शीघ्र ही इस दिशा में उसका स्वप्न पूर्णतः साकार होगा।

चतुर्भुजदास कृत मधुमालती वार्ता इस ग्रंथमाला का सप्तम पुष्प है। मधुमालती की प्रेमकथा को आधार बनाकर लिखे गए हिंदी में अनेक ग्रंथ हैं किंतु यह उन सबसे भिन्न लोककाव्यपरक है। अब तक उपलब्ध चार

अनुक्रमणिका

निवेदन

'मधुमालती वार्ता' के हस्तलेख प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। प्रस्तुत ग्रंथ के संपादनकर्ता ने बताया (रचयिता और रचनाकाल—पृ० ४) है कि 'राजस्थान का यह अत्यधिक लोकप्रिय काव्य रहा है'। उन्होंने यह भी कहा है कि 'जितनी अधिक प्रतियाँ इस काव्य की राजस्थान और राजस्थान से बाहर जाकर अन्यत्र मिलती हैं, कदाचित् ही राजस्थान के किसी अन्य काव्य की उतनी मिलती होंगी'। परंतु इतने लोकप्रिय काव्य के लेखक का काल और कुछ सीमा तक उसकी कृति के मूलरूप का असंदिग्ध विवरण अनुपलब्ध है। 'माधवानल-कामकंदला' नामक प्रसिद्ध प्रेमकथा के एक लेखक—**माधवशर्मा** के माध्यम से 'मधुमालती कथा' के मूलरूप की रचना करनेवाले **चतुर्भुजदास** के विषय में जो कुछ पता चलता है—उसका प्रस्तुत ग्रंथ के संपादक ने विवरण दिया है। **मधुमालती की वार्ता** का जो रूप, **माधवशर्मा** द्वारा मिलता है उसके विषय में **माधवशर्मा** कहते हैं—'दोय जना मिलि सोय बनाई'। इन दोनों में एक हैं **चत्रभुजदास** (चतुर्भुजदास) कायस्थ। मारूदेश मे उनका गृह था। पहली कथा का अर्थात् कथा या वार्ता के प्रथम रूप का वर्णन करनेवाले हैं वे ही **चतुर्भुजदास**। बाद में **माधवशर्मा** ने उस रूप में चरित का कुछ सुधार करते हुए काव्य को संशोधित रूप में लिखा है।

प्रस्तुत ग्रंथ के संपादक डा० माताप्रसाद गुप्तजी ने अपने अनुमान के आधार पर **चतुर्भुजदास** की मूल रचना का कथांश और **माधवशर्मा** द्वारा किए गए संशोधन का कथाभाग बताने का प्रयास किया है। कुछ कल्पनाओं के आधार पर ही यह सब अनुमान किया गया है। फिर भी **माधवशर्मा** के हस्तलेख से एक बात प्रमाणित हो जाती है कि संवत् १६०० में लिखित 'माधवानलकामकंदला' के समय तक 'मधुमालती वार्ता' अथवा 'मधुमालती कथा' या 'मधुमालती विलास' या 'मधुमालती

रसविलास' की रचना हो चुकी थी। इसी में माधवशर्मा ने कुछ संशोधन किया और संक्षिप्त करके रखा था। बाद—इस अपभ्रंश रूप में—'माधवानलकाम-कंदला' के उल्लेख में साथ संवत् १६०० में सामने आया। परंतु प्रस्तुत वार्ताग्रंथ की जो प्रतिलिपियाँ उपलब्ध हुई हैं और जिनके आधार पर 'मधुमालती वार्ता' का प्रस्तुत संस्करण संपादित हुआ है वे सभी प्रायः संवत् १८०८ से लेकर संवत् १८६१ तक की ही हैं। केवल एक प्रतिलिपि संपादक को मिली (हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग के संग्रहालय में) जिसका प्रतिलिपिकाल संवत १७०३ है। पर खेद—जैसा कि संपादक ने बताया है—इस हस्तलेख के दो अंतिम पृष्ठ नष्ट हो गए और उसका प्रमाण भी नष्ट हो गया है।

इन्हीं कारणों से संपादक के लिये प्रस्तुत ग्रंथ का रचनाकाल और ग्रंथकार के समय का ठीक ठीक निर्धारण करना अत्यंत दुष्कर हो गया है। इतना ही अनुमान किया जा सकता है कि संवत् १६०० वि० के पूर्व ही चतुर्भुजदास—इस ग्रंथ की रचना अवश्य कर चुके थे। इस प्रकार मूल रूप में यह काव्य सोलहवीं शती में निर्मित हो गया था। मध्यकालीन हिंदी के प्रेमकाव्यों में—रचनाकाल की प्राचीनता के विचार से—निश्चय ही इस काव्य का स्थान महत्वपूर्ण कहा जा सकता है।

इसका दूसरा भी एक महत्व है। यह ग्रंथ विशुद्ध भारतीय प्रेमकथाशैली में विरचित है। **पुहकर** के **रसरतन** पर भी सूफीशैली की प्रभावच्छाया पहुँच गई है। डा० गुप्त ने प्राक्कथन के पृ० १० और ११ में बताया है कि इसकी कथाशैली और वर्णनशिल्प—दोनों में ही विशुद्ध भारतीय प्रेमकथा की तदाप्रचलित उस परंपरा का अनुसरण हुआ है जिसमें विशुद्ध भारतीय ढंग से भारतीय प्रेमकथाएँ लिखी जाती रही होंगी। यह अनुमान किया जा सकता है कि हिंदी में भी इस परंपरा की अन्य प्रेमकथाएँ निश्चय ही लिखी गईं रही होंगी। परंतु दुर्भाग्यवश आज वे दुर्लभ हो गई हैं। यह परंपरा जहाँ एक ओर 'छिताई वार्ता' वाली शैली से इतर है वहीं दूसरी ओर सूफी या सूफीप्रभावित असूफी प्रेमकथाओं से भी पृथक् है। अतः इस ग्रंथ की अपनी विशेषता है ही।

संपादक ने इस ग्रंथ की प्रकाशनीयता की दृष्टि से एक और बात की ओर (प्राक्कथन में) ध्यान आकृष्ट किया है। हिंदी साहित्य में **चतुर्भुजदास** नाम के अनेक कवि प्रसिद्ध है और **मधुमालती** नाम के अनेक काव्य भी।

परंतु प्रस्तुत कृति और उसका निर्माता—दोनों ही पूर्णतः उनसे भिन्न हैं। इसकी कथा भी **मंझन** की **मधुमालती** या दक्खिनी हिंदी के कवि **नुसरती** के **गुलशन-ए-इश्क** की प्रेमगाथा से सर्वथा भिन्न है। इन कारणों से भी ग्रंथ की पूरी जानकारी के लिये ग्रंथ का प्रकाश में आना नितांत आवश्यक, प्रतीक्षित और अपेक्षित था।

अपेक्षित तो इसलिए भी था कि यह ग्रंथ हिंदी का होकर भी अब तक हिंदी में अप्रकाशित था जब कि अहमदाबाद तथा बंबई से, गुजराती लिपि में मुद्रित, इसके दो संस्करण क्रमश; १८७५ ई० तथा १८७८ ई० में प्रकाशित हो चुके थे।

अपने संपादन के आधारभूत हस्तलेखों को विभिन्न गुणधर्मों के आधार पर चार वर्गों में विभाजित कर संपादक ने प्रस्तुत संस्करण तैयार किया है। विभिन्न वर्गों की प्रतिनिधिभूत कुछ प्रतियों की ही सहायता—मुख्यरूप से संपादन में ली गई है। यहाँ संपादक का अपना मत है कि **चतुर्भुजदास** की मूल **मधुमालती कथा** का मूलरूप—संभवतः—प्रथमवर्ग की प्रतियों मे ही उपलब्ध हो सकता है। इस कारण प्रकाश्यमान संस्करण के पाठ का निर्धारण करने मे तथानिर्धारित प्रथम वर्ग की प्रतियों का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। क्योंकि उसी वर्ग की प्रतियों में सबसे कम प्रक्षिप्तांश अनुमानित है। अतः जिस दृष्टि और आधार को लेकर **चतुर्भुजदास** के मूल ग्रंथ का पाठनिर्धारण हुआ है,—वर्तमान परिस्थिति में—वह स्वीकार्य होना चाहिए।

साहित्यिक पक्ष की दृष्टि से विचार करने पर ग्रंथ का काव्यपक्ष उच्चस्तरीय नहीं कहा जा सकता। अभिव्यक्तिशिल्प और उदात्त, नव्यतासंपन्न एवं उन्मेषवती कल्पना की भूमि का दर्शन—इसमें बहुत कम मिलता है। भावमूलक मर्मस्पर्शिता की दृष्टि से भी काव्य को उत्कृष्ट कृतियों की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। परंतु हिंदी में भारतीय प्रेमाख्यानक के विकास की दृष्टि से इस काव्य के रचनाकाल की प्राचीनता अवश्य ही महत्व रखती है। 'वार्ता' अथवा कथा (विलास, रसिकवार्ता) आदि साहित्य के ऐतिहासिक अध्ययन की दृष्टि से इस ग्रंथ की प्राचीनता निश्चय ही संबद्ध विषय के अध्येताओं को सहायक सिद्ध होगी।

यहाँ यह भी स्मरण रखने की बात है कि हिंदी के सूफी प्रेमाख्यानकों में जिन दोहा और चौपाई छंदों की अत्यधिक प्रियता और ग्राह्यता दिखाई

देती है, उन्हीं छंदों का यहाँ भी मुख्यरूप से उपयोग हुआ है। यहाँ उनका नाम दूहा और चौपई है। कहीं कहीं सोरठा का भी प्रयोग किया गया है। कहीं कहीं सोरठा के लिये 'दुहा सोरठा' नाम भी दिया गया है। इनके अतिरिक्त 'गाथा', 'कुंडलिया' आदि छंद भी इसमें मिल जाते हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि वे मूल लेखक के हैं या बाद मे प्रक्षिप्त।

इनके अतिरिक्त बीच बीच में श्लोक (श्लोक) भी मिलते हैं। इन श्लोकों की भाषा यद्यपि संस्कृत है तथापि संस्कृतव्याकरण की दृष्टि से उसे हम शुद्ध संस्कृत नहीं कह सकते हैं। कहीं कहीं श्लोक अवश्य ही प्रायः शुद्ध संस्कृत के जान पड़ते है। फिर भी इन श्लोकों की भाषा प्रायः मिश्रभाषा है, जैसे—

ना तृप्तिः अग्नि काष्ठानां नापगानां महोदधि।
नातंकं सर्वभूतानां न [पुसां] वामलोचनं॥
[पृ० ३० पद्य सं० २१२]

वस्तुतः ये श्लोक संस्कृतपद्यों के, संस्कृत सुभाषितों के वे रूप हैं जो असंस्कृतज्ञ अथवा अल्पसंस्कृतज्ञों के मुख से अवसर अवसर पर लोक मे उच्चरित हुआ करते थे। कवि भी शायद सस्कृतज्ञ नहीं था। इसी कारण अशुद्धरूप में उनका उद्धरण स्थान स्थान पर देता रहा है। यह भी हो सकता है परवर्ती काल के लेखों मे दिखाई पड़नेवाली संस्कृत की ये अशुद्धियाँ प्रतिलिपिकार की संस्कृतविषयक अनभिज्ञता के कारण आ गई हों।

संस्कृत के इन श्लोकों का प्रायः अर्थानुवाद स्वीकृत काव्य-भाषा मे किया गया है। वस्तुतः ऐसा लगता है उस युग की प्रेमकथाओं का जो रूप लोकप्रचलित था उनपर संस्कृतपरंपरा का काफी प्रभाव था। संस्कृत की लोकप्रिय नीतिकथा के ग्रंथों की अनुध्वनि इस 'मधुमालती वार्ता' में अतीव स्पष्ट सुनाई पड़ती है। इसमे संस्कृत की नीतिकथाएँ भी प्रासंगिक कथाओं के रूप से आई हैं और वहाँ के श्लोकों का पद्यानुवाद भी यत्रतत्र मिल जाता है। "अथ म्रिग सींघनी को प्रसंग" नामक अंतर्कथा (पृष्ठ १०) के अंतर्गत "अथ घूहड़ (उलूक) काक प्रसंग" (पृष्ठ १२) आता है जो पंचतत्र के 'काकोलूकीयतंत्र' की संक्षिप्त कथा है। इस कथाप्रसंग के पूर्व पृ० ११ मे एक श्लोक है—

परस्परं विरोधानां शत्रुमित्रं गृहेगता।
दग्धं काग उलूकानां प्रज्वलंती हुताशनम्॥ ७८॥

उसकी पादटिप्पणी में अन्य प्रति के इस श्लोकरूप का एक पाठांतर यों है—

> न विश्वासो पूर्वविरोधे शत्रुमित्रकदाचन ।
> दुखदाई गडदालक काकस्य पलयं गता ॥

इसी पृ० ११ मे पूर्वोक्त श्लोक के ऊपर की दो पंक्तियों मे आशय वर्णित है—

> पूरब विरोध जासु सुं होई । ताकी बात न माने कोई ।
> ऐसे जो रे पतीजे लोई । घूहड काग अई खो होई ॥ ७७ ॥

ये पंक्तियाँ पंचतंत्र के तृतीय तंत्रारंभ के निम्नलिखित श्लोक का अर्थानुवाद है—

> न विश्वसेत्पूर्वविरोधितस्य शत्रोश्च मित्रत्वमुपागतस्य ।
> दग्धां गुहां पश्य उलूकपूर्णां काकप्रणीतेन हुताशनेन ॥

यहाँ कहने का सार इतना ही है कि इन लोकप्रिय कथाओं और उनके नीतिवचनों का जनवर्ग मे काफी प्रचार था । 'माधुमालती कथा' के सदृश प्रेमकथाओं के लेखक—चाहे वे साधु संस्कृत के ज्ञाता रहें हों चाहे अल्प संस्कृतज्ञ—उन कथाओं और तत्संबद्ध जनप्रिय नीतिवचनों का धडल्ले के साथ प्रयोग किया करते थे । संभवतः 'चतुर्भुजदास' ने उसी प्रचलित परंपरा का अनुसरण किया है ।

इसका एक और पक्ष ध्यान में रखने योग्य है । चूँकि ये कथाएँ वस्तुतः लोककथाओं के आधार और उनकी प्रचलित पद्धति पर लिखी जाती रही हैं—इसी कारण इनकी भाषा में प्रवाह, सरलता, सहजता और गतिशीलता दिखाई पड़ती है ।

साहित्यिक आमंडनों द्वारा भाषा में अलंकरणपरक चमत्कार और वक्रोक्तिमूलक संस्कार का उत्कर्ष न रहने पर भी 'मधुमालती कथा' की भाषा मे प्रवाह और सहजता का निखार दिखाई देता है । कवि के छंदों में लोकोक्तियों और मुहावरों का निःसंकोचभाव से खूब प्रयोग देखा जा सकता है, जैसे—

> ज्यो जैसा को सँग करे त्यो तैसा फल खाय [पृ० ६ (६०)]
> गुर ती ठरे तो विष क्यूं दीजे [पृ० १४ (६६)]

फूकै तक्र दूध के दाकै [पृ० १४ (१०३)]
गीधो मरै कै वीधो करै [१६ (१३१)
होणो होए सो सिर परि होई [पृ० २२ (१५१)]
ज्युं गूंगे की गाह मन मैं रही [पृ० २४ (१६५)]
सगर सकोरा हरियर काठी ।
त्रिया की गति इरा हूँ ते काठी [पृ० २६ (१८६)]
आव बैल मोहे मार [पृ० २८ (१६६)]
वागुर चूले रस कित पइये [पृ० ३८ (२५४)]
सो तो तेरे हाथ न आवै। [पृ० ४० (२७४)]

ऐसी लोकोक्तियों और मुहावरों से यह काव्यग्रंथ आद्यत भरा पड़ा है। यहाँ केवल उदाहरण के लिये कुछ नमूने उद्धृत किए गए हैं।

इस ग्रंथ की एक और विशेषता भी ध्यान में रखनी चाहिए। 'मालती वाक्य', 'जैतमाल वाक्य', 'चकई वाक्य' के पूर्वनिर्देश द्वारा कथित, पात्रों के संवाद से काव्यरचनाशिल्प की विशेष परंपरा का संकेत मिलता है। संभवतः इस काव्य मे यह रीति लोककाव्य के शैलीगत प्रभाव से आई है। इसी प्रकार की बहुत सी वर्णनरूढ़ियाँ इसमें है।

यद्यपि इस ग्रंथ की भाषा ब्रजी है तथापि परकालवर्ती 'व्रजभाषा' का जैसा परिनिष्ठित और काव्यग्राह्य रूप विकसित हुआ उससे यह बहुत भिन्न है। इसमे 'राजस्थानी' और 'पिंगल' के रूपों की मिलावट बहुत काफी है। प्रयुक्त तद्भव शब्दों के अनेक ऐसे रूप दिखाई पड़ते हैं प्रसिद्ध ब्रजीसाहित्य में जिनका प्रयोग नहीं के बराबर कहा जा सकता है। हो सकता है, राजस्थानी में कुछ प्रयोग मिल जाते हों। 'इंड' (अंडा), चूंछिम (सूक्ष्म) आदि सैकड़ों इस प्रकार के प्रयोग यहाँ ढूँढ़ना कठिन नहीं है। बहुत से देशी या बोलचाल के रूप—जैसे 'टिटोरी (टिटिहरी पक्षी), तीस (तृष्णा), पिरोहित (पुरोहित), अंतेवर (अंतःपुर), चिन (चीन=चीन्ह=पहचान) कुमरी (कुमारी)—यहाँ अत्यधिक संख्या मे देखे जा सकते हैं। ढूँढ़ने पर बिलकुल नए या प्रायः अनुपलब्ध कुछ शब्दरूप भी यहाँ पाना कठिन नहीं है।

कहने का यहाँ इतना ही उद्देश्य है कि इसकी 'व्रजभाषा' संवत् १६०० से पूर्व की है (जैसा कि ग्रंथसंपादक ने बताया है—उससे पहले व्रजभाषा मे लिखित उपलब्ध ग्रंथों की संख्या बहुत अधिक नहीं है) और व्याकरण

तथा भाषाशास्त्र की दृष्टि से इस ग्रंथ की भाषा में अनेक अनुशीलनीय विशेषताएँ उपलब्ध होने की पर्याप्त संभावना भी है।

माधवशर्मा के संशोधित संस्करण से तत्कालीन कृष्णभक्ति के प्रभावशाली स्वरूप का और साथ ही साथ कृष्णभक्ति की दृष्टि से मथुरा, वृंदावन और वहाँ होनेवाले भजन-कीर्तन, पूजा-अर्चना एवं कृष्णलीलाओं की मधुरभक्ति का भी प्रमाण मिल जाता है।

इन सब दृष्टियों से प्रस्तुत कृति का महत्व स्पष्ट हो उठता है। आशा है, प्रस्तुत ग्रंथ के संपादन से—हिंदी के मध्यकालीन साहित्य-अनुशीलकों को प्रेरणा और नए कोण से परिशीलन करने की दिशा प्राप्त होगी। ऐतिहासिक, सामाजिक, साहित्यिक, भाषापरक और भारतीय प्रेमकथाओं की परंपरामूलक दृष्टि से ग्रंथ का अध्ययन होने पर अनेक नई बातें सामने आएँगी।

संपादक ने जिस श्रम, लगन और दीर्घकालीन अध्यवसाय के साथ ग्रंथ का संपादन किया है, उसके लिये हम उनका हार्दिक अभिनंदन करते हैं। ग्रंथ के आरंभ में 'प्राक्कथन' (पृष्ठ ६) तथा 'रचयिता और रचनाकाल' (१८ पृष्ठ)—द्वारा डा० गुप्त ने इस ग्रंथ की कुछ विशेषताओं का संकेत किया है, रचनाकार और कृति के काल का यथासंभव विचार भी किया है, संपादन की शैली एवं उसकी आधारभूत प्रतियों का वर्गीकृत परिचय दिया है, **चतुर्भुजदास** के मूल काव्यरूप और **माधवशर्मा** के संशोधित ग्रंथरूप तथा उनकी कथाओं का परिचय देते हुए—उनके संबंध में अपने विचार बताए हैं तथा मूलपाठ के निर्धारण में स्व-स्वीकृत दृष्टि का उल्लेख भी किया है। विभिन्न वर्ग की प्रतिओं के पाठांतर देकर मूल ग्रंथ का संपादन—बड़ी योग्यता के साथ किया गया है। काफी लंबे 'परिशिष्ट में अस्वीकृत छंदों का विस्तृत उल्लेख भी है। लगभग १४ पृष्ठों में विशिष्ट शब्दों के अर्थ भी दिए गए हैं। अंत में संवत् १७०७ वाले पूरे हस्तलेख को—जिसके आरंभ में ग्रंथ का नाम **मधुमालती रसविलास** है और अंत में जिसे **मधुमालती कथा** कहा गया है—पूर्णतः दे दिया गया है। इन सबसे अनुसंधानकर्ताओं के लिये ग्रंथ का संपादित रूप उपयोगी हो उठा है। आशा है, मध्यकालीन हिंदी साहित्य के अध्येताओं द्वारा इस ग्रंथ का गहराई के साथ अध्ययन होगा और इसके गुणदोषों की परीक्षा की जायगी।

अंत में पाठकों से मुद्रण और प्रूफ-संशोधन-संबंधी रह गई त्रुटियों के लिये क्षमा याचना करता हूँ। स्वयं संपादक ने भी ध्यान के साथ प्रूफ देखा तथा विभाग से भी सामान्यतः देखा गया। फिर भी बहुत सी त्रुटियाँ रह गई हैं। इसके लिये हम क्षमार्थी हैं। आशा है, पाठक, हमें क्षमा करते हुए इन्हें सुधार लेंगे।

रथयात्रा, २०२१ वि०

वाराणसी।

करुणापति त्रिपाठी,
साहित्य मंत्री,
ना० प्र० सभा, काशी।

— — —

प्राक्कथन

चतुर्भुजदास कृत 'मधुमालती' हिंदी की एक प्राचीन प्रेमकथा है जो विशुद्ध भारतीय शैली में लिखी गई है। चतुर्भुजदास नाम के एक से अधिक साहित्यकार हुए हैं, जिनमें से एक तो अष्टछाप के प्रसिद्ध भक्त थे, और 'मधुमालती' नाम की भी एक से अधिक रचनाएँ मिलती हैं, इसलिये हमारे साहित्य के इतिहास लेखकों ने इस रचना के लेखक और इसकी कथा के संबंध में प्रायः भूलें की हैं। उदाहरण के लिये हिंदी साहित्य के सबसे पुराने इतिहास लेखक गार्सां द तासी ने सं० १८९६ तथा पुनः सं० १९२७-२८ (द्वितीय संस्करण) में प्रकाशित अपने इतिहास ग्रंथ 'इस्त्वार द ला लितरात्यूर एँदूई ए एँदूस्तानी' में लिखा है कि इसके लेखक चतुर्भुजदास मिश्र हैं[1] और इसके नायक नायिका वे ही हैं जो दखिनी के प्रसिद्ध कवि नुसरती के 'गुलशन-ए-इश्क' के हैं।[2] इसी प्रकार मिश्रबंधुओं ने अपने 'मिश्रबंधुविनोद' में इसे विट्ठलनाथ जी के शिष्य चतुर्भुजदास गोरवा की रचना बताया है।[3]

किंतु वास्तविकता यह है कि यह न चतुर्भुजदास मिश्र की रचना है और न चतुर्भुजदास गोरवा की। इसके एक संशोधन-कर्त्ता माधव शर्मा ने लिखा है कि इसका लेखक कायस्थ था :

कायथ नाम चत्रभुज जाकौं। मारू देस भयौ यह ताकौं।

और जैसा हम आगे देखेंगे, इन माधव शर्मा का रचना काल सं० १६०० के आसपास है, इससे यह स्पष्ट है कि इसका लेखक कायस्थ था और चतुर्भुजदास मिश्र तथा चतुर्भुजदास गोरवा से भिन्न था।

इसी प्रकार इस ग्रंथ की कथा भी नुसरती के 'गुलशन-ए-इश्क' तथा मंझन की 'मधुमालती' की कथाओं से सर्वथा भिन्न है।

१—द्वितीय संस्करण (सं० १९२७), जिल्द १, पृ० ३८८

२—वही, (सं० १९२८), जिल्द २, पृ० ४८५

३—जिल्द १, नं० ५६

'गुलशन-ए-इश्क' से कुछ अंश अपने प्रसिद्ध 'शहपारा' में देते हुए श्री क़ादरी ने उक्त अंश की भूमिका में जो कथा दी है,[1] वह इस प्रकार है —

शाहज़ादा मनोहर शाहज़ादी चंपावती को दुश्मनों की क़ैद से छुड़ाकर उसके माँ-बाप से मिलाता है, जिससे चंपावती उससे प्रेम करने लगती है। चंपावती की माँ को मालूम होता है कि मनोहर उनके अधीन एक राजा की लड़की मधुमालती को चाहता है, इसलिये वह मधुमालती और मनोहर का मिलन कराकर मनोहर के उपकार का बदला चुकाने की सोचती है। वह इसी उद्देश्य से मधुमालती की माँ को न्योतती है और उसकी खूब खातिर करती है। जब चंपावती मधुमालती की माँ से बातें करती रहती है, उसी समय चंपावती की माँ मधुमालती को अपना बाग़ दिखाने के बहाने बाहर ले जाती है। दोनों में बातें होने लगती हैं। मधुमालती चंपावती की माँ से चंपावती के वापस मिलने का ब्यौरा पूछती है तो चंपावती की माँ कहती है कि उस (मधुमालती) के प्रेमी मनोहर ने ही चंपावती की जान बचाई। मधुमालती इस उत्तर से जब लज्जित होती है तो चंपावती की माँ उसे विश्वास दिलाती है कि वह उसका भला चाहती है और उसके प्रेम की बात प्रकट न होने देगी। इसके बाद वह उसे मनोहर की अँगूठी भी दिखाती है, जिसे देखते ही मधुमालती की विरहवेदना तीव्र हो उठती है और वह उस वेदना को जी खोल कर व्यक्त करने लगती है। [भूमिका यहीं पर समाप्त होती है और इसके अनंतर मधुमालती के विरह निवेदन का अंश 'शहपारा' में उद्धृत किया गया है।]

मंझन की 'मधुमालती' की कथा पाठकों को ज्ञात है,[2] अतः उसे यहाँ देने की आवश्यकता नहीं है। 'गुलशने इश्क' की यह कथा उसी का अनुसरण करती है। चतुर्भुजदास की 'मधुमालती' की मुख्य कथा आगे अत्यंत संक्षेप में दी गई है। नुसरती और मंझन की कथाओं से इस कथा की तुलना करने पर ज्ञात होगा कि उन दोनों के साथ इसका कोई संबंध नहीं है और यह एक सर्वथा भिन्न कथा है। पुनः, इसके साथ दर्जनों साक्षी-कथाएँ भी स्थान-स्थान पर विभिन्न कथनों को उदाहृत करने के लिये दी हुई हैं, किंतु इन

१—पृ० २१८–२२६

२—देखिए प्रस्तुत लेखक द्वारा संपादित मंझन कृत 'मधुमालती'—प्रकाशक : मित्र प्रकाशन (प्राइवेट) लि०, इलाहाबाद।

साक्षी-कथाओं में से भी कोई उक्त दोनों के ज्ञात अंशों में नहीं पाई जाती है। अतः यह प्रकट है कि प्रस्तुत कथा उक्त दोनों से एक नितांत स्वतंत्र कृति है।

गुजराती लिपि में इस कृति के दो संस्करण सन् १८७५ तथा १८७८ ई०[1] में क्रमशः अहमदाबाद तथा बंबई से प्रकाशित हुए थे किंतु तब से फिर कोई संस्करण निकला हुआ ज्ञात नहीं है। रचना हिंदी की है और ब्रजभाषा में प्रस्तुत की गई है, किंतु हिंदी में इसका कोई संस्करण अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ है।

किसी समय यह हिंदी की एक सर्वाधिक लोकप्रिय रचना रही है, क्योंकि इसकी जितनी अधिक प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं, तुलसीदास के 'रामचरित मानस' तथा बिहारी लाल की 'सतसई' के अतिरिक्त कदाचित् ही किसी रचना की होंगी। वे बहुधा सुंदर चित्रों से मंडित भी की गई हैं, इसलिए यह इस देश के ही नहीं विदेशों के संग्रहालयों में भी पहुँच गई है। इस प्रकार की एक चित्रित प्रति बोस्टन के म्यूजियम में है, जिसके फोटो स्टेट का उपयोग प्रस्तुत संपादन में किया गया है।

रचना में उसकी तिथि कहीं नहीं दी हुई है। अनुमान से यह काफी बाद की रचना समझी जाती रही है क्योंकि इसकी पहले प्रतियाँ विक्रमीय अठारहवीं शती के अंतिम चरण के पूर्व की नहीं थीं, किंतु छः सात वर्ष हुए, प्रस्तुत लेखक ने माधव शर्मा का किया हुआ इसका एक संशोधित रूपांतर ढूँढ़ निकाला, जिसकी रचना सं० १६०० के आस-पास हुई थी, और जिसकी एक मात्र प्रति उसे सं० १७०७ की प्राप्त हुई। यह प्रति प्रयाग के सम्मेलन संग्रहालय में है। उसमें माधव शर्मा ने कहा है कि यह रचना अकेले चतुर्भुज दास की कृति के रूप में विख्यात रही है, किंतु चतुर्भुजदास के बाद इसमें उन्होंने भी अपना कृतित्व सम्मिलित कर दिया है, जिससे रचना दोनो कवियो की सम्मिलित कृति मानी जानी चाहिए। यह सौभाग्य की बात है कि चतुर्भुज दास के पाठ की प्रतियाँ उपलब्ध हैं, इसलिए माधव शर्मा का कृतित्व निर्धारित हो जाता है। जैसा हम आगे देखेंगे, वह रेशम के वस्त्र में लगे हुए टाट के जोड़ से अधिक कुछ नहीं है, किंतु माधव शर्मा के इस संशोधित रूपांतर ने इतना प्रमाणित कर दिया कि चतुर्भुज दास की

१—कल्लू भाई करमचंद का प्रेस, अहमदाबाद, १८७५ ई० तथा सखाराम माणिक सेठ, बारकोट मारकेट, बम्बई, १८७८ ई०।

[illegible]

[illegible]

[illegible] कथा को प्रस्तुत करने का ढंग [illegible] रूप में भारतीय [illegible] शैली का ऐसा ही [illegible] जैसा प्रायः भारतीय कथा रचनाओं में मिलता है : कथा कहते कहते, उसमें वक्ता ने कहीं किसी अन्य [illegible] का उदाहरण के रूप में उल्लेख कर दिया, श्रोता ने पूछा कि वह कथा क्या थी और तब वह उदाहरण वाली 'साखी कथा' सुना दी गई। यह कथा शैली बाद में हिंदी में लुप्त हो गई, और कदाचित् इस शैली की हिंदी में सबसे अधिक संपन्न रचना यही है। इस कथा शैली का एक उपयोगी परिणाम यह है कि रचना में उस समय की कुछ अन्य कथाएँ भी मिल जाती हैं, जो अब विस्मृत-सी हो गई हैं। प्रक्षेपकारों ने तो रचना को इस दृष्टि से अधिक से अधिक संपन्न बनाने में कोई कसर नहीं उठा रखी है और उन्होंने यहाँ तक किया है कि अपने पूर्ववर्ती कवियो की कुछ पूरी की पूरी रचनाओं को उनकी भूमिकादि का अंश निकाल कर लगभग ज्यों का त्यों इसमें साखी कथाओं के रूप में जोड़ दिया है। इस प्रकार का एक उत्तम उदाहरण साधन कृत 'मैनासत' है जो च० १ प्रति में निर्धारित पाठ के छंद ४२७ के बाद दे दिया गया है और परिशिष्ट में [४२७ अ] के रूप में देखा जा सकता है। यद्यपि यह सही है कि प्रक्षेपकार ने 'मैनासत' के किसी प्रामाणिक रूप को प्राप्त करने का यत्न नहीं किया और उसे जो भी रूप राजस्थान में सुगमता से मिल सका, उसे ही उसने थोड़े से परिवर्तन-संशोधन के इसमें दे डाला, किंतु रचना का एक ऐसा रूप हमें इस प्रकार उपलब्ध हो गया जिसकी कोई स्वतंत्र प्रति अब प्राप्य नहीं है। प्रक्षेपकारों ने इसी प्रकार और भी कथाएँ इसमें यथास्थान रख दी हैं और उनका अध्य-

यन करना और उक्त कथाओं के पाठ-निर्धारण में उनकी सहायता लेना उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

इसी प्रकार रचना एक और दृष्टि से भी उल्लेखनीय है : रचयिता ने रचना के अंत में इसे 'काम-प्रबंध-प्रकाश' कहा है। यह उस प्रकार की विशुद्ध प्रेमकथा नहीं है जैसी 'छिताई वार्ता' तथा अन्य हिंदी की अनेक सूफ़ी और असूफ़ी प्रेमकथाएँ हैं। इस परंपरा में अवश्य ही और भी रचनाएँ हिंदी में प्रस्तुत की गई होंगी, किंतु अब वे कदाचित् अप्राप्य हो गई हैं। जिस युग में यह कथा रची गई, 'काम' कोई घृणित वस्तु नहीं थी। प्रेम का वह एक अनिवार्य अंग माना जाता था, इसी कारण हिंदी की अधिकतर सूफ़ी और असूफ़ी प्रेम कथाओं में संभोग-शृंगार के चित्र काफी पूर्ण और उभड़े हुए हैं, और भक्ति साहित्य भी उससे उल्लेखनीय मात्रा में प्रभावित हुआ है। ऐसा ज्ञात होता है कि काम स्वस्थ जीवन का एक उपयोगी अंग माना जाता था, और उसकी चर्चा ज्ञान वैराग्य के क्षेत्रों को छोड़कर गर्हित तो किसी भी अंश में नहीं मानी जाती थी। इस रचना में तो कवि ने नायक को प्रद्युम्न और काम का अवतार बता कर देवांश तक कहा है।

हिंदी के भक्तियुग ने ऐसी कथाओं को किस प्रकार बदला होगा, यह हिंदी साहित्य के इतिहास की एक शोधोपयोगी समस्या है। माधव शर्मा ने इसमें जो संशोधन रचना के उत्तरार्ध को बदलकर किया है, उससे प्रकट है कि उसकी प्रेरणा उन्हें तत्कालीन कृष्ण भक्ति अन्दोलन से प्राप्त हुई होगी। चतुर्भुज दास की रचना में गंधर्व विवाह कर लेने के अनंतर नायक और नायिका से जब यह कहा जाता है कि राजा उनका वध कराना चाहता है, और उन्हें देश छोड़कर भाग जाना चाहिए, वे अपनी स्वल्प शक्ति के साथ ही राजकीय कोप का सामना करने का निश्चय करते हैं, और उनके इस साहसपूर्ण कार्य में उन्हें दैवी सहायता भी प्राप्त होती है। न केवल उन्हें शिव-दुर्गा की सुरक्षा मिल जाती है, श्री हरि भी भारंड को भेजकर उनकी सहायता करते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप वे राजकोप को व्यर्थ करने में पूर्ण रूप से कृतकार्य होते हैं। माधव शर्मा के संशोधन के अनुसार इस सूचना को पाकर वे भाग निकलने को प्रस्तुत होते हैं और नायक भाग निकलने में सफल भी होता है, भले ही उसे नायिका को वहीं छोड़ देना पड़ता है। इसके बाद वह मधुपुरी (मथुरा) जाकर केशव देव जी की जुहार करता है और वृन्दावन में कृष्ण लीला के स्थानों में विचरण करता रहता है। इससे श्रीहरि उस पर कृपालु हो जाते हैं और उसे अपने देश को लौट जाने

के लिए प्रेरित करते हैं, जहाँ वह अनायास ही राजा के मारे जाने के बाद सिंहासन के रिक्त होने पर एक नियुक्त घड़ी पर नगर में प्रवेश करने के कारण राजा बना दिया जाता है, और अपनी परित्यक्ता प्रेयसी से मिल जाता है।

किंतु भक्ति आंदोलन इस प्रकार की रचनाओं का प्रचलन समाप्त नहीं कर सका, यह साहित्य के इतिहास की एक अन्य उल्लेखनीय घटना है: भक्ति आदोलन के सबसे अधिक विकास के काल में ही इस रचना की और आनंद कवि की कोक-मंजरी की इतनी अधिक प्रतिलिपियाँ हुईं जितनी उस युग में कम ही रचनाओं की हुई होगी। भक्ति युग में भले ही इस परंपरा की नवीन रचनाओं के लिये अनुकूल वातावरण न रहा हो किंतु इस प्रकार की रचनाओ के प्रचार में कोई कमी न आई, और असंभव नहीं कि सामंतो की विलास प्रियता के प्रभाव से भक्ति धारा शृंगार और रीति धारा में उतनी परिणत न हुई हो जितनी काम और शृंगार की इस धारा के कारण जो कि भक्ति युग में भी ग्रीष्म से क्षीण हुई सरिता के रूप प्रवाहित होती रही थी।

फलतः अनेक दृष्टियों से रचना विशिष्ट महत्व की है और आशा की जानी चाहिए कि इस विस्मृत प्राय रचना का हिंदी में अध्ययन होगा। इसका संपादन एक बहुत उलझन की वस्तु थी। बारह वर्ष पहले यह कार्य मैंने प्रारंभ किया था, किंतु यह विलंब अधिकतर उस उलझन को सुलझाने में समर्थ प्रतियो के तत्काल प्राप्त न होने के कारण हुआ।

इस कार्य में प्रतियाँ देकर जिन महानुभावों ने भी मेरी सहायता की है, उनका मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। देखने के लिये प्रतियाँ मुझे अनेक सज्जनों ने दीं, और इतनी बहुतायत से वे प्राप्त हुई कि उन सब का उपयोग संभव न था और न आवश्यक प्रमाणित हुआ। जिन संस्थाओं और सज्जनों से प्राप्त प्रतियों का मै इस संस्करण में उपयोग कर सका हूँ, वे हैं—डॉ० कस्तूरचंद कासलीवाल, जयपुर, भांडारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना, डॉ० रामचंद्र राय तथा मुनि कांतिसागर उदयपुर, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी, और श्री अगरचंद नाहटा, बीकानेर। उनका मैं विशेष रूप से आभारी हूँ। नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी को भी मै धन्यवाद देता हूँ कि उसने हिंदी की इस अनेक दृष्टियों से अत्यंत मूल्यवान किंतु अप्रकाशित आकर रचना को प्रकाशित करने का प्रबंध किया।

प्रयाग,
२४-६-६२

माताप्रसाद गुप्त

भूमिका

रचयिता और रचना काल

चतुर्भुज दास की रचना के निर्धारित पाठ में केवल निम्नलिखित उल्लेख उसके रचयिता के विषय का आता है—

> काम पबंध पकास पुनि मधुमालती विलास।
> प्रदुमन की लीला इह कहत चत्रभुजदास ॥६४७॥

यह चत्रभुज (चतुर्भुज) दास कौन थे, यह उक्त उल्लेख से नहीं ज्ञात होता है। रचना की एक प्रति को छोड़ कर शेष में निम्नलिखित दोहा भी मिला है, जो रचयिता के जाति-कुल का उल्लेख करता है—

> कायथ नैगम कुल अहै नाथा सुत भए राम।
> तनय चतुर्भुज दास के कथा प्रकासी तांम॥ (६४६ अ)

लेखक के कायस्थ होने का समर्थन एक माधव शर्मा ने भी किया है। साथ ही उन्होंने यह भी लिखा है कि वह मारू देश का निवासी था। इन माधव ने शर्मा रचना के कृतित्व का जो उल्लेख किया है, वह दर्शनीय है वे कहते हैं—

> मधुमालती वात यह गाई। दोय जना मिलि सोय बखाई।
> येक साथ ब्राह्मन सोई। दूजौ कायथ कुल में होई।
> येक नाव माधव वह होई। मनोहर पुरि जानत सब कोई।
> कायथ नाम चत्रभुज जाकौ। मारू देसि भयौ ग्रह ताकौ।
> पहली कायथ ही ज बषानी। पाछै माधव उचरी बानी।
> कछुक यामैं चरित सुगारी। श्री ब्रिंदाबन कौ सुखकारी।
>
> माधौ तातैं गाहियौ यौ रस पूरन नोय।
> कौन कास रस स्यौं हुतौ जानत हैं सब कोय॥
> काइथ गाई जानि कै रसकनि रस की बात।
> नाम चतुर्भुज ही भयौ मारू माहिं विख्यात॥

कथा को परिवर्तित करके उसमें पूरक कृतित्व का यश अर्जित करनेवाले लेखक अनेक हुए हैं;[1] किंतु रचना का कोई प्रमुख अंश सर्वथा परिवर्तित कर और उसके स्थान पर अपने द्वारा रचित अंश को रखकर माधव की भाँति संमिलित कृतित्व का दावा करनेवाला लेखक दूसरा नहीं दिखाई पड़ता है, सो भी रेशम के वस्त्र में टाट का टुकड़ा जोड़कर इसको नया रूप देनेवाला, जैसा हमें उसके कृतित्व को देखकर ज्ञात होता है।

इस रचना में रचना तिथि नहीं दी हुई है, न माधव शर्मा ने ही अपने संशोधित रूप में कोई तिथि दी है। किंतु माधव शर्मा की एक अन्य रचना 'माधवानल कामकंदला' में जो उसी प्रति मे प्राप्त हुई है जिसमें 'मधुमालती' का उनके द्वारा संशोधित रूप मिला है, उसकी रचना तिथि इस प्रकार मिलती है—

संवत सोला मै वरसि जेसलमेर मंझारि।
फागन मासि सुहावनै करी बात बिसतारि॥

यदि माधव शर्मा का संशोधन इस कृति के आसपास का हो, तो चतुर्भुज दास की रचना अवश्य ही विक्रमीय सोलहवीं शती के मध्य की होगी। किसी अन्य साक्ष्य से कृति की रचना तिथि पर इससे अधिक निश्चयात्मक प्रकाश नहीं पड़ता है। इतनी पुरानी रचनाएँ हिंदी में कम ही मिली हैं; इसलिए रचना का महत्व प्रकट है।

प्रतियाँ

चतुर्भुजदास की रचना की प्रतियाँ बहुत बहुतायत से मिलती हैं। राजस्थान का यह अत्यधिक लोकप्रिय काव्य रहा है। वस्तुतः जितनी अधिक प्रतियाँ इस काव्य की राजस्थान और राजस्थान से बाहर जाकर अन्यत्र मिलती हैं, कदाचित् ही राजस्थान के किसी अन्य काव्य की मिलती होगी। इन सबकी एक सूची देना भी कठिन कार्य होगा। किंतु ये सब प्रतियाँ कुछ निश्चित आकार प्रकार की मिलती हैं, जिससे उन्हे मुख्यतः चार वर्गों मे रक्खा जा सकता है।

---

१ देखिए: प्रस्तुत लेखक लिखित 'प्राचीन हिंदी साहित्य मे पूरक कृतित्व' हिंदुस्तानी, जनवरी मार्च, १९४९, पृ० १–१३।

सबसे छोटे आकार प्रकार का पाठ सबसे कम प्रक्षेपयुक्त भी है। इससे इस पाठ की जितनी प्रतियाँ प्राप्त हो सकीं, उन सभी का उपयोग प्रस्तुत संपादन में किया किया गया है। शेष वर्गों की केवल एक एक प्रति का उपयोग पर्याप्त समझा गया है।

प्र० १ : यह प्रति टोलियों के मंदिर, जयपुर की है और वहाँ के डॉ० कस्तूर चंद कासलीवाल के द्वारा प्राप्त हुई थी। यह ८७५ छंदों पर समाप्त हुई है। इसकी पुष्पिका निम्नलिखित है—

इति श्री मधुमालती कथा संपूर्ण समापत। सीती फागन बूदी ७ मंगलवार संवत १८२९ का दसकत नो नंदण सेठी का वाय जीन जूहार वंच्या पोट होइ तो सूध करि लीजो।

इसका प्रतिलिपिकार यथेष्ट रूप से योग्य नहीं था, इसलिये प्रति में मात्रादि के प्रयोग में त्रुटियाँ बहुतायत से मिलती हैं।

प्र० २ : यह प्रति भाडारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना की है। यह ठीक ठीक उसी पाठ की है जिसकी प्र० १ है, अंतर यह अवश्य है कि जिन स्थलों पर प्र० १ में कोई अंश संदिग्ध होने के कारण रिक्त स्थान के साथ छोड़ दिया गया है, वह भी इसमें आ गया है। प्रतिलिपिकार इस प्रति का भी लगभग उसी योग्यता का है जिसका प्र० १ का है। प्र० १ से इसका इतना अधिक सादृश्य होने के साथ साथ इस कारण कि प्र० १ में संदिग्ध अंशो को उतारा नहीं गया है, यह प्रकट है कि प्र० १ का पाठ अपने प्रथम आदर्श के अपेक्षाकृत अधिक निकट है, इसलिये संपादन में इसका वही पाठातर दिया है जो प्र० १ से किसी उल्लेखनीय प्रकार से भिन्न है। इसकी पुष्पिका में इसके प्रतिलिपिकार का नाम पिमासागर तथा इसका लेखनकाल सं० १८०८ दिया हुआ है।

प्र० ३ : यह प्रति १९६१-६२ में उदयपुर के महाराजा भूपाल कालेज के हिंदी विभाग के प्राध्यापक डॉ० रामचंद्र राय के द्वारा वहीं के एक सज्जन से प्राप्त हुई थी। यह किन्हीं गुणसागर की लिखी हुई है। यह प्रथम वर्ग की—और इस प्रकार चतुर्भुजदास की—समस्त प्राप्त प्रतियोंमें सबसे छोटी है और केवल ७७६ छंदों पर समाप्त हुई है। इसकी पुष्पिका में लेखन काल नहीं दिया हुआ है, किंतु उसी गुटके में जिसमें यह प्रति है गुणसागर की प्रतिलिपि दी हुई 'हंसराज वच्छराज चउपई' की एक प्रति है, जिसपर सं० १८८१,

मिती भादवा बद ११ की तिथि दी हुई है। इसलिये इस प्रति की तिथि भी सं० १८६१ के लगभग मानी जा सकती है।

प्र० ४ : यह प्रति प्रसिद्ध जैन विद्वान् मुनि कांतिसागर जी से प्राप्त हुई थी। इसमें रचना ८५१ छंदों पर समाप्त हुई है। इसकी पुष्पिका निम्नलिखित है—

इति श्री मधुमालती री रसिकवार्ता दूहा चौपाई श्लोक काव्य परतावक सहित सपूर्ण। सं० १८६४ वर्षे मिति असाढ वदि ६ दिने सोमवासरे श्री बीकानेर मध्ये लिषतं पं- प्र[वर] श्री १०८ श्री गुरांजी श्री वीरभाण जी तस्य शिष्य पं० प्र[वर] श्री लाद्दामल्ल जी तस्य शिष्य पं० प्र[वर] दौलतराम शिष्य पं० अकरचंद तस्य शिष्य चि० कर्मचंद्र पठनार्थे इदं वार्ता लिपि कृता साच पव्वंता गुर्सवतिरस्तुः।

याद्दसं पुस्तके दृष्टवा ताद्दसं लिषतं मया।
यदि सुद्धमसुद्धं वा मोदोसो न दीयते॥
दूहा मधुमालती वारता लिषी चूप चित लाय।
वाचणवाला चतुर नर शुद्ध वाचें ज्यों कविराय॥ १॥
दौलतराम मुनिवर लिखी बीकानेर मझार।
संवत् अठारे चौसठै आसाढ मास उदार॥
तिथ नवमी सोमवार वलि सुभ वेला सुपकार।
वाचणहारे चतुरनर लीजो सुकवि सुधार॥

लेखक पाठकयो क्षेमं भूयात्। श्री रस्तुः कल्याणस्तु।

प्रथम वर्ग की अन्य तीन प्रतियों का पाठांतर संपादित पाठ के साथ देने के कारण इस प्रति के पाठांतर देने की आवश्यकता नहीं प्रतीत हुई, इसलिये वे नही दिये गये हैं।

द्वि० १ : यह प्रति एक प्राचीन प्रति की फोटोस्टाट प्रति है जो नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी के आर्यभाषा पुस्तकालय में है और वहीं से प्राप्त हुई थी। इसमें रचना ६८५ छंदों पर समाप्त हुई है। इसकी पुष्पिका निम्नलिखित है—

मघर मास पद चतुर्थसै शुक्र सप्तमी जान।
लिख्यो ग्रंथ भगवान मुनि वासर आदित जान॥

इति श्री मधूमालती संपूर्ण। शुभमस्तु।

यह अनेक चित्रों से विभूषित है। इसकी मूल प्रति संभवतः बोस्टन के म्यूजियम में है, जिसके कुछ चित्र समय 'रूपम्' में प्रकाशित हुए थे।[1]

तृ० १ : यह प्रति मुझे श्री अगरचंद नाहटा, बीकानेरनिवासी से प्राप्त हुई थी। इसमें कुल लगभग १७०० छंद हैं और इसकी पुष्पिका है—

लषतं पंडत सोवर्जी पुत्र नीमलद लषीते।

च० १ : यह प्रति भी उपर्युक्त मुनि कांतिसागर से प्राप्त हुई थी। इसका अंतिम अंश फटा हुआ है। इसमें रचना २१०४ छंदों में समाप्त हुई है। अंतिम पत्र के क्षतविक्षत होने के कारण पुष्पिका इस प्रकार पढ़ी जाती है—

मारवाड़ मझ देस में नगर तितरी वास।
नागोर नवला सहर से सोटा मंदिर विलास ॥२१०५॥
··· तुरग है कहां लौं करूं बखान।
मोती की गिनती नहीं सो लाल पधारत पान ॥२१०६॥

···की कथा संपूरण अवतु। मंगलमस्तु। पोथी जैसी देषि वैसी लीखी मम···मगनि राम श्री गंगाराम जी कीहे वाम। मारवाड मध्ये गांव तीतरी राक रं मंधरं वारश्री सुबेदार महाराज मल्हार राव जी का कोठरी हल करन···लीपी ब्राह्मण गौड सीतला माता का पुजारी मोतीराम ने सं० १८७६ मगलवारे पूरी हुई छ॥ वांचे सुने उनो कूं आशीर्वाद तथा न्य को वाचे···

इस प्रति में भी जहाँ तहाँ चित्र दिए हुए हैं। इसका पाठ प्राप्त प्रतियों में सब से अधिक प्रक्षेपपूर्ण है, इस लिए संपादन में इसका पाठांतर नहीं दिया गया है, केवल इसके अस्वीकृत छंदों को परिशिष्ट में दिया गया है।

माधव शर्मा की कृति की एक ही प्रति प्राप्त हुई है, यह प्रयागके सम्मेलन, संग्रहालय में है। पाँच छः वर्ष पूर्व जब मैंने इसका पाठ उतारा था, इसकी कुल छंद संख्या ५६० थी और इसकी पुष्पिका निम्नलिखित था—

इति श्री मधुमालती कथा संपुरण समापतं। संवत १००७ चैत सुदि ११ लिषतं जैराम वांचै सुनै तेवे हमारो श्रीराम राम वारंवारं··

किंतु खेद की बात है कि अब प्रति के अंतिम दो पन्ने नहीं हैं।

रचना की कथा

मधुमालती की रचना की कथा इस प्रकार है : लीलावती देश में चंद्रसेन नाम का एक राजा था। तारनसाह उसका बुद्धिमान मंत्री था। राजा की चार रानियाँ थीं किंतु संतान एक ही थी और वह कुमारी मालती थी। तारनसाह का एक पुत्र था, जिसे वह 'मधु' [illegible] कहता था। बड़े होने पर 'मधु' [illegible] [illegible] पर जाने लगा, और मालती भी वहाँ आने लगी। मालती मधु को देखकर उसे चाहने लगी। मधु बहुत रूपवान था, और [illegible] पर पानी भरने के लिये आनेवाली स्त्रियाँ भी उस पर मुग्ध होने लगीं।

अब तारनसाह ने अपने पुरोहित नंद को बुलाकर 'मधु' को पढ़ने पर बिठा दिया। राजा ने भी मालती को पढ़ाने की सोची और मंत्री से सम्मति ली। उसने नंद के यहाँ उसे भी भेज कर पढ़वाने की सम्मति दी। प्रबंध यह किया गया कि परदा बाँधकर मालती उसके पीछे बैठे और जब नंद 'मधु' को पढ़ाए, परदे की आड़ से उसे भी पढ़ाए।

एक दिन गुरु जी अरण्य को गए हुए थे। मालती को अवसर मिला और उसने परदा हटाकर मधु को देखा। वह उस पर मुग्ध हो गई और उसने अपना स्नेह उस पर प्रकट किया। मधु ने संबंध के वैषम्य को बताते हुए मृग और सिंहिनी के प्रेम की कथा सुनाई, जिसमें सिंहिनी पर अनुरक्त मृग को सिंह के प्रहार से अपने प्राण गँवाने पड़े थे। इसी प्रसंग में सिंहिनी के पूछने पर मृग ने घूहड़-काग के विरोध की एक कथा सुनाई, जिसमें विरोध के कारण कागों ने धोखा देकर घूहड़ों को भस्मसात् कर दिया था। इसमें यह बताया गया है कि जिससे कभी का भी विरोध रहा हो, उसकी बातों में आने पर इसी प्रकार का दुःख उठाना पड़ता है। मालती ने उस कथा में संशोधन करते हुए बताया कि सिंहिनी का प्रेम सच्चा था और जब सिंह ने उस मृग पर प्रहार करना चाहा था, वह उछल कर उसकी सींगों पर जा पड़ी थी और अपने प्राण देकर उसने अपने अनुराग को प्रमाणित किया था; मृग को अपने प्राण इसके बाद गँवाने पड़े थे।

उत्तर में मालती ने उसे नृपति कुँवर कर्ण और पद्मावती की कथा सुनाई। नृपति कुंवर ने मन में ठान रक्खा था कि वह उसी स्त्री से प्रेम

करता जो स्वयं उससे प्रेम करने के लिये आगे बढ़ती, और अपने इस हठ की पूर्ति के लिये उसने एक एक करके साठ विवाह किए किंतु एक भी स्त्री ऐसी न निकली जो प्रथम मिलन के दिन स्वतः प्रणयानुरोध करती, इसलिये उसने उन सबको छोड़ रक्खा था। उसके रूप-गुण की प्रशंसा जब सोरठ की राजकन्या पद्मावती ने सुनी, वह उस पर अनुरक्त हो गई, और बहुत समझाने पर भी उसने अपना हठ न छोड़ा। विवाह हुआ, और प्रथम मिलन के दिन पद्मावती को भी उसी परीक्षा का सामना करना पड़ा जिसका पूर्ववर्ती साठ ने किया था। उसकी सखी चैनरेखा ने जब यह देखा, उसने छिपकर एक गुलाबभरी पिचकारी मारी, जिससे पद्मावती चौंक कर नृपति कुँवर के गले से लिपट गई। इसे उसने उसका प्रणयानुरोध समझा और तदनंतर दोनों जी भर कर मिले। मालती ने कहा कि मधु ने भी नृपति कुँवर जैसा हठ ठान रक्खा था। पुरुष को तो स्त्री के संकेत पर स्वतः आगे बढ़ना चाहिए किंतु वह उसके आग्रह पर भी उसके अनुरोध नहीं स्वीकार कर रहा था। मधु ने पुनः संबंध के वैषम्य का उल्लेख किया। मालती का आग्रह बना रहा, यह देख कर मधु ने नंद पुरोहित के यहाँ का पढ़ना छोड़ दिया।

मधु अब गुलेल लेकर विनोदार्थ रामसरोवर जाने लगा। किंतु वहाँ नगर की स्त्रियाँ पानी भरने के बहाने आने लगीं। मालती को भी उसके वहाँ जाने का समाचार मिला, और वह भी वहाँ आने लगी। उसे अब विश्वास हो गया था कि मधु को संबंध के लिये तैयार करना अकेले उसके बस की बात नहीं थी, अतः उसने अपनी एक चतुर सखी जैतमाल की सहायता इस विषय में चाही। वह मधु के पास पहुँची और मधुकर को व्यंग्य सुनाने के बहाने मधु को उसकी निष्ठुरता पर व्यंग्य करने लगी, और इसी प्रसंग में उसने उसे स्मरण कराया कि वे पूर्वभव में मधुकर और मालती थे, तथा वह स्वयं सेवती थी: मालती जब हिमपात से नष्ट होकर और तदनंतर वन में आग लगने से झुलस गई थी, मधुकर उसे छोड़कर चला गया था: सेवती की सेवा-शुश्रूषा से जब वह पुनः स्वस्थ हुई, तो मधुकर के विरह में उसने प्राण दे दिए। वे दोनों मधु और मालती के रूप में अवतरित हुए थे, और उन्हें अपने प्रेम को पुनः निभाना चाहिए था। मधु को अपने पूर्वभव का स्मरण हो आया, किंतु उसने संबंध-वैषम्य का उल्लेख करते हुए उसके अनुरोध को भी स्वीकार नहीं किया। यह देखकर उसने मालती को बुलवा

[illegible]

[illegible] करना ही था, उसने [illegible] और शंकर से प्रार्थना की। शंकर ने उसे आश्वासन दिया कि वे मधु की रक्षा करेंगे।

राजा ने पदातिकों को मधु के वध के लिए भेजा। मधु ने अपनी गुलेल से मार-मारकर उन्हें भगा दिया। दूसरी बार राजा ने एक सहस्र सवारों को भेजा। उन्होंने 'अनिदा' 'अनिदा' कहकर मधु को ललकारा। मधु ने उनकी भी वही गति कर डाली जो उसने पदातिकों की की थी। जैतमाल ने देखा कि मधु को अब और बड़ी सेना का सामना करना था, इसलिए उसने मधु-मालती से अपने भ्रमर-मालती-कुल का विस्तार करने की राय दी। यह बात मधु-मालती ने मान ली। फलतः वहाँ पर जो झाड़ियाँ थीं वे मालती की हो गईं और उनकी सुगंधि से मधुकर कुल वहाँ उमड़ पड़ा। इस बार राजा ने पाँच हजार की सेना भेजी। भ्रमर-कुल उससे ऐसा चिपक गया कि उससे भागते ही बना। अब राजा ने स्वतः युद्धक्षेत्र में जाने का निश्चय किया। उसने अपनी अश्व और गज-सेना को चमड़े से मढ़कर अपने साथ लिया। इस बार मधुकर कुछ अनिष्ट न कर पाए। मालती का धीरज जाता रहा। जैतमाल ने इस समय उसे बताया कि मधु काम एवं प्रद्युम्न का अवतार है; वह केशव

का स्मरण करे, तो वे प्रद्युम्न की रक्षा का उपाय अवश्य करेंगे। मालती ने ऐसा ही किया और केशव ने उसके रक्षार्थ दो भारंड पक्षियों को भेज दिया, जो बड़े ही विशालकाय थे। शिव-दुर्गा ने भी एक सिंह भेज दिया था। इनके सम्मिलित प्रहार से राजा की यह चर्म-सन्नाह मंडित सेना भी भाग निकली।

राजा ने अब अपने मंत्रियों को परामर्श के लिए बुलाया। उन्होंने उसे अपने प्रमुख मंत्री तारनसाह को बुलाकर इस उपद्रव को शान्त कराने के लिए राय दी। राजा ने तारनसाह को बुलाया। तारन को दुर्गा का वर प्राप्त था; उसने दुर्गा के सिंह को शान्त कर दिया और गरुड़ की दुहाई देकर भारंड पक्षियों को भी रोका। तारण की प्रार्थना सुनकर दुर्गा ने प्रकट होकर राजा को उसकी भूल बताई कि उसे मधु को बनिया मात्र नहीं समझना चाहिए था, मधु देवांश था, मनुष्य नहीं था। राजा ने अपनी भूल पर क्षमायाचना की और तदनंतर मालती तथा जैतमाल का मधु के साथ विवाह कर उसे अपना राज-पाट सौंप दिया और स्वयं वह गोकुलवास के लिए चला गया।

माधव शर्मा कृत संशोधन

मधु और मालती के विवाह तक माधव शर्मा कथा को लगभग ज्यों का त्यों रहने देते हैं, किंतु तदनंतर जब राजा अपनी रानी कनकमाल से उनके वध का निश्चय प्रकट करता है, और कनकमाल इसकी सूचना उन दोनों के पास भेज देती है, माधव शर्मा कथा का ढाँचा एकदम बदल देते हैं। उनके अनुसार कनकमाल का संदेश पाकर दोनों भाग निकलने के लिये तैयार होते हैं किन्तु जैसे ही नृपदल उन्हें मारने के लिये आ पहुँचता है, मधु तो घोड़े पर चढ़कर व्रज की दिशा में भाग निकलता है, जब कि मालती नृप-दल के द्वारा पकड़ कर राजा के पास लाई जाती है। राजा जब मधु के भाग निकलने की सूचना पाता है, वह उसके पिता तारनसाह को मारने की आज्ञा देता है। महाजन उसे समझाते हैं कि पुत्र के अपराध के लिये पिता को दंडित न करना चाहिए। इस पर राजा उसे छोड़ देता है।

रानी और राजा ने अब निश्चय करते हैं कि मालती का विवाह यथा-शीघ्र किसी से कर देना चाहिए। वे वर के विषय में मालती की भी इच्छा जानना चाहते हैं। मालती अपना निश्चय प्रकट करती है कि वह

मधु के अतिरिक्त किसी को वरण न करेगी। रानी समझाती है कि मधु वणिक है; किसी राजकुमार को उसे वरण करना चाहिए; किंतु मालती अपने निश्चय पर अटल रहती है। और लोग भी उसे समझाते हैं, किंतु कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। जैतमाल उन्हें बताती है कि मधु और मालती गंधर्व और गंधर्वी के अवतार हैं, और मालती के निश्चय को वे अटल मानें। वे जाकर राजा से यह सब बताते हैं। यह सुनकर राजा उसे विष देने का निश्चय करता है। रानी कहती है कि कन्या को मारना अच्छा न होगा; उसे कहीं महल में छिपाकर ही रक्खा जाए।

मधु इस बीच वहाँ से चलकर कुछ दिनों में मधुपुरी आ गया। मालती के विरह से वह बहुत दुःखित था। उसने विश्रान्त घाट पर स्नान कर केशव देव को जुहार किया। होली का उत्सव वहाँ उसने देखा। साधुओं के दर्शन किए, कीर्तन सुना। तदनंतर वसंत की ऋतु आई और उसने वृंदावन को भी देखा। कृष्ण-लीला के स्थानों को देखकर वह सुखी हुआ। वह दशम स्कंध भागवत की कथा सुनता। उसमें जब उसने राधा तथा कृष्ण के प्रेम की वार्त्ता सुनी, वह मालती का स्मरण करने लगा और मालती भी एक लता के पास पहुँची। रात हो गई थी, और वह वहीं रह गया। वह उसकी डालों से अंक भर कर मिला और बहुत सुखी हुआ।

इस प्रकार जब उसे वहाँ रहते एक मास हो गए, तो उसने हरि की वाणी सुनी कि वह अपने देश को लौट जाए। फिर वह वृंदावन से अत्यंत दुःखपूर्वक चल पड़ा। गोवर्धन आया, जहाँ उसने सात रात निवास किया। तदनंतर वहाँ से उसने अपने देश की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में जब वह एक पीपल के वृक्ष के नीचे शयन कर रहा था, गरुड़ ने अपने पुत्रों को, जो उस वृक्ष पर बसेरा लेते थे, बताया कि लीलावती देश के चंद्रसेन और कर्णनृप के बीच युद्ध हुआ, जिसमे चंद्रसेन मारा गया; उसकी तीन रानियाँ उसके शव के साथ सती हो गईं, केवल कनकमाल नहीं हुई; अब दीपावली के दिन आधी रात के व्यतीत होने पर मृत राजा के सेवक नगर के द्वारों पर बैठने को थे और जो भी सर्वप्रथम नगर मे प्रवेश करता, उसे नगर के लोग राजतिलक कर देते। यह सब जब मधुने सुना, वह दुःखित हुआ। उसे मालती की चिंता हुई कि वह जीवित थी अथवा नहीं। वह चल पड़ा और उपयुक्त समय पर लीलावती पहुँच गया। लोगों ने बिना उसको जाने हुए उसका तिलक कर दिया।

मालती ने जब मधु को देखा, उसे विश्वास हो गया कि यह उसका प्रेमी मधु ही था। जैतमाल से इसका निश्चय करने को उसने कहा। जैत उस महल में गई जहाँ मधु शयन कर रहा था। इसी समय वहाँ एक सर्प आ पहुँचा। जैत ने यंत्र के द्वारा उसे वश में करके मार डाला। प्रसुप्त मधु के मुख पर का कपड़ा हटाकर जब जैत ने उसे देखा, उसे विश्वास हो गया कि वह मधु ही था। मधु जागने पर जैत से मिला। जैत ने उससे मालती के विरह-दुःख का निवेदन किया। मधु ने भी अपनी व्रज-यात्रा का हाल सुनाया। तदनंतर जैत ने आकर मालती से बताया कि वह मधु ही था, और फिर दंपति मिले। तारनसाह को जब यह ज्ञात हुआ कि जिसको तिलक दिया गया था वह उसका पुत्र मधु था, वह भी उससे मिला। कनकमाल ने जब यह सुना, वह भी हर्षित हुई। उसने मधु और मालती का विधिवत् व्याह कराया। इसके अनंतर राजदंपति सुखपूर्वक रहने लगे।

अब मधु ने चंद्रसेन के मारनेवाले कर्ण को मारने का निश्चय किया। उसने कर्ण पर चढ़ाई कर दी और उसे परास्त करके मार डाला। कनकमाल ने जब यह सुना, उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने मधु की बहुतेरी वलैयाँ लीं।

मधु और मालती के दो पुत्र हुए: प्राणनाथ और प्राणपति। सौ वर्षों तक के उनके सुखभोग के अनंतर स्वर्ग से एक दिव्य विमान आया और वह मधु तथा मालती को स्वर्ग ले गया, जहाँ वे पहले भोग कर चुके थे।

दोनों कथाओं में एक अंतर यह है कि चतुर्भुजदास का नायक वीर और साहसी है: संकट आने पर डटकर उसका सामना करता है और उसके इस साहस के साथ उसकी विवाहिता मालती तथा उसकी सहेली जैत भी साहस दिखाती हैं; माधव शर्मा का नायक भगोड़ा है: सास का संदेश पाते ही वह भाग निकलता है, यहाँ तक कि अपनी विवाहिता पत्नी को भी छोड़कर भागने में कोई संकोच नहीं करता है। दूसरा अंतर यह है कि चतुर्भुजदास की कथा में राजा पराजित होकर अपनी कन्या का विवाह नायक के साथ कर देता है और उसे अपना राजपाट दे डालता है, जब कि माधव शर्मा की कथा में वह एक अन्य शत्रु के साथ हुए द्वंद्वयुद्ध में मारा जाता है और नायक को उसका राज्य केवल हरि-प्रेरणा से मिलता है जिसके अनंतर नायिका की माता उसका विवाह नायक के साथ कर देती

है। तीसरा अंतर यह है कि माधव की कृति में नायक अपने श्वसुर के शत्रु को युद्ध में मारकर श्वसुर के वध का प्रतिशोध लेता है। चौथा अंतर यह है कि उसमें नायक नायिका के सौ वर्षों तक राज्य कर लेने के अनंतर एक दिव्य विमान आता है जो दोनों को स्वर्ग ले जाता है। पाँचवाँ अंतर यह है कि चतुर्भुजदास का नायक काम और प्रद्युम्न का अवतार है जब कि माधव शर्मा का नायक एक गंधर्व मात्र है।

ऐसा ज्ञात होता है कि हरि-कृपा से सब कुछ संपन्न कराने की धुन में ही माधव शर्मा ने कथा में यह सब संशोधन कर डाला। चतुर्भुज दास की कथा अधिक युक्तियुक्त भी थी, अधिक पुरुषोचित तो थी ही: उसमें मधुकर मालती कुल के विस्तार द्वारा राजा की सेना को भगाने का जो प्रसंग आया है, वह उनके पूर्वभव से संबद्ध है, जिसका उल्लेख माधव शर्मा की भी कथा में नायक नायिका का गँठबंधन कराने के पूर्व जैत ने किया है। इसलिये किसी भी दृष्टि से माधव शर्मा का संशोधन कलापूर्ण नहीं कहा जा सकता है, युक्तिपूर्ण भी नहीं। इससे माधव शर्मा को लाभ इतना अवश्य हुआ कि वे मूल रचयिता के साथ रचना में भागीदार बन गए।

पाठ-संबंध और संपादन-सिद्धांत

'मधुमालती' की प्रतियों में कुछ निश्चित प्रक्षेप ऐसे हैं जो सभी प्रतियों में मिलते हैं, यथा—

निर्धारित ६२२ है :

> अकस्माच्च भवत्येव नालिकेल फलाम्बुवत् ।
> गजवेद्धगमस्येव गजभुक्त कपित्थवत् ॥

और निर्धारित ६२४ है :

> नालकेल फर नीरजह गज कथित्थ फल खाइ ।
> वह फल कत होय जल भरै वह फल कल कित जाइ ॥

ये क्रमशः मूल तथा भाषांतर के छंद हैं। रचना में जहाँ भी संस्कृत के श्लोक आए हैं, उनके भाषांतर के छंद भी आते हैं, और तुरंत बाद में आते हैं। यहाँ भी मूलतः दोनों साथ साथ आए होंगे; किंतु इस समय रचना की जितनी भी प्रतियाँ प्राप्त हैं, सबमें इनके बीच ११४ छंद अन्य हैं। (कुछ

प्रतियों में और भी अधिक हैं) जिनके न रहने से प्रसंग को कोई क्षति नहीं पहुँचती है, बल्कि जिनके रहने से ऊपर उद्धृत दोनों छंदों की संगति को व्याघात पहुँचता है। इसलिये यह भलीभाँति प्रकट है कि ये ११४ छंद बाद में रखे गए हैं और मूल रचयिता द्वारा नहीं रखे गए हैं।

इसी प्रकार निर्धारित ६२४ तथा ६२५ के बीच अड़तीस छंदों का (कुछ प्रतियों में और अधिक छंदों का) एक शीर्षक 'प्रस्ताव श्री रामचंद्र जी को' आता है। यह प्रस्ताव कथा का कोई अंश नहीं है, और किसके पूछने पर और किस उद्देश्य से लाया गया है, यह कुछ स्पष्ट नहीं है। रचना में जहाँ कहीं इस प्रकार की साक्षी कथाएँ आती हैं, उनके संबंध में पहले कोई वक्ता कहता है कि यथा अमुक प्रसंग में हुआ था; इस पर सुननेवाला व्यक्ति पूछता है कि उस प्रसंग को वह उसे सुनाए, और तब वक्ता प्रसंग को प्रस्तुत करता है। यह प्रस्ताव अथवा प्रसंग इसका स्पष्ट और एकमात्र अपवाद है। इस प्रस्ताव के रहने पर छंद ६२४ और ६२५ की संगति में व्याघात पहुँचता है और न रहने पर दोनों की पारस्परिक संगति स्पष्ट हो जाती है। ऐसी दशा में यह प्रस्ताव भी प्रक्षिप्त प्रमाणित होता है। यह प्रस्ताव रचना की समस्त प्राप्त प्रतियों में है।

इन दो प्रक्षेपों से प्रकट है कि रचना की जितनी भी प्रतियाँ इस समय प्राप्त हैं सब परस्पर संकीर्ण संबंध से संबंधित हैं। इसलिये रचना का संपादन एक बहुत ही उलझन की वस्तु बन जाती है, और इस बात की निश्चित आशंका हो जाती है कि जो अंश समस्त प्राप्त प्रतियों में समान रूप से मिलते हैं, कहीं उनमें भी कुछ प्रक्षिप्त न हों। भविष्य में यदि कोई ऐसी प्रतियाँ मिले जिसे ऊपर उल्लिखित प्रकार के प्रक्षेप न हो, तब कुछ अधिक निश्चयात्मकता के साथ रचना का पाठ निर्धारित हो सकता है।

इस प्रसंग में माधव शर्मा वाला पाठ भी विचारणीय है। उसमें निर्धारित पाठ के छंद ४८० तक का ही अंश चतुर्भुज दास की रचना के अनुसार है, शेष सर्वथा परिवर्तित है, और ऊपर उल्लिखित दोनों प्रक्षेप इसी परवर्ती अंश में आते हैं इसलिये यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता है कि उसमें जितना अंश चतुर्भुज दास की रचना से संकलित है, वह रचना की किसी सर्वथा स्वतंत्र शाखा के पाठ पर आधारित है। एक बात और इस संबंध में ज्ञातव्य है : माधव शर्मा ने जब निर्धारित छंद ४८० के बाद के अंश को

अपनी रुचि के अनुसार सर्वथा बदल डाला तो रचना के प्रारंभ से इस छंद तक के अंश को भी अपनी रुचि के अनुसार परिष्कृत कर सकते थे। फलतः निर्धारित ४८० छंदों के स्थान पर जो अंश उनमें केवल ३०४ छंदों में समाप्त हुआ है, उसके १७६ या अधिक छंद, जो नागपुर [illegible] वाले पाठ की प्रतियों में प्रायः समान रूप से आते हैं और माधव शर्मा के पाठ की प्रति में नहीं मिलते हैं, प्रामाणिक हैं अथवा प्रक्षिप्त, यह अनिर्णीत बना रह जाता है—अथवा कम से कम उनकी प्रामाणिकता के संबंध में कोई निर्णय माधव शर्मा के पाठ की प्रति की सहायता से नहीं किया जा सकता है। यहाँ इतना और बताया जा सकता है कि ये १७६ अथवा अधिक छंद प्रायः संगत हैं।

पुनः प्रथम वर्ग की समस्त प्रतियों में निर्धारित छंद २०६ तथा २२० के बीच के समस्त छंद छूटे हुए हैं। इन छंदों के न रहने से मधु और जैतमाल का एक उत्कृष्ट संवाद त्रुटित हो जाता है और २०६ तथा २२० की पारस्परिक संगति नहीं रह जाती है। इसी प्रकार की किन्तु कुछ छोटी भूलें और और भी हैं जो प्र० १, २, ३ तथा ४ में समान रूप से मिलती हैं। इसलिये ये चारों निश्चित रूप से परस्पर संकीर्ण संबंध से संबंधित हैं और एक संकीर्ण शाखा का ही निर्माण करती हैं।

प्रथम वर्ग से आगे बढ़ने पर ऐसे अनेक प्रक्षिप्त छंद मिलते हैं, जो प्रथम वर्ग की समस्त प्रतियों में नहीं पाए जाते हैं, फिर भी द्वि० १, तृ० १, तथा च० १ में पाए जाते हैं, इसी प्रकार द्वि० १ के अधिकतर अतिरिक्त छंद तृ० १ में और तृ० १ के अधिकतर अतिरिक्त छंद च० १ में पाए जाते हैं। ये अतिरिक्त छंद प्रक्षिप्त हैं। इन छंदों के प्रक्षिप्त होने का कारण यही नहीं है कि ये अन्य प्रतियों में नहीं मिलते हैं, वरन् यह भी है कि इनके कारण पूर्ववर्ती और परवर्ती छंदों की पारस्परिक संगति में प्रायः व्याघात पहुँचता है, और जहाँ नहीं भी पहुँचता है, इनके रहने से प्रसंग में किसी प्रकार सौंदर्य नहीं आता है। अतः इन छंदों में से उनको छोड़कर जिनके निकल जाने पर प्रसंग को स्पष्ट व्याघात पहुँचता है, शेष समस्त को प्रक्षिप्त मानना पड़ता है।

इन परिस्थितियों में कुछ परिणाम सुगमता से निकाले जा सकते हैं :

(१) द्वि० १, तृ० १, तथा च० १ मूल से उत्तरोत्तर प्रथम वर्ग की प्रतियों की अपेक्षा अधिकाधिक दूर पड़ती हैं।

(२) चारो वर्गों की प्रतियों में जहाँ तक परस्पर साम्य है, उसके संबंध में यह संभावना सबसे अधिक है कि वहाँ तक वह रचना के मूल पाठ के सबसे अधिक निकट है। किंतु इस अंश को भी आँख मूँदकर प्रामाणिक नहीं स्वीकार किया जा सकता है क्योंकि चारो वर्गों में परस्पर संकीर्ण संबंध प्रमाणित है।

(३) माधव शर्मा के पाठ के अंश जो चतुर्भुजदास वाले पाठ की प्रतियों में नहीं मिलते हैं, चतुर्भुदास के न होकर माधव शर्मा के होंगे, इसकी संभावना प्रकट है।

(४) माधव शर्मा के पाठ के वे अंश जो चतुर्भुज दास वाले पाठ की प्रतियों में भी प्रायः उसी प्रकार से मिलते हैं, यद्यपि निश्चित रूप से प्रामाणिक ही होंगे, ऐसा नहीं कहा जा सकता है, किंतु सं० १६०० के आस पास, जब माधव शर्मा ने रचना का संशोधन रूप प्रस्तुत किया होगा, वे रचना के किसी पाठ में अवश्य रहे होंगे और यह दृढ़ता के साथ कहा जा सकता है।

(५) चतुर्भुजदास वाले पाठ के वे अंश जो माधव शर्मा वाले पाठ के उस भाग में नहीं मिलते हैं जिसमें चतुर्भुजदास के पाठ को प्रायः स्वीकार किया गया है, हो सकता है कि चतुर्भुजदास वाले पाठ के मूलतः न रहे हो किंतु यह भी संभव है कि माधवशर्मा ने ही उन्हें निकाल दिया हो। इस प्रसंग में यह ज्ञातव्य है कि ऐसे अंश प्रायः संगत हैं, और आंतरिक अनुसंगति के आधार पर इन्हें मानना प्रायः संभव नहीं ज्ञात होता है।

ऐसी दशा में प्रकट है कि माधव शर्मा का पाठ हमारी सहायता संदिग्ध रूप में ही कर सकता है और हमें चतुर्भुज दास की रचना का पाठ निर्धारित करने के लिये उसी पाठ की प्रतियों का आश्रय ग्रहण करना पड़ता है। इन प्रतियों में प्रथम वर्ग की प्रतियाँ ही सबसे कम प्रक्षिप्त हैं और हम देखते हैं कि उनमें भी कुछ न कुछ छंद ऐसे हैं जो उस वर्ग की एक प्रति में हैं तो दूसरी में नहीं हैं। इनकी आंतरिक अनुसंगति पर पूर्ण रूप से ध्यान रखते हुए केवल उन्हीं को प्रामाणिक स्वीकार किया जा सकता है जिनके बिना प्रसंग सूत्र त्रुटित होता है और जो इस प्रकार रचना में अनिवार्य प्रमाणित होते हैं, अन्यथा उन्हें अप्रमाणिक मानकर सुगमता से छोड़ा जा सकता है। किंतु इस प्रकार समस्त प्रतियों में समान रूप से पाए

जानेवाले अंशों में भी दो बड़े अंश ऊपर प्रक्षिप्त प्रमाणित हो चुके हैं, इसलिये रचना की आंतरिक अनुसंगति को सतत् ध्यान में रखते हुए ही अंतिम निर्णय मूल पाठ के विषय में लिया जा सकता है।

कहना नहीं होगा कि इसी पद्धति पर प्रस्तुत संस्करण में पाठ-निर्धारण किया गया है, और रचना आदि से अंत तक ऐसे रूप में पुनर्निर्मित की जा सकी है जो किंप्राप्त समस्त पाठों की तुलना में मूल के अधिक निकट माना जा सकता है। आशा है कि भविष्य की खोजों से और भी अधिक निश्चयात्मकता के साथ प्रामाणिक पाठ प्रस्तुत किया जा सकेगा।

माताप्रसाद गुप्त

———

मधुमालती वार्ता की एक प्रमुख प्रति के अंतिम पृष्ठ का चित्र

मधुमालती वार्ता

(चोपई)

'वर विरंचि तनया'[1] वर पाऊं। 'संकर पूत गणपति मनाऊं'[2]।
चातुर 'हेत सहित[3]' रिझाऊं। 'सरस'[4] मालती मनोहर गाऊं ॥ १ ॥
लीलावती ललित एक देसा। चंद्रसेन 'जिहां'[1] सुघड़ नरेसा।
'सुभग धाम जिहां गगन'[2] पवेसा। मानु 'मंडप'[3] रचो महेसा ॥ २ ॥
'वसति पुर नगर'[1] जोजन च्यार। 'चोरासी चोहटा चौवार'[2]।
अति विचित्र 'दीसे'[3] नर नार। 'मानु तिलक भूम मंझार'[4] ॥ ३ ॥
'करहिं'[1] सेव नृप 'कुरी'[2] छत्रीस। चढै 'सहस'[3] दस नाये सीस।
'मैमंत कुंजर पारै चीस'[4]। चंद्रसेन 'नृप ईसन्ह ईस'[5] ॥ ४ ॥

---

[१] १. तृ० १ ब्रह्मबीज ब्राह्मण। २. प्र० ३ संकर सुत गणपति सिर नाऊँ। ३. प्र० ३ हित चातुर। ४. तृ० १ तो रचिक।

[२] १. प्र० ३ तहां। २. प्र० ३ सुभग धाम धज गगन, तृ० १ सुभग देव द्विज गग [न]। ३. प्र० ३ मांडल, तृ० १ नगर।

[३] १. प्र० ३ बसहि नयर पुर। २. प्र० ३ चोरासी चोहटा चिहुँ वार, वि० १ तिनके सुष को अंत न पार। ३. प्र० ३ वसे। ४. प्र० ३ नाइ तिलक भुवन मझार, द्वि० १ एक एकतें अधिक विचार।

[४] १. प्र० ३ करहे, प्र० १ करीहै। २. प्र० १ २ कुल। ३. प्र० ३ सेस। ४. तृ० १ होत असवार कंपत सेसा। ५. प्र० १ नरपन्ही नरेस, प्र० ३ नृप ईस··· ।

(दूहा सोरठा)

हय दल अंत न पार, कुंजर कारे मेघ जिम।
तुरि छत्रीस हजार, चढै साथि नृप चंद के ॥ ५ ॥

(चोपई)

मंत्री वुधि पराक्रम तांम। तारण साह तास को नाम।
निस दिन सेवा धरम सु काम। 'नृप'[१] न तजै घड़ी पल जांम ॥ ६ ॥
न्रप के ग्रह अंतेवर च्यार। संतति एक मालती कुमारि।
वरनूं काहा[१] रूप अपार। मानु 'उरवसी'[२] लियो अवतार ॥ ७ ॥
'उपमा कोण पटंतर कहुं'[१]। गुण 'अनेक'[२] छवि पार न लहुं।
दिन दिन रूप अनोपम चढै। 'ऐसी ओर नहीं विध'[३] 'घड़ै'[४] ॥ ८ ॥
गज कपोत हरि विंव 'प्रवाल'[१]। भ्रंगी मधुकर मीन मराल।
कदली कनक कीर पिक 'सोहै'[२]। 'ए'[३] सव 'तन को[४]' सोभा 'सोहै'[५] ॥ ९ ॥
जां 'देषै चित चलै'[१] महेसा। 'देखत धरणी डारै सेसा'[२]।
सूर भूलै 'जिय धरै अंदेसा'[३]। 'ससि भूलै डोलै मही देसा'[४] ॥१०॥
राज लोक वरणन 'कहा कहुं'[१]। थोरी सी मंत्री की लहुं।
'थोरी सांझ'[२] बोहोत सुष होई। अति लावण्य 'न राचो[३]' कोई ॥११॥
तारन साह सुघड 'गुनसार'[१]। त्रीया एक 'तसु'[२] एक 'कुंवार[३]'।
ताको नाम मनोहर धरो। मानुं काम दूजो अंवतरो ॥१२॥

---

[६] १. प्र० ३ नृप।

[७] १. प्र० १ में यहाँ 'आगू' और है। २. प्र० १ उरसी।

[८] १. प्र० ३ उपमां कोण पटंतर कहुं। २. प्र० ३ अनंत। ३. प्र० १ ऐसी अनन्ही वीधाता, तृ० १ ऐसी नहीं और विधाता। ४. प्र० ३ चढे।

[९] १. प्र० १ प्रकार। २. द्वि० १ सोई। ३. प्र० १ ई। ४. द्वि० १ फीकी। ५. द्वि० १ होई। तृ० १ में यह अर्द्धाली नहीं है।

[१०] १. द्वि० देखे तप टरै। २. तृ० १ मानूं धार सीस पर सेसा। ३. प्र० १ जिहां अधर अधेसा। ४. तृ० १ किंनर मनसा करै नरेसा।

[११] तृ० १ कित लहूँ। २. प्र० ३ थोरा मंझ, द्वि० १ थोरी कथा। ३. प्र० ३ राचे जन।

[१२] १. प्र० २ घनसार। २. प्र० १ सु। ३ प्र० ३ कुमार।

मधु मधु कहै र खिलावै 'तात'[१] । वाधै 'कला मानु' दिन रात[२] ।
घरी दिवस 'पख'[३] मासन और । ज्यु वसंत 'पिक'[४] 'चंद चकोर' ॥१३॥
भयो वरस द्वादस कै संध । 'देखत'[१] त्रिया 'होइ'[२] काम अंध ।
तन मन धन सुध 'विसरहि ग्रेह'[३] । अंगी भई मानु गति तेह ॥१४॥
'जित तित'[१] कुंवर करै कहुं 'सैल'[२] । ढोली लगी फिरै त्रीया गैल ।
कबहुंक राम सरोवर 'जाय'[३] । भ्रंगी जूथ मानुं चौंक भुलाय ॥१५॥

(दूहा)

राम सरोवर ताल की सोभा 'कही'[१] न जाय ।
सेत वरण पंकज तिहां 'मुनिवर'[२] रहै लोभाय ॥१६॥

(चोपई)

सोभा कोण राम सर 'कहै'[१] । वहुतक तिहां विहंगम रहै ।
'प्रफुलित'[२] कमल बास महमहै । वोपमा 'मान सरोवर'[३] लहै[४] ॥१७॥
अवला किती इक पानी भरै । चितवत 'कुंभ'[१] सीस तें[२] परै ।
'रीतै कलस हाथ तें'[३] 'गिरै'[४] । भूली 'मानुं'[५] विना 'म्रत'[६] मरै ॥१८॥
मालती 'एह वात'[१] सुन पाई । मधु देखन कुं मनसा धाई ।
'मनकी काहू कहं'[२] न 'सुनावै' । जैसे चात्रुक 'स्वाति'[४] कुं ध्यावै ॥१९॥

---

[१३] १. प्र० ३ मात । २. प्र० १ कांत कला निज गात, तृ० १ मानुं सकल दिन रात । ३. तृ० पल । ४. प्र० ३ दल, द्वि० १ दिन । ५. द्वि० १ व···।

[१४] १. प्र० १ देष । २. प्र० ३ होवे । ३. प्र० १ विसहर ग्रहै, प्र० ३ वसरी देह ।

[१५] १. प्र० १ जितन । २. प्र० १ सलै । ३. प्र० १ जाउ ।

[१६] १. प्र० १ वरणी । २. प्र० ३ मुनिजन ।

[१७] १. प्र० ३ लहे । २. प्र० १ प्रफुलत । ३. प्र० १ रामसरोवर, प्र० ३ कोण रामसर । ४. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है: तरु फूले देवल पर मरे । पंखी वहुत केलि वहु करै ।

[१८] १. प्र० ३ कलस । २. तृ० १ हाथ तें । ३. तृ० १ चितवत वदन सीस तें । ४. प्र० ३ परे । ५. प्र० ३ माननी । ६. प्र० ३ मृत ।

[१९] १. प्र० १ इहे वात, तृ० १ एह वचन । २. प्र० ३ मन की वात काहू को न । ३. प्र० १ सुनाउ । ४. प्र० ३ बुंद ।

जब नया मधु जनमे घर रहै। किती एक नारि ठिकाणो 'ग्रहै'[1]।
'तिन'[2] के सजन बंधु सब कहै। 'किती एक भली गुणी सब सहै'[3] ॥२०॥
ऐसे भये दिवस दस बीस। सुनी नाम मधु कीनी रीस।
'एह'[1] बात 'सुनिहै नृप ईस'[2]। कहा कुंवर नरवर कौ 'सीस'[3] ॥ २१ ॥
अब तो कहुं 'ग्रनत किन'[1] जावो। मेवा ले लरकन 'सुं'[2] न्यावो।
पंडित के दिग बैठे पढ़ो। 'गुपाल'[3] 'होइ कै गोवल चढो'[4]। २२ ॥

(श्लोक[1])

दो दो लोचन सर्वानां 'विद्यानं त्रिलोचनं'[2]।
सप्त लोचन धर्मानां ग्यानी अनंत लोचनं ॥ २३ ॥

दोय दोय लोचन पसु पंषी नर। तीजो लोचन 'विद्या को वर'[1]।
लोचन सपत 'ध्रमी को'[2] करं। ग्यानी लोचन गिगात न परं ॥ २४ ॥
नंद पिरोहित लीनो 'बोल'[1]। कुंढि महूरति 'जोतिक खोल'[2]।
ए जो कुमर पढ़ै दस बोल। 'देहुं कनक बराबर तोल'[3] ॥ २५ ॥
नंद पिरोहित लीनो सोध। मधु कुं विद्या देय प्रमोध।
जे जे अक्खर पंडित कहै। ते ते अक्खर कंठ ले ग्रहै ॥ २६ ॥
एक दिवस 'मंत्री कुं'[1] काज। क्रिपा दिस्टि करि पूछें राज।
'कुंवरी पढ़ावो जो कछु पढ़े'[2]। कित एक दिवस 'माहि द्रिस्टि'[3] चढ़ै[4]॥२७॥

---

[२०] १. प्र० १ गहै। २. प्र० २ उन। ३. तृ० १ भूलि त्रिया त्रिना मृत परे (तुल० १८.४)।

[२१] १. प्र० ३ एसी। २. प्र० १ सुनी नृप ग्रैसेइ, प्र० ३, तृ० १ सु गहे नृप तीस (ईस तृ० १)। ३.प्र० ३, तृ० १ तीस।

[२२] १. प्र० ३ अन जन। २. तृ० १ संग। ३. प्र० १ गवाल, तृ० १ जो वल। ४. तृ० १ तो घड़न सभ्यो।

[२३] १. प्र० ३ श्लोक। २. प्र० १ वद्या तीन लोचनं।

[२४] १. प्र० १ वद्य को वर, प्र० ३ दिद्या को पर। २. प्र० ३ धरम जिहां।

[२५] १. प्र० १ वाल। २. प्र० १ जोपै पोल। ३. प्र० १ मधू कु वद्या देय मोघ (तुल० बाद का छंद)।

[२७] १. प्र० ३ के। २. प्र० १, द्वि० १ कूवर पढावो सो कछु पढो (पढ्यो- द्वि० १) प्र० ३ कुंवरी पढावा जो कछु पढ़े। ३. प्र० १ द्रोस्ट मोही, प्र० ३ माहि वुधि।

मंत्री कहै राय अवधार। अति विचित्र पंडित इक सार।
बरस साठि पैसठि के 'अद्धि'[1]। चवदे विद्या जाणत 'सिद्ध'[2] ॥ २८ ॥
चंद्र सेन नृप इम उच्चरै। जो मालती पढ़वे की करै।
मीतर जाय वोहोर सुध लेहुं। तो मंत्री तुझ आएस देहुं ॥ २९ ॥

(दूहा)

कारी करम 'कपाल'[1] की विधना 'लपी सुभाय'[2]।
मधुमालती विलास को लागो होण उपाव ॥ ३० ॥

'गयो'[1] राइ अंतेवर 'तिहां'[2]। कनक माल राणी है 'जिहां'[3]।
राणी सुं पुछे 'करि'[4] भेव। पंडित एक महा दुज देव ॥ ३१ ॥
जो मालती पढ़वे की कहै। तो पंडित एह 'ठाहर'[1] रहै।
'अटक वरी द्वै दिन की सहै[2]। थोरो थोरो 'अक्खर'[3] लहै ॥ ३२ ॥
कुमरी कहै सुनो हो तात। मेरे 'एक'[1] 'विद्या सुं पांत'[2]
पंडित एक बुलावो प्रात। 'वेठी रहुं पढुं दिन रात'[3] ॥ ३३ ॥
'देषि वदन'[1] मालती विसाल। मन मैं 'सांक भई भूपाल'[2]।
कन्या वर प्रापती कुं भई। 'आज कालि चिन (चीन) उपजे'[3] नई॥३४॥
ऐसी मन मैं चिंता करै। फुनि विचार कछु औरी धरै।
पढवे कारण वेलंबी रहै। तो लुं वर ढुंढुं नृप कहै ॥ ३५ ॥

---

[२८] १. प्र० ३ अद्ध। २. प्र० ३ सुद्धं।
[३०] १. प्र० ३ कपाट। २. प्र० १ लष्यो समान।
[३१] १. प्र० ३ गए। २. प्र० ३ जहां। ३. प्र० ३ तिहां। ४. प्र० ३ तित।
[३२] १. प्र० ३ ठोरह। २. प्र० १ अटक घरी देव घन चहै, प्र० ३ पट परेच वांधुं नृप कहै। ३. द्वि० १ अच्छर।
[३३] १. द्वि० १ मन। २. प्र० १ वद्य सू पात, प्र० ३ विद्या सुं ष्यात। ३. प्र० ३ वेटी पढुं दिवस ने रात।
[३४] १. प्र० ३ देषी नृप। २. प्र० १ संक्य थई भुपाल। ३. प्र० १. काज काज चीन उपजे न्ही।

पट परेच 'बांधु'¹ अर कहै। भीतर कुंवरि मालवी रहै।
पंडित दिग 'मंत्री को बाल'² । 'बैठो रहै पढ़ै चटसाल'³ ॥३६॥
'मंत्री'¹ कुंवर नाम जब कह्यो। सुनत मालती 'हिय लच'² भयो।
जाके मन 'मिलबे'² की हौंस। मनसा को दाता जग ईस ॥३७॥

(श्लोक)

गिरौ कलापी गगने च मेघा 'लक्षांतरे'¹ भानु जले च पद्मः।
द्विलक्ष सोमो 'कुमुदोत्पलांच'² यो यस्य प्रीति न कदाच दूरं ॥३८॥

कपट वचन बोले एक राई। पंडित दरसन न देषो जाई।
त्रिया होय करि निरषै 'जेह'¹। सेत वरण हो ताकी 'देह'² ॥३९॥
मंत्री सुत एक 'अच्छे'¹ आइ। निस दिन वैठि 'पढै है'² ताहि।
पंडित भलो 'अलच्छन'³ 'एह'⁴। ताते मन उपनो संदेह ॥४०॥
जो 'मनसा'¹ पढ़वे की 'कहे'²। तो पट परेच की 'ऊझल रहै'³।
बाहर तैं गुरु अक्खर 'कहै'⁴। 'अस सुमती'⁵ विद्या तुम लहै ॥ ४१ ॥
मालती चतुर विचष्पन अंग। बूझै सकल वात को रंग।
'नृप सुं'¹ उत्तर जंपै जास। मेरे एक विद्या सुं काम ॥ ४२ ॥
पट परेच 'बांधो'¹ गह च्यारि। मुख 'देषां'² को कोण विचार।
'अक्खर वचन पुकारी कहै'³। पंडित मन माने 'जिहां रहै'⁴ ॥ ४३ ॥

---

[३६] १. प्र० १ वांधो। २. प्र० १ मीश्र को वोल, प्र ३. मंत्री सुत रहे। ३. प्र० ३ एसी विद्या विघत्तम लहे।

[३७] १. प्र० १ मित्री। २. प्र० ३ जोव सुष। ३. प्र० १ मीलैवे, प्र० ३ मलवा।

[३८] १. प्र० १ नषतरे। २. प्र० १ कूमोदइ पनाल।

[३९] १. प्र० १ जेम। २. प्र० १ देही।

[४०] १. प्र० १ अघौ (<अछौ)। २. प्र० १ वेठो पढावे। ३. प्र० १ ए लछन। ४. प्र० ३ देह।

[४१] १. प्र० ३ मनछा। २. प्र० ३ कहो। ३. प्र० १ नूंझल रहै, प्र० ३ ओज···। ३. प्र० ३ देहो। ५. प्र० ३ एसी विद्ध।

[४२] १. प्र० ३ नृप कुं।

[४३] १. प्र० १ वाघी। २. प्र० ३ देषे। ३. प्र० २ अछर वंच पुकारे कहो। ४. प्र० ३ तिहां रहो।

मालती वचन 'सुनत सच'[1] पायो। तव ही पंडित वेग वलायो।
पट परेच की 'ऊझल रहै [इ]'[2]। पढवे कुं पाटी लिख देइ ॥ ४४ ॥

उं नमः सिद्धं प्रथम पढाई। फुनि 'कक्का दोउ कक्काई'[1]।
'वाचन'[2] अक्खिर अक्खिर चीने। वारे खरी बोहोरि लिख दीने ॥४५॥

'चाणायक'[1] व्याकरण समेत। सारस्सुत को 'सवलो'[2] हेत।
अमर'कोस'[3] पिंगल 'लीलावति'[4]। [5]जे करि कमल दियो सरसती ॥४६॥

पडित अच्छिर जे जे कहै। सुनत मालती सब सिख लहै।
नावां वाचै 'आगम'[1] 'चढ़ी'[2]। मानुं उदर मांझ ते 'पढ़ी'[3] ॥४७॥

मंत्री सुत कछु अधिक पढ़ै। सुनत मालती 'चुंप जीय'[1] वढ़ै।
निमप एक 'बोलती अम लाइ'[2]। 'दोऊ'[3] 'सरस'[4] न बरने जाय ॥४८॥

[1]पट परेच की ऊझल रहै। वचन ववेक 'परस्पर'[2] कहै।
मधु मालती दोउ परवीण। दोऊ सरस न कोऊ हीण ॥४९॥

[1]एक दिवस गुरु आरन गयो। मन मैं 'गूझ'[2] मालती ठयो।
पट परेच सुं दीने नैन। निरपै मधु 'मानु'[3] पूरन मैन ॥५०॥

---

[४४] १. तृ० १ नूप शुद्ध। १. प्र० १ नूझल रहै, प्र० २ ओजल दइ। तृ० १ छंद २२ के अनंतर यहाँ तक त्रुटित है।

[४५] १. प्र० १ कक्को दुक्को वढ़ाई, तृ० १ कका दो कांना लाये। २. प्र० ३ वाँन्चि के, तृ० १ सबही।

[४६] १. प्र० १ चरणाएक। २. प्र० १ संग्रह। ३. प्र० १ कोक। ४. प्र० १ सरसती, तृ० १ समेता। ५. तृ० १ में यहाँ ४६-२ दुहराया हुआ है।

[४७] १. तृ० १ अंग उधम। २. प्र० ३ कढी।

[४८] १. प्र० १ चुपक जिय, तृ० १ चौस जत्र। २. तृ० १ मेलियो मेलाय। ३. प्र० १, २ कोउ। ४. तृ० १ सरमर।

[४९] १. तृ० १ में छद छूटा हुआ है। २. प्र० ३ परसरै।

[५०] १. तृ० १ में छंद की प्रथम अर्द्धाली छूटी हुई है। २. प्र० १ गूज। ३. प्र० १ में यह शब्द नहीं है।

(दूहा सोरठा)

भई बिरह 'वर वार'[1] मधुमूरति 'निरखी जिहीं'[2] ।
मानु 'तीर संभार गिरै मीन'[3] 'ज्युं'[4] मालती ॥ ५१ ॥

(चौपई)

पट परेच चोरी नहि फारी । 'कर ग्रहि गेंद फूल सुं'[1] मारी ।
मधु 'चिंत अरु ऊंचो देषै'[2] । मालति वदन 'कलानिधि पेषै'[3] ॥५२॥

(दूहा)

'चितवत है'[1] चिहुं नैन, मधु बान उरउर रहे ।
प्रगटो पूरन मैन, प्रीत हेत मधु मालती ॥ ५३ ॥

मधु 'जियमन(सयन)सकुच'[1] मन 'धारी'[2] । नीची द्रिस्टि दे धरणी मारी[3] ।
मानु 'सिर ढोलै कुंभ सहस जल'[4] । लज्जा 'भई'[5] प्राण 'तैं परवल'[6] ॥५४॥
मालति फिर 'वपु'आप'संभारै'[2] । 'दूजी गेंद फूल'[3] की मारै ।
वदन दुराय रह्यौ 'कहो कैसे'[4] । 'निरपि'[5] वदन 'बोलै फुनि'[6] ऐसे ॥५५॥
फल अपूरब देषे द्रिग जैसे । तलब रहे विनु 'पाए'[1] कैसे ।
'मीठो कड़वो जानिए कैसे । आरत भूष जानिये ऐसे'[2] ॥५६॥

---

[५१] १. प्र० ३ तिह वार । २. प्र० १ नीरखे नाह । ३. तृ० १ मीन के जाल गिरी मुरछि । ४. प्र० १ जू, तृ० १ जव ।

[५२] १. प्र० १ कर ग्रहि गेद फूलसं, प्र० ३ कर ग्रहि गेंद फूल की, तृ० १ पुष्प गेंद मधुकर कूं । २. प्र० ३ ऊँचो चित ओर ही पेष । ३. प्र० कलानीती प्र० ३ कलानिधि देष ।

[५३] १. प्र० १ चित हूत ।

[५४] १. प्र० ३ जीय में सकोस । २. तृ० १ धरि है । ३. प्र० ३ धारी तृ० १ करि है । ४. प्र० ३ कुंभ ढले सर जल, तृ० १ शिर कुंभ सहसु कर धारे । ५. प्र० ३ भ··· । ६. तृ० १ तन मारै है ।

[५५] १. प्र० १ वोहु । २. प्र० ३ संभारी । ३. प्र० १ दूज फूल गयंद । ४. तृ० १ तन तरसे । ५. प्र० ३ निरखो । ६. प्र० ३ बोल··· ।

[५६] १. प्र० ३ षाए । २. प्र० ३ आरतवंत जानीये तेसे, मन की त्रपत बुज कहो केसे, तृ० १ फुनि मेठो कड़यो कुन जाने, विन षाये कहो कहा वषानै ।

'इंद्रायण'[1] फल सुंदर होय। खावे कूं 'इच्छै नहीं'[2] कोइ।
बिन बूझै सो चाखै कोई। 'सुवटा सेंवल सी गति होई'[3] ॥५७॥

(सोरठा दूहा)

सुवटा सेंवर देष मालुं 'अंब ते सुभर फ५ि'[1]।
फुनि 'पाका ते पेषि'[2] 'देह' पींजरा लों भई ॥ ५८ ॥

(कुंडलिया[1])

स्यानपनो तो सबही गयो सेयो बिरछ अकाज।
सेयो बिरछ अकाज काज 'एको नहीं'[2] आयो।
रातो पोहोप देपे सूवो सेंवल बिलमायो[3] ॥५९॥
चंच ठकोरै सिर धुणे 'रूई'[1] चिहुं दिसि जाय।
'ज्यो जैसा को संग'[2] करै 'त्यो'[3] तैसा फल खाय ॥ ६०॥

पंडित 'बपरो'[1] एक न बूझै। चातुर दोउ परसपर भूझै।
न कोउ जीतै न कोउ हारे। वचन 'बफेरा'[2] 'चूछिम'[3] डारे ॥६१॥

(मालती वाक्य)

भरे सरोवर के ढिग प्यासे। फले 'बिरिछ'[1] तल रहे उपासे।
कैसे ताम 'स्यानपन'[2] कहियै। फुनि ताको उत्तर 'कहा'[3] लहियै ॥६२॥

(मधु० वाक्य)

फल की भूख न 'जल के प्यासे'[1]। सैन मैन ते 'मैं फिरूं उदासे'[2]।
मेरे वचन जोय चित दीजे। 'आगै ताकी गल (गल्ल)'[3] न कीजे ॥६३॥

---

[५७] १. प्र० १ चंद्रायख। २. प्र० १ अंछे न्ही। ३. प्र० १ तीही सुवटा सवर देषी।

[५८] १. प्र० १ आव सुभर फूनी फलो। २. प्र० ३ पाके ते देष। ३. प्र० १ देही।

[५९] १. प्र० १ सोरठा, प्र० २ चंद्रायणो। २. प्र० ३ एक ही नहुं। ३. तृ० में यह छंद नहीं है।

[६०] १. प्र० १ रोये। २. प्र० ३ जो जाकी संगत। ३. प्र० ३ तो।

[६१] १. तृ० १ सवेरो। २. प्र० ३ पवेरा। ३. प्र० ३ सुषम।

[६२] १. प्र० ३ वृष्य। २. तृ० १ सयानो। ३. प्र० ३ तो।

[६३] १. प्र० ३ जल की प्यास। २. प्र० ३ के रहुं उदास। ३. प्र० ३ मागी ताकी गेल।

मधु 'अपनी सी बहुते धारे'[1] । मालती हृद 'मनसा नहीं हारे'[2] ।
'जैसे मनसा भरै'[3] ससि 'संधे'[4] । पुनि चकोर जैसे रस 'बंधे'[5] ॥ ६४॥

(दूहा सोरठा)

बढै 'सकेत'[1] सनेह म्रिग सीधन जैसे भई ।
मधु जंपै गति तेह समझ देखि 'हो'[2] मालती ॥६५॥

[अथ म्रिग सीधनी को प्रसंग]

(चोपई)

मालती मधु कुं 'बूझि सुनावे'[1] । म्रिग सीधन की 'सोहि बतावे'[2] ।
कैसे भई सोइ सुनि लीजे । तो फुनि ताको उत्तर दीजे ॥६६॥
मधु जंपै हूं 'कितेक गाऊँ'[1] । जो बूझै तो 'तनके'[2] सुनाऊँ ।
म्रिग एक आहि काम को मातो । 'म्रिगनी जूथ'[3] 'फिरे रस रातो'[4] ॥६७॥
लीला तिरिय चरे दिन सारो । अति सहमंत 'गहो'[1] जीव नारो ।
नव दस म्रिगनी आही तस (तिस) नारी ।
तामैं हो कारो सिरदारो (सिरदारी) ॥६८॥
सीधन द्रस्ट पर्यो 'वो'[1] हरणा । प्रगटो काम लगो 'तिहां'[2] झरणा ।
म्रिग ईछे मन प्रीतम करणा । 'चलियो वो ठोहर (हरवे)'[3] चरणा ॥६९॥
म्रिग 'केहर की त्रीया जब पाई'[1] । तजी 'देह कहो'[2] चलो पुलाई ।
वेग ही सींधन आड़ी आई । थिर रहो मिरग भाजि'मति'[3]जाई ॥७०॥

---

[६४] १. प्र० १ अपनी सवहुत धारी, प्र० ३ अपने सर बहुंते टारे। २. प्र० ३ मन मे नही धारे। ३. प्र० १ जेम धुरै। ४. प्र० १ संध। ५. प्र० १ वंध।

[६५] १. प्र० ३ सगत । २. प्र० ३ जीव ।

[६६] १. प्र० ३ सवद सुनावै, तृ० १ पूंछै ऐसी । २ तृ० १ भई कैसी ।

[६७] १. प्र० १ कीतेक सुनाउ, प्र० ३ कितीयक गाउ । २. प्र० ३ नेक । ३ प्र० १ म्रग जूथ माझ।

[६८] १. प्र० ३ गहे ।

[६९] १. प्र० ३ जब । २. प्र० ३ तन । ३. प्र० ३ चल हो ठोर हरे हरी ।

[७०] १. प्र० १ केहरी तीर जब आई । २. प्र० दे कांन । ३. प्र० ३ दिन ।

तेरे जीय की रष्या करिहुं । मनसा वाचा 'दै'[1] चित धरिहुं ।
एह 'मैं सत्या करि'[2] भाषी । याको पवन सूर है साषी ॥७१॥
जो तेरो जीय ठाहर राषै । 'फुनि फुनि'[1] बचन सीघनी भाषै ।
मेरे 'तन'[2] की 'पीर सुनाऊं'[3] । जो तौ एक 'निह्चो'[4] पाऊँ ॥७२॥
मेरे तन कुं विरह संतावै । जो तुं मेरी पीड़ बुझावै ।
हुं 'तो पै एह'[1] जाचन आई । 'मेरो प्रीतम होइ सहाई'[2] ॥७३॥
तो 'सुं'[1] प्रीतम जो हुं 'पैहूं'[2] । क्रीड़त 'तोहे'[3] वोहोत सुप दैहूं[4] ।
म्रिगनी 'ते'[5] मो पे सुख पैहो । याको प्रीत परेखो लेहो[6] ॥७४॥
सुन सींवन बोलै अग कारो । हम तो आहिं 'तिहारो'[1] चारो ।
मोहि तेरो 'बिसवास'[2] न आवै । कपट रूप 'तु कित ढिग आवै'[3] ॥७५॥
तु मेरे मारिग कुं न जाई । मो कुं 'छलन हेत किति'[1] आई ।
कुंजर 'बिना न सीह'[2] संहारै । मिरग कुं तो 'बिसवास करि'[3] मारै ॥७६॥
पूरब विरोध जास सुं होई । ताकी बात न माने कोई ।
अैसे 'नो'[1] रे पतीजै 'लोई'[2] । 'घूहड काग भई'[3] सो होई ॥७७॥

(श्लोक)

परस्परं विरोधानां शत्रुमित्रं गृहे गाता ।
दग्धं काग उलूकानां 'प्रज्वलंती'[1] हुताशनं[2] ॥७८॥

---

[७१] १. प्र० ३ के । २. प्र० ३ जके मुष साची ।
[७२] १. प्र० ३ फरफर । २. प्र० २ मन । ३. तृ० तपन बुझाऊं । ४. प्र० ३ नेह्चो ।
[७३] १. प्र० ३ तो तुमपे । २. प्र० ३ तु मेरे प्रीतम होत सषाई ।
[७४] १. प्र० १ मो । २. तृ० १ पाऊ । ३. प्र० १ तो । ४. तृ० १ में चरणका पाठ है; तो तुझ प्रीतम बहुत रिझाऊं । ५. प्र० ३ पे । ६. तृ० में अर्द्धाली का पाठ है : मेरी प्रीत परेषो लीजे । कंद्रप होत काम रस पीजे ।
[७५] १. प्र० ३ तुमारो । २. प्र० ३ विसास । ३. तृ० १ कित मोहि भजावै ।
[७६] १. प्र० ३ पुछ्ण कित ढिग । २. प्र० १ वना सीही न, प्र० ३ वन सिंघन । ३. प्र० ३ बिस
[७७] १. प्र० ३ जे । २. प्र० ३ कोइ । ३ प्र० १ घूहर काम भये ।
[७८] १. प्र० १ प्रभा जलंती । २. प्र० ४ यह छंद नहीं है, द्वि० १ में यह छंद बाद में आया है और तृ० १, २ में इसके स्थान पर तथा च० १ में

[अथ घूहड़ काग प्रसंग]

(चौपई)

सींधनी म्रग कूं बूझै ग्रैसी। घूहड़ काग भई सो कैसी।
'कैसे करि'[1] उन वायस मारे। 'वे उनै'[2] गुफा माझि'करि'[3] जारे॥७६॥

'म्रग जंपै सुनि सींवनि बानी। जो बूझै तो कहूं कहानी'[1]।
पंछी जूथ मिले सब ग्रानी। घूहड़ राज देण कुं ठाणी॥८०॥

तो लुं काग 'कहां सुं'[1] ग्राये। पंछी 'किते एक एकंत'[2] बुलाये।
समाचार 'उन के जव'[3] पाये। 'तब'[4]कागन ग्रंगुरी मुख 'नाए'[5]॥८१॥

'ऐसी कूर'[1] बूधि तुम करिहो। 'पंछी'[2] सबे ग्रखूटे मरिहो।
राजा गरुड कुं तुम नही जानो। ता ऊपर पें घूहड ठाणो॥८२॥

ताकें 'बल को कोउ मत जपें'[1]। तीन लोक जाके डर कंपे।
पच्छी पवन 'सेस पण सलकें'[2]। जाकें 'पायन'[3] वसुधा[4] 'धरकें'[5]॥८३॥

'महा सूर न सु कोई पूरें'[1]। चरण 'पेलि परवत सिल'[2] चूरैं।
टीटोरी के इंड जे कहिये। सायर 'ग्रंचि रह्यो'[3] छन महिये॥८४॥

इसके अतिरिक्त है : न विश्वासो पूर्वविरोधे शत्रुमित्रकदाचन। दुखदाई गउदालक काकस्य पलयं गता।

[७६] १. प्र० ३ केसी विध। २. प्र० ३ वे गुन। ३. प्र० ३ क्युं।

[८०] १. तृ० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : मृग जपे हूं केति कह गाऊं। जो वूजे तो तनक सुनाऊं।

[८१] १. प्र० ३ कहा ते। २. प्र० ३ सब एकंत। ३. तृ० उनपै सब। ४. प्र० ३ जब। ५. प्र० ३ लाये।

[८२] १. प्र० १ ऐसे कूर, प्र० ३ एसी कुंड। २. प्र० ३ पीछे।

[८३] १. प्र० १ वलै कोउ न मत जंपै, प्र० ३ बलको रमत न कंपे। २. प्र० १ सीस पण सीलकै। ३. प्र० ३ माथे। ४. प्र० ३ ढरके। ५. तृ० १ में चरण का पाठ है : जिनके वसुधा मसे थरके।

[८४] १. प्र० ३ महासूर सो कोउ सुरे, तृ० १ महा पुरुष सूं कोइ न पूरै। २. प्र० १ ऐ परवत। ३. प्र० ३ ऐचि रह्यो, तृ० १ अवसन कियो।

ऐसी बात काग जब भाषी। पंछी जीव भये सब साखी[1]।
को समरथ जो विग्रह करिहै। घूहड राज साज कित करिहै ॥८५॥

(दूहा)

वाइस मतो 'मिटाइ'[1] के पंछी 'चले मिलाइ'[2]।
घूहड अपने जूथ सुं, 'रहे वेसि एक ठाइं'[3] ॥८६॥

घूहड नाम अरि मरदन 'आही'[1]। उन अपनी सब 'सभा बुलाई'[2]।
एक 'जूथ सब'[3] बैठो आनी। उन सुं बोलण 'लागा'[4] वाणी ॥८७॥
मेघ वरन 'काग यहां'[1] आयो। उन मेरो सब राज गमायो।
पंछिन काज 'दई'[2] बुधि राइ। वे मेरो रिपु पूरन आइ ॥८८॥
सगरे काग जाइ के मारो। पीछे काज आपनो सारो॥
मेघ वरन कूं 'जीवत'[1] धरियो। कै सबै 'मारी'[2] कै सबै मरियो ॥८९॥
चली सेन 'जिहां'[1] काग बसेरो। रूंध्यो व्रच्छ 'परयो'[2] तिहां घेरो।
निस अंधिआरी वायस भूले। घूहड 'जिहां तिहां थे[3] 'फूले'[4] ॥९०॥
काग हजार च्यार तिहां मारे। भागे 'और'[1] झूझु ते हारे।
मेघ वरन उही 'ठोहर छंडे'[2]। फुनि एक विरछ 'आय ते मंडे[3]' ॥९१॥
सबै मिले जिहां बोलि पठाये। मिलि सगरे 'उन ठाहर'[1] आये।
बोलहु कौन 'मंत्र'[2] अब कीजे। दिवस च्यार इहिं ठोहर 'रहीजे'[3] ॥९२॥

---

[८५] १. तृ० १ में अर्द्धाली का पाठ है : ऐसी बात काग जब होइ। सब पछि सुवन सुनि रहाइ।

[८६] १. तृ० १ विडार। २. तृ० १ भए उडान। ३. प्र० ३ रहै बैठो एक ठाइं, तृ० १ मिलै अपूटे आनि।

[८७] १. प्र० १ आये। २. प्र० १ सभा मिलाए, तृ० १ सैन बुलाई। ३. प्र० ३ वोर जुथ। ४. प्र० ३ लागो।

[८८] १. प्र० ३ इह ठोहर। २. प्र० १ भई।

[८९] १. प्र० १ जाथन। २. प्र० ३ मारो।

[९०] १. प्र० ३ तहां। २. प्र० ३ पड्यो। ३. प्र० ३ ते। ४. तृ० १ भूलै।

[९१] १. प्र० कितेक। २. प्र० ३ ठोरह छांडी। ३. प्र० ३ जाय के मंडी।

[९२] १. प्र० ३ वा ठोरह। २. प्र० १ मीत्र। ३. प्र० १ दीजे।

अरि मरदन सुं बाइस कहै। मेघ बरन सेवा कुं रहै।
देउ ठोर जिहां मंदर सझे। निस दिन द्वारे नोपति बजे[1] ॥१००॥

काग कह्यो सो घूहड़ कीनू। 'जो'[1] मांगो' सो पहली दीनो।
मंदिर 'मिस'[2] काठ 'आने'[3] ढोई। 'जीय'[4] परपंच न जानै कोई ॥१०१॥

पूरो ढिग काठन को कीनो। गुफा मूँदि करि पावक दीनो।
घूहड अंधे दिवस न सूझै। गुफा 'माँझि'[1] जरिबरि कै बूझे ॥१०२॥

'मरत सरलोक'[1] कह्यो उन अैसो। पूरब विरोध 'नेह' तिहाँ कैसो।
'तेरी'[3] मोहि परतीति न आवै। कपट रूप तू किति ढिग आवै ॥१०३॥

सीवनि मृग सुं बोलै बानी। तै तो मोहि काग करि जांनी।
अैसी बुद्धि आहि ते (तो) बौरे। जैसे दुद्ध 'छास के (किए)[1] धोरे ॥१०४॥

काग सीप क्युं सरभर होइ। उत्तम मध्यम बूझे लोइ।
जो र बकायण बहु फल फलि है। तो सरभर कहा दाख की करिहै ॥१०५॥

कूपमांडि एक लता कहावै। ताहि 'चचंडा' सरभर 'क्युं'[2] आवै।
वै पत्थर 'बांध्या'[3] पति पावै। वै फल चीने पिराण गमावै[4] ॥१०६॥

सुन म्रिग वचन 'बड़ुं के'[1] अैसे। धू 'वत'[2] अटल 'जानिये' तेसे[4]।
हुं तोसुं पहली ही 'हारी'। वचन टलै तो कुल कुं गारी ॥१०७॥

---

[१००] १. तृ० १ में अर्द्धाली का पाठ है : दियो ठोर सेवा मैं रहूँ। सदा काल एह द्वारे रहूँ।

[१०१] १. प्र० १ सो। २. १ मिंदर मिस, प्र० मंदर मांझ। ३. प्र० १ अत।
[१०२] १. प्र० १ मांहि।
[१०३] १. तृ १. मरतां वचन। २. प्र० ३ सनेह। ३. प्र० ३ वें से।
[१०४–१०५] प्र० १, २ मे ये दो छंद नहीं हैं, किन्तु इनके विना प्रसंग क्रम त्रुटित होता है।

[१०४] १. तृ० १ आसव दोउ।
[१०६] १. प्र० ३ चचींडा। २. प्र० १ कुं, प्र० ३ में नहीं है। ३. प्र० ३ बांधे। ४. तृ० १ में यह अर्द्धाली छूटी हुई है।
[१०७] १. प्र० १ बूझ कै। २. प्र० ३ ज्युं। ३. प्र० १ जांण कै। ४. तृ० १ में यह अर्द्धाली छूटी हुई है। ५. प्र० १ हारे।

(श्लोक)

कुलीन कुलिना 'ममता' [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ॥१०८॥

ज्यूं ढोर चोर 'जहाँ घरे'[1] । सो पुनि मार्यो जिहाँ[2] मरे ।
उनके जीव ऐसी [illegible] हुति । कहि [illegible] 'दूत कि'[3] वाके[4] ॥१०९॥

(दोहा)

धन 'घटे'[1] सुत 'बुधि नहीं'[2] दादा 'कहत सीताय'[3] ।

सुनि हो मित्र तू 'तौ'[4] वचन नाहुं मांव न जाय ॥११०॥

जे पसु भूख पेत नहीं छुंडे । सींघ चरन श्याम के मंडे ।
'ऐसी'[1] होय तो ताहि न मारे । 'अद्र आति नक गिरि सें टारे'[2] ॥१११॥
भागो जाइ ताहि जो गहिये । तो पुनि जीव नाम किम 'लहिये'[1] ।
भागो जात देखि 'जो'[2] गर्जे[3] । ऐसे करम करत कुल लज्जै ॥११२॥

(श्लोक)

असारस्य 'संसारस्य'[1] वाचा सारस्य देहिना ।

वाचा विचलता 'येन'[2] सुकृतं तेन हारितं ॥११३॥

(चौपई)

'वाचा बंध'[1] 'सार करि गहिये'[2] । झूठे वचन स्वारथ कुं कहिये ।
झूठे वचन सो ही नर 'कहे'[3] । 'जो'[4] अपने स्वारथ कुं चहे[5] ॥[6]११४॥

---

[१०८] १. प्र० ४ मे यह छंद नहीं है ।

[१०९] १. प्र० १ नहीं घेरे, प्र० ३ जिहां घरे । २. प्र० १ देष ही । ३. प्र० १ छारा कै । ४. प्र० ४ में यह छंद नहीं है ।

[११०] १. प्र० १ घाटे, तृ० १ छंडै । २. तृ० १ त्रण चरे । ३. प्र० ३ कहे तो जाय । ४. प्र० ३ मुझ ।

[१११] १. प्र० ३ एसे । २. तृ० १ भागेलू कूं सिंघ न मारे ।

[११२] १. प्र० १ कही । २. प्र० ३ के । ३. तृ० १ में चरण का पाठ है : ओर गरजत सुनी फुनि गरजे ।

[११३] १. प्र० ३ सरीरस्य । २. प्र० १ डोहौ ।

[११४] १. प्र० १ चरचा वंधें, तृ० १ जे नर वाचा । २. तृ० १ सारहि गनिये । ३. प्र० ३ कहीइं । ४. प्र० १, ३ सो । ५. प्र० ३ अपनो सुक्र कुं दहीये । ६. तृ० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : झूठे वचन मन माहि विचारे । तो आपन सब श्रुत हारे ।

'सुनत वचन म्रिग'[1] सच पायो। तजि कै त्रास सींवन पै आयो।
अब तूं 'कहे'[2] सो ही हुं करिहूं। तो'प्रतीति'[3]काहू'सुं'[4]न डरिहूं॥११५॥
सींवन म्रिग ल्यायो उर रसियो। तुं तो प्रान'नेह मन'[1] बसियो।[2]
तो कुं दीनी मैं या देही। तूं पूरब सुख परम सनेही॥११६॥
मो रसलैंत तूं ले सुखकारी। म्रिगनी'भली'[1]कै सींवनि नारी।
याको प्रीति परेखो 'लीजे'[2]। कंद्रप कोटि 'कामरस'[3] पीजे॥[4]११७॥
सींवन के तन बिरहा 'झरै'[1]। म्रिग की जिय की धरक न'टरै'।[2]
मिटै न बिरह सींवन की जो लुं। प्रगटै नहीं कामरस तो लुं॥[3]११८॥

(दूहा सोरठा)

तो तन औरै चाह : मो 'तन'[1] कछु औरै 'चही'[2]।
ज्यु गूंगे की गाह : 'मन की तो'[3] मन मैं 'रही'[4]॥११९॥

(चोपई)

तो तन चाह सुरत सुख मंडै। मेरो जिय की धरक न छंडै।
'धोखै'[1] प्रान 'काल सुष'[2] त्रासै। ज्युं[3]दीपगप्रगट्यो तम नासै॥[4]१२०॥

---

[११५] १. प्र० १ सत बचन मर्ष। २. प्र० १ कही। ३. तृ० १ प्रताप। ४. प्र० ३ सा।

[११६] १. प्र० ३ स मों तन। २. तृ० १ मे अर्द्धाली हैः सिंवनि मृगकुं अंक उर लायो : तू तो प्रान मोहि भायो।

[११७] १. प्र० १ भलै। २. प्र० १ दीजे। ३. प्र० १ होय सुष। ४. प्र० ४, द्वि० १ में यह छंद नहीं है।

[११८] १. प्र० १ विरहा झारे, तृ० १ विरह सतावे। २. तृ० १ जावें। ३. प्र० १ मे द्वितीय अर्द्धाली नहीं है, तृ० १ में अर्द्धाली है : जरना बहुत सिंघ की तौलूँ :···काम मृगा की जौ लूं।

[११९] १. प्र० ३ मन। २. प्र० ३ दहे। ३. प्र० १ मन्ही की। ४. प्र० ३ रहे।

[१२०] १. प्र० १ घरकै। २. प्र० १ काम सुष, प्र० ३ काल सुं। ३. प्र० १ में 'पतंग'। ४. तृ० १ में अर्द्धाली है : धोखै काम कला गहे सासा : ज्यूं रवि तेज तिमिर सब नासा।

धोखे 'ध्यान धरो'[1] नहीं सूझै । धोखे सूर न रन में झूझै ।
धोखे'काम अगन'[2] नही बूझै ।[3] धोखे पंडित अखिर नही सूझै ॥१२१॥

(सींधन वाक्य)

'अनदेखे विस खायें मरही'[1] । 'झूझन काज काहा ते डरही'[2] ।
मरबो 'टरै'[3] न विन 'ग्रत'[4]'मरै'[5] । निरवारथ 'बंधो'[6] 'कित करै'[7] ॥१२२॥

(कवीसवरो वाच[1])

बोहोत कथा कहत रस फीको । 'आगम समीयो'[2] सरस अति नीको ।
सींघनि म्रिग बहु भांति रिझायो । जीय को सब संदेह मिटायो ॥१२३॥

बस कीनो 'रति के रसि'[1] फूलो । 'म्रिग राचो घर की त्रिया'[2] भूलो ।
अति उमंग 'डोलै'[3] मद मातो । म्रिग सींवन ऐसे रस रातो ॥१२४॥

वढ्यो प्रेम कछु कहत न आवै । एक एक बिन प्राण गमावै ।
सींवन आरति 'अंछ्या'[1] पावै । म्रिग कारन 'बहु'[2] 'जीव संतावै'[3]॥१२५॥

पहली डरत चरत नही चारो । अब तो भयो 'सींह'[1] लुं गारो ।
संगति के फल पायो पूरो । सूरा कै 'ढिग'[2] कायर सूरो ॥१२६॥

---

[१२१] १. तृ० १ दंम धरतो । २. प्र० १ आनै काम न्ही, प्र० ३ आन कांद्रप न । ३. तृ० १ में चरण है : धोखे काम धाम नचि सूझै ।

[१२२] १. प्र० ३ अनदेखे विस खाए मरहो, तृ० १ विन बूझे विष खाइ कै मरै । २. प्र० ३ तो लूं काम काज कित डरहो, तृ० १ झूझन काज कहां लूं डरै । ३. प्र० ३ मिटे । ४. प्र० १ मरता । ५. तृ० १ मरिये । ६. प्र० ३ घोषे, तृ० १ घोखो । ७. तृ० १ कित करिये ।

[१२३] १. प्र० २ सिंघनि वायकं, प्र० ३ कवी वायकं । २. प्र० आगे समजो ।

[१२४] १. प्र० १ रति के सर, प्र० ३ रति के रसी, तृ० १ अरु बहुते । २. प्र० ३ चतुराई अपनी सब, तृ० १ चंचलाइ सब आपनि । ३. प्र० ३ फिरे ।

[१२५] १. प्र० ३ अंध्या । २. प्र० १ बोहो, तृ० १ कछु । ३. तृ० १ भइ है बड़ाइ ।

[१२६] १. प्र० १ सीही । २. प्र० ३ संग ।

"जित तित मिरग देखि म्रिग दोरै"[1] । सींघनि 'धाइ धाइ'[2] उर फोरै ।
जे सुख पाये 'सहज की'[3] करनी । त्रिण ते वज्र करै 'विधि'[4] करनी ॥[5]१२७॥

आस पास पसु रहै न कोई । सींघनि मिरग 'रहै वन' दोई ।
ऐसे दिवस भये तिहां केते । 'दोऊ माझ न एको'[2] चेते ॥१२८॥

तो लुं सींव सयल ते आयो । सींवन ताको 'आहट पायो'[1] ।
किती एक दूर 'लुं'[2] साम्ही आई । कीनो आदर बोहोत बडाई ॥१२९॥

इण जाण्यो तोलुं म्रिग जेहै । भोरो 'जात'[1] सींघ कित लेहै ।
म्रिग 'डर डारि ढोल ज्युं'[2] फूलो । चपलाई अपनी सब भूलो ॥[3]१३०॥

गीधो मरै के बीधो मरै । ताको दोस 'कोन'[1] सिर धरै ।
हलै न चलै 'टरै नही'[2] टास्यो । आयो सींव दोरि म्रिग मास्यो ॥१३१॥

(मालती 'वाक्य'[1])

सुनि मधु 'तूं रे'[2] कहत बिसास्यो । ऐसे नही सींघ म्रिग मास्यो ।
मोसूं 'असौ'[3] प्रपंच न कीजे । एह 'प्रसंग'[4] मोपै सुनि लीजे ॥१३२॥

जा दिन सींव 'सयल'[1] ते आयो । सींवन 'म्रिग ले दूर दुलायो'[2] ।
घरी च्यारि सुख 'सूं रति'[3] कीनो । फुनि जल पीवन कूं 'चित'[4] दीनो ॥१३३॥

---

[१२७] १. प्र० १ विम्रध देषी मरध दोरो, प्र० ३ तित नित व देपि मृग दोडे । २. प्र० १ धाउ मास, प्र० ३ धाउ घाव । ३. प्र० १ सहजै सुप, प्र० ३ सीहकी । ४. प्र० ३ कित । ५. तृ० १ में यह छंद नहीं है ।

[१२८] १. तृ० १ बन विलसैं । २. प्र० ३ दोऊ में कोइ एक न ।

[१२९] १. प्र० १ ताको आहार पायो, प्र० ३ ताकुं आह लपटायो । २. प्र० १ क ।

[१३०] १. प्र० ३ जान । २. प्र० १ डरत बोलै युं । ३. तृ० १ में अर्द्धाली है मृग डर डारि दियो रस फूलै : चंचलाइ तजि के अति फूलै ।

[१३१] १. प्र० १ कोणै । २. प्र० १, २ टेरया न ।

[१३२] १. प्र० ३ वायकं । २. प्र० ३ तोहे । ३. प्र० ३ इतनो । ४. प्र० ३ कथा ।

[१३३] १. प्र० १ सहल । २. प्र० ३ मृगकुं आह लपटायो । ३. प्र० ३ सुरत । ४. तृ० १ सुष ।

नदी नीर चलि आए 'मंहि'[1] । जिम देख्यो म्रग खाग्यो 'मोहि'[2] ।
सींघन 'बरिनी'[3] रोग संचारी । ताहूं 'मोहि'[4] दूर भरी दारी ॥१३४॥
'देखत सींघन'[1] लागो हलगा । सुण्यो तुरि गार्हो 'हिन'[2] लगा ।
छाड़ छाड़ करि मन मैं रोगे । सांगन 'मलिन'[3] बहुत दुख जोगे ॥१३५॥
जाहूं ओतव काल 'कहा भावे'[1] । मांहि 'देखत म्रिग'[2] आग समावे ।
हुं पापनी पापनो नहीं चीनी । दरसन कुंन 'कतुधि मांहि कीनी'[3] ॥१३६॥

(दूहा सोरठा)

मृग पर मरि जाए : को जाणें केम्यी भई ।
सांची प्रीति सुनाय : जिम 'नारना देखत मर्द'[1] ॥१३७॥
है मरयां एक वार : जीवन को लालच 'करे'[1] ।
'एह न होए'[2] करतार : जो'मन कछु अंतर धरूं'[3] ॥१३८॥
सो नाल बंधी प्रीति : जिम कूं तो सोभा भई ।
प्रत्र मरने की रीति : अंतर 'जिन पारो'[1] दई ॥१३९॥

(काव्य)

उदयति यदि भानुः पश्चिमायां दिशायां :
विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां ।
'प्रचलित यदि'[1] मेरुः 'शीततां'[2] याति वह्निः :
'न चलति विधि विसाल्य'[3] यावनी कर्म रेखा॥[4] १४०॥

---

[१३४] १. प्र० ३ में पत्र त्रुटित है। २. प्र० ३ सोऊ। ३ प्र० वेरी।
४. प्र० ३ म्रत।

[१३५] १. प्र० १ सिंघन देखत, प्र० ३ सिंघन देख्यो। २. प्र० ३ कहा।
३. प्र० १ मिलितो।

[१३६] १. प्र० ३ कहावे। २. प्र० ३ देखे म्रिग, तृ० १ देपे विन। ३. प्र० ३
बुद्ध अह कीनी।

[१३७] १. प्र० ३ पेहली सींवनी मुई।

[१३८] १. प्र० ३ करुं। २. प्र० ३ इह न देही। ३. तृ० १ मृग पहेली
ना मरूं।

[१३९] १. प्र० ३ जन पाडे।

[१४०] १. प्र० १ प्रजलंती नदि। २. प्र. ३ सीतला। ३. प्र० ३ तदपि न
चलतीय। ४. प्र० ४ में यह छंद नहीं है।

(चोपई)

विधि के अंक लिषे क्रम जोई। ता में कछू न अंतर होई।
म्रिग की मोत सींघन को साको। चित दे 'सुनियो'[1] ससीयो ताको ॥१४१॥

बेठो हरिण सीह ने देष्यो। मानुं मूवो करिके लेष्यो।
जीवतो हरण न बैठो रहै। कासी 'वीहु'[1] सीह की सहै ॥१४२॥

केहर मन मैं 'एह'[1] 'विचारो'[2]। तोलुं म्रिग 'बेठो र खंखारो'[3]।
सुनतहि सीह कोपि चढि आयो। कर ग्रहि 'ऊंचो हतन कूं'[4] धायो ॥१४३॥

तोलुं सींवन आडी आई। परी दौरि 'सींघन'[1] पै जाई।
फूटे सींघ दोउ उर आगे। निकसे 'पीठ सेल से'[2] लागे ॥१४४॥

'चूको'[1] म्रिग उठ्यो सिर झारी। 'सींघनि गिरी मोट सी डारी'[2]।
निकसी आंत करेजो 'फूट्यो'[3]। 'वचन प्रमाण कियो तन छूट्यो'[4]॥१४५॥

परवत सिला परै 'ज्यूं[2]' आई। मानूं बीज सरग ते ध्याई (धाई)।
'बंदर'[2] गिरे व्रच्छ तैं जैसे। सींघन मन तन 'कीयो तैसे'[3] ॥१४६॥

सती न कोउ असो सत करै। ज्युं पतंग दीपग तनु जरै।
अैसे सूर न रन मैं लरै। सींवन करी 'जो'[1] कोउ न करै ॥१४७॥

सींघन कारण सूड 'पछारयो'[1]। तो लुं सींव आइ म्रिग मार्यो।
'असी'[2] गति 'किइ'[3] कारन कीनी। वचन पुकारि 'धाह'[4] एक दीनी ॥१४८॥

---

[१४१] १. प्र० ३ सुनो।
[१४२] १. तृ० १ वहु।
[१४३] १. प्र० १ द्रोह। २. तृ० १ विचारी। ३. प्र० ३ उह वेर खंखार्यो, तृ० १ उठो सिंघ भारी। ४. प्र० १ ऊंचे तान कै।
[१४४] १. प्र० १ सीहीन। २. प्र० ३ आंत पीठसें, तृ० १ पीठि सिंग सी।
[१४५] १. प्र० ३, तृ० १ चमको। २. तृ० १ तौलूं सींघ उठो झफकारी। ३. तृ० १ फूटे। ४. तृ० १ मानौ प्रांन संग लै सटकै।
[१४६] १. प्र० १ जू। २. प्र० ३ बांनर। ३. प्र० ३ कीनो अैसे।
[१४७] १. प्र० ३ ज्युं।
[१४८] १. प्र० ३ पसार्यो। २. प्र० ३ एसी। ३. प्र० १ कही। ४. प्र० १ धाई।

(दूहा सोरठा)

सुह देपें की प्रीति : ऐसी तो सब कोइ करे ।
एह फुनि उलटी रीत : म्रिग 'ऊपरि'[1] सींघनि मुई ॥१४९॥

(श्लोक)

जा दिनं पतिते विंदु माता गर्भेषु निर्मितं ।
ता दिनं लिखिते 'देवा'[1] हानि वृद्धि सुखं दुखं ॥१५०॥

(चोपई)

हानि व्रिद्धि सुख(सुक्ख)दुख 'दोई'[1] । 'सो क्युं मिटे वज्र मसि धोई'[2] ।
'रोए हंसे न माने कोई'[3] । 'होणी होए सो सिर परि'[4] होई ॥१५१॥
इउं कहि सीह गयो बन छंडि । मालती कथा कही एह मंडि ।
'सुनि मधु तूं ए'[1] कहत बिसारो । 'असी'[2] भई तबै म्रिग मार्यो ॥१५२॥

(दूहा सोरठा)

मधु मरिबो एक बार : 'अवर'[1]बडुं के कंध चढि ।
सबद 'रहे'[2] संसार : म्रिग ऊपरि सींघनि मुई ॥१५३॥

(मधु वाक्य)

सींघनि 'एह केहि कारन'[1] कीनो । 'इनसैं'[2] सुख संतोष काहा लीनो ।
त्रिया की 'बुद्धि'[3] विवेक न चीनो । म्रिग मराय 'आप'[4]जीय दीनो ॥[5]१५४॥

(मालती वाक्य)

एह उह प्रीति न होइ : 'स्वान सियारे'[1] 'जो'[2] धरे ।
सींघनि कीनी सोइ : फुनि सींघनि होइ सो 'करे'[3] ॥१५५॥

---

[१४९] १. प्र० १ उपरी ।
[१५०] १. प्र० ३ विधाता ।
[१५१] १. प्र० ३ सोउ । २-३. प्र० ३ में ये दो चरण नहीं हैं । ४. तृ० १ तेरी रजा होइ सू ।
[१५२] १. प्र० ३ मधु मोसुं तुं । २. प्र० ३ एसे ।
[१५३] १. प्र० १ आवै । २. प्र० ३ रह्यो ।
[१५४] १. प्र० ३ इह कारन कहा । २. प्र० ३ आमै । ३. प्र० १ गति । ४. प्र० ३ अपनो । ५. तृ० १ में अर्द्धाली का पाठ है : त्रिया की बुद्धि बहुत निठुराई : आपु मरी अरु म्रिग कूं मराई ।
[१५५] १. तृ० १ सुनो सयाने । २. प्र० ३ नही । ३. तृ० ना करै ।

मधु समीयो अति 'कहि'[1] समझायो। मालती के मन एक न 'भायो'[2]।
वै ही लच्छिन 'फुनि फुनि'[3] मंडे। भोरी महरी टेक न छंडे ॥१५६॥

(मालती वाक्य)

मधु 'कारन फिर'[1] बानी कहै। तू मेरे जिय की एक न लहै।
विरह अगन 'मो तनहि लगाई'[2]। 'फुनि एते ऊपर दुखदाई'[3] ॥[4]१५७॥
मो तन मध्य सकल तूं बसै। मो तन चितवत 'एक'[1] न हसै।
मैं 'तन मन सब तो पर'[2] दीनो। कनक सुहाग लों तैं कित कीनो ॥[3]१५८॥

(मधु वाक्य)

मधु जंपै मालती अयानी। 'सीप्यां'[1] बुद्धि न होय सयानी।
'जित एक'[2] प्रेम दूर मुख दरसै। 'तेतो एक प्रेम'[3] नाही तन परसे ॥[4]१५९॥
चंद चकोर कुमुद कुं देषो। फुनि अंबुज कवि(रवि ?)राज 'कुं'[1] पेषो।
'ज्यूं सिषि मेव'[2] दरस सुख पावै। परसे ते सब भरम गुमावै॥१६०॥

(मालती वाक्य)

अखै मालती मनोहर सुरिषा। अैसो बरत अहै 'क्युं पुरिखा'[1]।
मैं तेरा जीय की सब जानी। तैं तो नृपत कुमर की ठानी ॥१६१॥

(मधु वाक्य)

मालती कुं मधु 'बूझै अैसो'[1]। नृपत कुमार 'को'[2] समीयो कैसो।
कैसे भई सोइ सुनि लीजे। तो फुनि ताको उत्तर दीजे ॥१६२॥

---

[१५६] १. प्र० १ कहै। २. प्र० ३ भाइं। ३. प्र० ३ फिर फिर।
[१५७] १. प्र० १ करनै की। २. प्र० ३ मोहि सतावे। ३. प्र० ३ दाधा ऊपर लूण लगावे। ४. तृ० १ मे यह छंद नहीं है।
[१५८] १. प्र० ३ नेक। २. प्र० ३ इतनो मन सब तोहि। ३. तृ० १ में यह छंद नहीं है, छूटा लगता है।
[१५९] १. प्र० ३ सीपे। २. प्र० ३ जेतो। ३. प्र० ३ तेतो सुष। ४. तृ० १ में अर्द्धाली है : जो सुख होइ दूर मुख दरसे : ते सुख नाही अंतर परसे।
[१६०] १. प्र० १ कुन। २. प्र० १ जूं सुप मीथु, प्र० ३ जुं सषी घन, तृ० १ सिपर मोर जर।
[१६१] १. प्र० १, २ क्यु मुरषा, तृ० १ कोउ पुरुषा।
[१६२] १. प्र० ३ पूछे एसे। २. प्र० १ की।

अपत कुमर कनोज को राजा। करण नाम ते 'सब जुग'[1] बाजा।
उन एक 'विपरीत'[2] व्रत लीनो। असो काहुं न कबहूं कीनो ॥१६३॥

करें व्याह त्रिया भोग न 'करही'[1]। उलटी रीति एह मन 'धरही'[2]।
जो अबला आय प्रथम कर गहै। तासूं सेभ्र रमन की कहै ॥१६४॥

सगरी निस बैठे ही 'बीते'[1]। एक एक 'तो नाही चीते'[2]।[3]
मुख तैं वचन न कोऊ 'कहै'[4]। ज्युं गूंगे की 'गाह मन में रहै'[5] ॥१६५॥

'उह'[1] जाने मेरो कर 'ग्रहै'[2]। 'त्रिया के मन कछु औरी वहै'[3]।
अबला प्रथम एतो कहा जाने। नर कूं तो नाहर करि ठाने ॥१६६॥

एक दिवस एहि विधि के व्याहै। दूजे अवर 'दूसरी चाहै'[1]।
तासुं फुनि असी विधि 'करई'[2]। 'तजे नारि जिव संक'[3] न 'धरई'[4] ॥१६७॥

युं ही करत साठि त्रिया ब्याहीं। फुनि दूजी कोउ उवर न 'चाहीं'[1]।
अंधकूप मंदिर में 'नावै'[2]। तारा कुंची 'ताहि बनावै'[3] ॥१६८॥

विन अपराध त्रिया 'नें'[1] दुप दीनो। 'भांडन'[2] बहुत 'भंडवानो'[3] कीनो।
अपकीरति चिहुं दिस लुं दोरी। करण नाम कोइ 'लहै न कौरी'[4] ॥१६९॥

---

[१६३] १. प्र० ३ जग तदि। २. तृ० १ अपुरब।
[१६४] १. प्र० २ करे। २. प्र० ३ धरे।
[१६५] १. प्र० ३ चितवे। २. प्र० ३ साहमो नहीं चितवे। ३. तृ० १ मे अर्द्धाली है: रैन समे बैठी रहे इव सोभया: मुख सों कबहुं न बोले सरभया ४. प्र० २, तृ० १ बोले। ५. प्र० १ गाह मन ही की मन मैं रहै, प्र० २, तृ० १ परे (सी—तृ० १) गाह न षोले, प्र० ३ गाह मन की मन माहे रहे।
[१६६] १. प्र० १ वू। २. प्र० १ गहै ई। ३. तृ० १ दूजे दिवस दूसरी व्याहै। (तुल० १६७.१)।
[१६७] १. प्र० १ दूसरै चाहै, प्र० ३ दूसरी व्याहे। २. प्र० ३ करै, तृ० १ करिहै। ३. तृ० १ तीजै नारी कहुनो। ४. प्र० ३ धरै, तृ० १ धरिहै।
[१६८] १. प्र० १, २, व्याही। २. तृ० १ नाइ। ३. तृ० १ तिहां दी राइ।
[१६९] १. प्र० ३ कुं। २. प्र० १ भांड, प्र० ३ भाटन। ३. प्र० १ उन भंडवा। ४. प्र० १ लह न गोरी।

चली बात सोरठ मै आई। सूरसेन 'नरपति'[1] सुनि पाई।
बिन अपराध साठि त्रिया छंडी। जीवत भरतार भई सब रंडी ॥१७०॥
'सगरे'[1] नगर लोक युं कहै। फुनि 'रनवास'[2] मांझ सुधि लहै।
सूरसेनि की 'धी ही'[3] कुवारी। पदमावती नाम 'तसु'[4] प्यारी ॥१७१॥
उन एह बात श्रवन सुनि पाई। करण वरण 'कुं'[1] मनसा धाई।
सखी 'बुलाए तात पै पठाई'[2]। कहियो पदमावती एह 'दृढाई'[3] ॥१७२॥
करणराइ कुं निहचे वरिहूं। दूजे बचन नाहि चित धरिहूं।
तात विचार ऐह सुनि लीजे। श्रवन सुनत कछु विलंब न कीजे ॥१७३॥
सखी चलि 'बेग'[1] राइ पै आई। 'नृप'[2] के सरवन बात सुनाई।
पदमावती करण कुं वरिहै। नातर प्राण घात कै मरिहै ॥१७४॥
पठई मोहि कहन कुं आई। 'कंवरी तुम्हारी एह उपाई'[1]।
कै याको मोहि उत्तर दीजे। कै तो जाय आप सुधि लीजे ॥१७५॥
राजा सुनत महल मैं आयो। अपनो सब परवार बुलायो।
भइया बंध कटुंब 'अर रानी'[1]। बोलै 'सूर'[2] सबन सुं 'बानी'[3] ॥१७६॥
पदमावती 'कहि मोहि पठाई'[1]। करण 'वरण'[2] कुं मनसा धाई।
तुम सगरे मिल बरजो जाई। निस्वारथ ए कौन बड़ाई ॥१७७॥
'सगरी नारि'[1] व्याह करि छंडी। जानि बूझि तूं तापरि मंडी।
ऐसी वूधि न कीजे 'बारी'[2]। आप हानि अर कुल कुं गारी ॥१७८॥

---

[१७०] १. प्र० ३ नृप ने।

[१७१] १. प्र० २ सघले। २. प्र० ३ नृपवास। ३. प्र० धीग्र। ४. प्र० ३ अत।

[१७२] १. प्र० ३ की। २. प्र० ३ पठाए तात पे जाई, तृ० १ बुलाय ततकाल पठाई। प्र ३. १ ठाई।

[१७४] १. प्र० १, २ में यह शब्द नहीं है। २. प्र० ३ राय।

[१७५] १. प्र० ३ कुमरी तुम्हारी एह बताई, तृ० १ तूम कुमरि येह बुद्धि उपाई।

[१७६] १. प्र० ३ ने रानी, तृ० १ सब नारी। २. प्र० ३, तृ० १ राय। ३. तृ० १ नारी।

[१७७] १. प्र० १ एहे उपाई। २. प्र० ३ ब्याहि।

[१७८] १. प्र० ३ सबली रांणी। २. प्र० ३ बाइ।

सबी मिलि आए कुमारी कुं गूझै। पदमावति 'तो कुं'[1] काहा सूझै।
'प्रिथी'[2] लोग मही कोइ राजा। करण लगी सो 'कौन के'[3] काजा ॥१७९॥
जाहिं कहु 'जिवड़ु'[1] सुख नाहीं। तू केहि कारण ईंहिं ठाहीं।
बड़े बड़े राजन की नारी। तैं अपनो मन 'मूंढा'[2] हारी ॥[3]१८०॥
तिहां आवे 'तुन'[1] काढा सुख पैठो। पाछे टग कूगी सी मेंढो।[2]
क्यो मान 'सगरे'[3] युं कहै। पारिख की लछरी किन गहै ॥१८१॥
पदमावती सयनन सुनि कहै। करता की गति कोउ न लहै।
मांगत सुख (सुक्ख) पाव नहीं कोई। बिन मांगे दुख 'दूर न होई'[1] ॥[2]१८२॥
मात पिता अपरे कहा करिहैं। लिखे कर्म सो ही फल 'परिहैं'[1]।
हूं काहू को कह्यो न करिहूं। मन मेरो सो ही बर 'बरिहूं'[2] ॥१८३॥

(दूहा)

मन कपूर की एक गति : कोई[1] कहो हजार।
'कंकर'[2] कंचन 'तजि रचे'[3] : गुंजा मिरच अनुसार ॥१८४॥

कुमरी 'जनमि'[1] लता ज्युं बाढै। सुख दुख करम आपनो काढै।
तुम सो कुं बरजो 'जिनि'[2] कोई। भला बुरा कछु होइ स होई ॥१८५॥
मगर मकोरा हरियल काठी। त्रिया की गति 'इण हूं तें'[1] माठी।
कै तो अपनो जानो करे। 'नातर'[2] आप घात करि मरे ॥१८६॥

---

[१७९] १. प्र० ३ तोहे। २. अ० ३ प्रथवी माहि। ३. प्र० १ कोण।
[१८०] १. प्र० १ जीया। २. प्र० ३ मुंही। ३. तृ० १ में यह अर्द्धाली नहीं है, छूटी लगती है।
[१८१] १. प्र० ३ तुं। २. तृ० १ मे यह अर्द्धाली नहीं है, छूटी लगती है। ३. प्र० ३ सघरे।
[१८२] १. तृ० १ लहै पुरनरू। २. तृ० १ मे यहाँ १८३. ४ अतिरिक्त रूप से आया हुआ है।
[१८३] १. प्र० १ पैहै। २. प्र० १ वरहू।
[१८४] १. प्र० ३ कोऊ। २. प्र० ३ कुंचर। ३. प्र० १ तू ज रचै, प्र० ३ भी रुचे, तृ० १ तम रुचै।
[१८५] १. प्र० १ जनम, प्र० ३ मन मै। २. प्र० १ जन, प्र० ३ मन।
[१८६] १. प्र० २ इण सूं। २. प्र० ३ नही तो।

बचन कुमरी के युं सुनि पाये। 'नृपति सूर सबै'[1] समझाए।
विप्र बुलाए नारेल पठायो। सबै मंडाण ब्याह को ठायो ॥१८७॥

लगन महूरत 'सोधि पठाये'[1]। उत तै करण 'व्याहन कुं आये'[2]।
मंडफ 'परसि महल मैं पैठौ'[3]। पाणि ग्रहण हथलेयो 'बैठो'[4] ॥१८८॥

फुनि चौरी स 'फटुकना'[1] कीनू। बोहतक 'सड'[2](?)दाइजो दीनू।
कीनू सरस आचार विचारा। 'जसौ अपने'[3] कुल बिवहारा ॥१८९॥

महल अटारी सूंधे 'ओपी'[1]। अगर 'चंदन'[2] धूप सूं धूपी।
सिलि रणवास वैस(?)इक(?)ठाई। पदमांवती 'सोवण'[4] 'पठाई'[5] ॥१९०॥

करण कुसम सेझ सुखकारी। कुंवरी जाय तिहां अनुसारी।
'पीढी'[1] गहि पाटी 'रख आरी'[2]। 'पिलंग'[3] टेक कै बैठी बारी ॥१९१॥

चैनरेखा सखी चेजे लागी। निरषत नयन सबै भ्रम भागी।
'पोहर'[1]एक'लुं'[2]'लच्छन चीने'[3]। 'जैसे'[4] आनि भाकसी 'दीने'[5] ॥१९२॥

'बोलै नही डोलै नही कोई'[1]। चित्र 'संवार'[2] धरे मानुं दोई।[3]
सूधे पान न कोई फरसै।[4] मानुं 'अंग दाझवे'[5] तरसै ॥१९३॥

---

[१८७] १. तृ० १ नृप मलि सबे।

[१८८] १. प्र० ३ सोझि पठायो, तृ० १ सोधि लषायौ। २. प्र० ३ व्याहन कुं आयो, तृ० १ व्याह को आयौ। ३. प्र० ३ रचि चोरी मे बेठो। ४. प्र० १,२ पैठो।

[१८९] १. प्र० ३ पनोठा, तृ० १ फुटकना। २. प्र० ३ तिहां। ३. प्र० ३ जेसे जाकें।

[१९०] १. तृ० १ लीपी। २. प्र० ३ कपूर। ३. प्र० १ सैव पठाई, प्र० ३ वे इह ठाइ। ४. प्र० १ सोणै, प्र० ३ सुणेर। ५. तृ० १ नार पठाई।

[१९१] १. प्र० ३ पढी। २. प्र० १ रखारी, प्र० ३ ढिग आरी। ३. प्र० ३ पलंग।

[१९२] १. प्र० ३ पेहर। २. प्र० १ तै। ३. प्र० ३ निसन चीनी। ४. प्र० ३ असे। ५. प्र० ३ दीनी।

[१९३] १. तृ० १ में चरण है: हाले न डोले न बोले न सरै। २. प्र० ३ समान। ३-४. तृ० १ में ये दो चरण नहीं हैं। ५. प्र० ३ अंग दाह जन्न ते, तृ० १ अंग की दाझवै।

सैनरैन ऐ 'रह्यो न जाइ'[1]। करन भोर पुनि 'कार सुनाइ'[2]।
पदमावती मरम रस सोई। भोग कामरी भारी होई ॥१९४॥
तब तौ 'साठ'[1] 'साल जब'[2] हुंती। इ 'इकसठमी ताम'[3] पर सुती।
'साठ'[4]ही माठ 'अलजनिस(?)'[5] जानी। 'बासठमी बहोर कुन तू'[6] जानी ॥१९५॥
मन हुं नवारि देह संवारी। 'फुनि सुंदरी रहष हुंसत है आरी'[1]।
'के तो कोउ बुधि बिचारी'[2]। कै तो छपम नु 'पुंडा मारी'[3] ॥१९६॥

(दूहा)

प्रथम समागम रैन की : लिय तिन उरमें लाल।
भोर भए पछितायतीं : दे माहन दे सु 'हवाल'[1] ॥१९७॥

षटरस स्वाद सरस काहा जानें। गंधी काहा पंचरंग बखानें।
जा में चीती सोई बूझै। बिरह बिथा बैद कुं कहा सूझै ॥१९८॥

(पदमावती वाक्य दूहा)

सेझ सवारी पोहोप रचि[1] : सूभे 'तिलक'[2] संभार।
अवर कहा 'कछु'[3] सु कहुं : आव 'बैल मोहे'[4] सार ॥१९९॥

छुक्के पंजे में धरी : पीव पासो नहि डार।
अवर कहा 'कछु'[1] सु कहूं : आव 'बैल मोहि'[2] सार ॥[3]२००॥

---

[१९४] १. प्र० ३ रही न जाइ, तृ० १ रह्यो न जाई। २. प्र० ३ करक सवाइ, तृ० १ कह्यो सुणाई।

[१९५] १. प्र० ३ सत्र। २. प्र० ३ साठ जिगा, तृ० १ ही साही। ३. प्र० ३ इकसठमी ता, तृ० १ बानठमी ता। ४. प्र० ३ सत्र। ५. प्र० १ अलजीस, प्र० ३ अनलनिसी। ६. प्र० ३ इकसठमी बहोर लुइन कुं, तृ० १ बासठ बहुर कौन सूं।

[१९६] १–२. तृ० १ में ये दो चरण छूटे हुए हैं। ३. प्र० ३ आइ पंगारे, तृ० १ पूंटै गारी।

[१९७] १. प्र० ३ बाल।

[१९९] १. तृ० १ बिछाये पुष्प रचि। २. प्र० ३ तुपक। ३. प्र० ३ अवर कहा हुं, तृ० १ अबहूं मुष से। ४. प्र० ३ बेहल मुझ।

[२००] १. प्र० ३ हुं। २. प्र० ३ बेहल मुझ। ३. द्वि० १, तृ० १ में यह छंद नहीं है।

नैन सैन अति दे रही : उर अंचरो दीयो 'डारि'[1]।
अवर कहा 'कछु'[2] युं कहूं : आव 'वैल'[3] मोहि मार ॥[4]२०१॥

'पिलंग बिछायो स्फटक करि : दीपग दीनो वारि'[1]।
अवर कहा 'कछु'[2] युं कहूं : आव 'वैल'[3] मोहि मार ॥[4]२०२॥

मो जल पंथी की भई : ढिगही काठ तराए।
जो 'निग्रह'[1] तो बूडिहूं : 'ग्रहुं'[2] तो विसहर 'खाए'[3] ॥२०३॥

(चेनरेखा वाक्य चोपई)

जौ लुं बुद्धि न आप जिय होई। तोलुं काहा सिखावै तोही।
भली कहत कोइ बुरी विचारै। सीख देइ सो 'गांठि'[1] की हारै ॥२०४॥

तैं वर 'लीयो'[1] ढुंढि है मन सुं। अब 'एह'[2] बात कहै है किनसुं।
तूं तेरो 'करणी'[3] फल पैहै। मेरो 'कहा'[4] गांठि 'को'[5] जैहै ॥२०५॥

तीन 'पहर'[1] लुं निस समझाई। चैनरेखा जिय मैं दुख पाई।
ऐ लरकी 'लरकी'[2] होय जैहै। मोकुं दोस सब 'त्रिया'[3] दैहै ॥२०६॥

लई गुलाब सुं भरी पिचकारी। पदमावती की पीठ मैं मारी।
चौंकी उचक परी 'डर'[1] लागी। नृपत कुमर की संका भागी ॥२०७॥

भीजे 'वसत्र'[1] दूर जब कीने। दुख दाएक होए 'सब'[2]सुख लीने।
मधु मोसुं एती 'छित'[3] कीनी। मालती दस अंगुरी मुख दीनी ॥२०८॥

---

[२०१] १. प्र० ३ डार। २. प्र० ३ हुं। ३. प्र० ३ वहेल। ४. द्वि० १ तथा तृ० १ में यह छंद नहीं है।

[२०२] १. तृ० १ में चरण है : सेझ बिछाई झारिकै : पलिग पछेरो सार। २. प्र० ३ हुं। ३. प्र० ३ वहेल। ४. द्वि० १ में यह छंद नहीं है।

[२०३] १. प्र० ३ न गहुं। २. प्र० ३ गहुं। ३. प्र० ३ पायो।

[२०४] १. प्र० ३ गांठ।

[२०५] १. प्र० १ लीधो। २. प्र० ३ तूं। ३. प्र० ३ गति का। ४. प्र० १ कह्यो। ५. प्र० १ क्यों।

[२०६] १. प्र० ३ पोहर। २ प्र० ३ लखी। ३. प्र० ३ मिले।

[२०७] १. तृ० १ गले।

[२०८] १. प्र० ३ वचन (< वसन)। २. प्र० ३ के। ३. प्र० ३ गति।

(मधु वाक्य)

[illegible] नेह भवनो [illegible] कादो। जैसे देह 'पुरानी'[1] आयो।
नातुर पुरुष नाम नूं कहिए। याकि बिना नारी 'कतु'[2] गहिए ॥२०९॥

(दूहा)

नवल नीद 'दुग नर'[1] : नारी नेह [illegible]।
कोरो काचो देपि करि : 'चोतु कहिए'[2] [illegible] ॥२१०॥

(मालती वाक्य चौपई)

त्रिया 'के'[1] तन की हुस्यारत पावें। नर 'ललचाये स्वान ज्युं'[2] आवे।
एह 'मेरे'[3] एक न भावें। ईं कतु 'काहूं'[4] जर तूं कतु गावें ॥२११॥

(श्लोक)

'ना तृप्तिः अग्नि काष्ठानां'[1] नापगानां महोदधि।
'नांतकं'[2] सर्वभूतानां 'न [पुंसा] वाम लोचनं'[3] ॥२१२॥

(चोपई)

त्रिपती न पावक काठ के 'जारे'[1]। त्रिपती न सायर सलिल के मारे।
त्रिपती न काल प्रान के लेतें। त्रिपती न नर नारी के हेतें ॥२१३॥

(मधु वाक्य)

मधु 'जंपे'[1] मालती सुनि लीजे। सत छोड़े 'केता'[2] दिन जीजे।
तूं अयांन होइ बात मोकुं कहै। सुननहार कैसे सुनि रहै ॥२१४॥

---

[२०९] १. प्र० १ पुराना। २. तृ० १ कर।

[२१०] १. प्र० १ भयेइ नारी। २. प्र० ३ पीछे गइए, तृ० १ तौ गहि गहियै फुनि।

[२११] १. प्र० १ का। २. प्र० ३ ललचाइ वेग ढिग, तृ० १ ललसाय स्वान जु। ३. तृ० १ तेरे। ४. प्र० ३ गावुं।

[२१२] १. प्र० १ नाग्नि कास्ट त्रिपुताना। २. प्र० ३ नापक। ३. प्र० ३ य पस्यति स पस्यति।

[२१३] १. प्र० १ जाख्यो, प्र० ३ भारे।

[२१४] १. प्र० ३ झंपे। २. प्र० ३ कितेक।

'तो'[1] मो गुरु एक पाठ पढ़ाई। दूजी तूं नरपति की जाई।
एह जिव समझ बिबेक नही बूझै। आंधी भई तोहि काहा सूझै ॥२१५॥
'हंस गुरु आदि दे'[1] साषी। उतपति बेद 'पुरानह'[2] भाषी।
'अंडज षान देव दुज राखी'[3]। 'मधु सूरिख सुनि धुं ए साखी'[4] ॥२१६॥
एक गरभ 'तैं'[1] उपजे दोई। ताकुं दोस धरै 'नही कोई'[2]।
'तो'[3] मो कुल की 'अंतर'[4] बाढ़ी। झूठी 'किरच काहे कुं'[5] काढ़ी ॥२१७॥
मंत्री सुत मधु मनहि बिचारै। त्रिया बचन कछु कहत न हारै।
मालती तन लच्छन 'यु'[1] चाढ़ै। 'ज्युं जल नैन भाद्रवै काढ़ै'[2] ॥२१८॥
तजिए कनक श्रवन जिहां तूटै। तजिए पंथ 'चोर जिहां लूटै'[1]।
तजिए प्रीति जिहां दुख 'पाई'[2]। निस्वारथ परधाम न 'जाई'[3] ॥२१९॥

(श्लोक)

विना कार्येषु ये मूढा गच्छंति पर मंदिरे।
'अवश्यमेव'[1] लघुतां याति रवौ समीपे यथा शशिः ॥२२०॥

(दूहा)

ससि सूरज अरु सुरसरी : श्रीपति सबै अनूप।
निस्वारथ पर ग्रह गए : भए दीन लघु रूप ॥[1]२२१॥

---

[२१५] १. प्र० ३ तू।
[२१६] १. प्र० ३ आहि गुरु आदि दे, द्वि० १ ब्रह्मा विष्न आदितहं। २. प्र० ३ पुराणां। ३. प्र० ३ अंडज षान देव द्विज राखी, द्वि० १ अंतरिक्ष शसि सूर है साषी। ४. प्र० ३ मधु मूरत सुनीऐ ए साषी, द्वि० १ मालति करुना करि करि भाषी।
[२१७] १. प्र० ३ सुं। २. प्र० ३. सब्र कोहुँ। ३. प्र० ३ तु। ४. प्र० ३ अंतन। ५. प्र० ३ किरच कहांते, द्वि० १ कीरत कहां तैं।
[२१८] १. प्र० १ जू। २. द्वि० १ वह कुंमत कछु कहत न छाड़े।
[२१९] १. प्र० १ जीहा रे जूटै। २. प्र० १ दाई, प्र० ३ पइये। ३. प्र० ३ जइये।
[२२०] १. प्र० ३ ते नरा।
[२२१] १. तृ० १ में यह छंद नहीं है।

(चौपई)

भए गए 'सोच बात मन माहियां'[1] । या दिन मैं पठये 'नहिं आइयौ'[2] ।
कुंवर दोनों ज्युं बन कुंडै । तब दिन ग्राम सरोवर जांहै ॥२२२॥

पर पिनोल मेलन नहीं होंई । 'गोरे'[1] ले पंछिन 'कुं'[2] आंरे ।
'परहरात पड पड डर भाजै'[3] । 'पंथ प्रधान मानुं घन गाजै'[4] ॥२२३॥

उमड़ी अरब गरब 'रथि'[1] सोहै । मानुं घटा मेघ की मोहै ।
भीने पंथ मानुं घन बरसै । सो जल मनु आपनो 'तन'[2] फरसै ॥२२४॥

भरही नीर सुंदर 'पणिहारी'[1] । मधु के चरित देखि कै हारी ।
करि 'सिर'[2] कुंभ 'लिये जिहां जैसे'[3] ।
'चितवत चकित चित्र पुनि तैसे'[4] ॥२२५॥

'मानहुं मनवा'[1] जुरा भुलानी । 'काम जार नीर सबै रुकानी'[2] ।
प्रगटे मैंन कंचुकी तरकै । जल के कुंभ सीस तैं ढरकै ॥२२६॥

मधु ए चरित देषि कै 'लाजै'[1] । जा डर काज 'कोउ बन भाजै'[2] ।
सो डर जहां तिहां मोहि आगे । छूटूं कहा कोण पर भागे ॥२२७॥

'तमक'[1] तुरी चढ़ि कै 'ग्रह'[2] आयो । 'वह ठादर को'[3] 'खेल'[4] मिटायो ।
दूती देखि 'गई'[5] गति सारी । मालती सुद्ध 'दौर देय'[6] बारी ॥२२८॥

---

[२२२] १. प्र० ३ जीवसु सकोच मन भयो । २. प्र० ३ कुं नायो ।

[२२३] १. प्र० ३ गोरी ले । २. प्र० ३ पर । ३. प्र० ३. अरत परत जीव तिह भज्जै, ठि० १ हरहराए भागे फिरि आवै । ४. प्र० १ मधु यह चरित देषि सुख पावै ।

[२२४] १. प्र० ३ वर । २. प्र० १ मन ।

[२२५] १. प्र० ३ वर नारी । २. प्र० ३ में नहीं है । ३. प्र० ३ लिए सिर जैसे, तृ० भरे जल ठाढ़े । ४. प्र० १ चितवत कुंभ लिए सिर तैसे, तृ० १ मधु देखन की मनसा बाढ़े ।

[२२६] १. प्र० १, २, तृ० २ मानुं मिलवा, तृ० १ मानुं मुनियां । २. तृ० १ काम जरत सब सुंदर रानी ।

[२२७] १. प्र० १. लीजे । २. प्र० १ कीउ वन लीजे ।

[२२८] १. प्र० २ तांम । २. प्र० ३ गेह । ३. प्र० ठन ठाहर सुं । ४. तृ० १ खोज । ५. प्र० १ गही । ६. प्र० ३. दे रही, तृ० १ आनि दई ।

मधु वियोग दोय दिन 'हूती'[1] । 'लै के खबर'[2] गई तिहां दूती ।
खेलन मिस सब सखी बुलाई । चलि कै राम सरोवर आई ॥२२९॥

सुनि सखि मो चित जिय जैसे । पीउ 'सुनाइ'[1] पुकारूँ कैसे ।
जान वेदन व्यापै जिय 'जिसौ' (?)[2] । धोखे धाइचक्रित 'चिहुं दिसे'[3]॥२३०॥[4]

(दूहा सोरठा)

अंतरगत की 'प्रीति'[1] 'करता बिन कोउ न लहै'[2] ।
तन मन धरै न धीर किसहि पुकारुं किसे कहूं ॥२३१॥

बिरह बिथा की पीर को जानै कासुं कहूं ।
'तन'[1] मन धरै न धीर प्रीतम जाकै दरस बिन ॥२३२॥[2]

मेरो मन थिर नाहि पिंड बिथा के पीर सुं ।
किसहू कही न जाए गुपत बात मधु (?) मालती ॥२३३॥[1]

(चोपई)

मालती आय सरोवर झंखी । चितवत विपति परी 'तिहां'[1]पंखी ।
सखी 'सकल के'[2] वदन बिलोके । मानुं चंद 'सु दीसे'[3] कोके ॥२३४॥

(दूहा सोरठा)

चकई भयो बिछोह 'अरुण कंवल संपुट दियो'[1] ।
चाहत रह्यो चकोर 'देखि'[2] वदन छवि मालती ॥२३५॥

---

[२२९] १. प्र० ३ रेहती । २. प्र० ३ देखि सरोवर ।
[२३०] १. प्र० १ सुनाही, प्र० ३ सुने नही । २. प्र० ३ जमै । ३. प्र० १ जीय जसै, प्र० ३ चिहुं देसे । ४. प्र० ४ में यह छंद नहीं है ।
[२३१] १. प्र० ३ पीर (तुल० बाद के दोहे मे 'पीर') । २. तृ० १ को जानै काकूं कहूं ।
[२३२] १. प्र० ३ मो । २. द्वि १ मे यह छंद नहीं है ।
[२३३] १. द्वि० १ मे यह छंद नहीं है ।
[२३४] १. प्र० ३ उहां । २. प्र० ३ सघन को । ३. प्र० चिहुं दिस ।
[२३५] १. प्र० ३ अरुण कंवल संपुट दहे, तृ० १ रैन समै संगम नही । २. प्र० ३ देख ।

सखी देख की (दें ?) वार रवि के मद फीको मदा ।
मालति वदन निहार 'तेज रहित दिनकर भयो'[1] ॥२३६॥

फूले 'कुमुद'[1] बिसाल पंछी आश्रम कुं चले ।
द्रपण लागी बाल सखी सकल ढिग मालती ॥२३७॥

(चोपई)

अंगी आन पुकार पुकारी । मालती 'येह'[1] संदेह तूं टारी ।
तेरे वदन 'जोति अलि'[2] रूंधे । अरुण वंस 'वारिज पुट'[3] वंधे ॥२३८॥

सुनत वचन मालती रिझानी ।[1] अंगी काज कही कित(किति)बानी ।
'काटहि काष्ट धाम सजि रहै'[2] । 'अलि बारिज वंधन किम सहै[3] ॥२३९॥

'पर'[1] प्रेम के 'पास'[2] कठिन कु 'कौरे अली'[3] ।
तन मन अरप्यो तास प्रीति रीत एह मालती ॥२४०॥

(गाहा)

गू गू गूराय गूराय मान अली त्रिग बिहंग माया ।
अंबो प्रेम अपूरबो जांणीये जंपे जीहा ॥२४१॥[1]

(दूहा सोरठा)

प्रेम प्रीति के काज पंछी ही वंधन सहै ।
नातर बहरी बाज गगन 'गए फिर को गहै'[1] ॥२४२॥

---

[२३६] १. प्र० १ देष वदन छवि मालती (तुल० चरण के प्रारंभ की शब्दावली)।

[२३७] १. प्र० ३ कमल ।

[२३८] १. प्र० १ देहे । २. प्र० १ जो चित अलु । ३. प्र० ३ वारुण पट ।

[२३९] १. प्र० १ में छंद के शेष तीन चरणों के स्थान पर पूर्ववर्ती छंद दुहरा उठा है । २. प्र० २ काठिनहिं काष्ट धाम सज्यो रहे, प्र० ३ काठ किट कसि से जोगरि है । ३. प्र० ३. अनल···बंधन नित करिहो ।

[२४०] १. प्र० १ पटी । २. प्र० १ प्रीत । ३. प्र० १ कूवरी मीली ।

[२४१] १. प्र० ३, द्वि० १ मे यह छद नहीं है: संभवतः भाषा की अस्पष्टता के कारण छोड़ दिया गया है ।

[२४२] १. प्र० १ गहै फरि कै गहै ।

स्रवनन 'राचै राग'[1] 'घंट'[2] नाद सुनि मृग थकित ।
सर सनमुख उर 'लागि'[3] प्रेम न चूकत मालती ॥२४३॥

(चौपाई)

अंगी प्रेम बढाय बतायो । 'तातैं'[1] विरह बान उर लायो ।
तबही मधु 'मनसा मै आयो'[2] । 'तन'[3] चटपटी मानुं कछु'खायो'[4]॥२४४॥

([1]दूहा सोरठा)

विरहा'व्यापी कुंवार (कुंवारि)'[2]पैंड च्यार चलि'पै'[3]गई ।
'तिहां'[4] चकई आणि पुकार सबद सुनो एह मालती ॥२४५॥

([1]चोपई)

"चकई पीव पीव कहै"[2] जंपै । 'लेहि उराह(उरांह)आहि'[3]कित कपै ।
मालती 'सुनत स्रवन सच पायो'[4]। चकई कूं चानक सी 'लायो'[5] ॥२४६॥

(मालती वाक्य)

कठिन 'प्रांण'[1] तेरो सुनि चकई । पति वियोग कैसे 'कहि सहई'[2] ।
चरन 'पंख नाही जी'[3] थकी । 'ढिग ढुकि जाय चहूं दिस वकी'[4] ॥२४७॥

---

[२४३] १. प्र० १ राची रंग । २. प्र० ३ गृहे । ३. प्र० ३ लाव ।

[२४४] १. प्र० ३ जैसे । २. प्र० ३ इछा मे आइ । ३. प्र० ३ तन । ४. प्र० ३ पाइ ।

[२४५] १. प्र० १ में 'सेवेंत्री वाक्य' और है । २. प्र० ३ व्याप कवाल । ३. प्र० ३ कै । ४. प्र० ३ मे नहीं है ।

[२४६] १. प्र० ३ मे 'चकवी वाक्य' और है । २. प्र० ३ पीउ पीउ वेर वेर कहा । ३. प्र० ३ लेइ उमास आइ । ४. प्र० ३ सबद सुनी रस पाइ । ४. प्र० ३ लाई ।

[२४७] १. तृ० १ प्रेम । २. प्र० १ पति पाइं, प्र० ३ करि सकइ । ३. प्र० ३ पंथ रही थिर । ४. प्र० १ ढिग ढुकि जाय चहूं निस वकी, तृ० १ ढूंढत करम नाम उर वकी ।

([illegible] राग)

सुन मालती कहै [illegible] । जो पै परी राम की [illegible] ।
तो विनु [illegible] नहीं फटै(फाटै)¹ । [illegible] 'राम गत'² फटै(फाटै) ॥२४८॥
'चकई आज निसि'¹ तोहि मिलाऊं । कहु गतो (?) तोहि 'तुझ'³ पाऊं ।
सो विधि [illegible] नहीं फटै(फाटै)। [illegible] (फाटै) ॥२४९॥
चकई पचारि कै आगम दीनो । [illegible] 'ढिग'¹ 'पंजर'² लीनो ।
[illegible] सब कीनो (चीनो)। 'चकई कंत मिले सोई चीनो'³ ॥२५०॥

(दोहा)

धन म 'आज रयणी'¹ 'चकई [illegible] कहै'² ।
'चिरंजीवि [illegible] अकूरस भंजिया [illegible]'³ ॥२५१॥

(चौपई)

पंछी पकरि पंजरे नावे । चित्रमार के द्वार बंधावे ।
सखि निसा कहि आप भरि मसावे । विरह वियोग कैसे सच पावे ॥२५२॥¹
चकई जंपै सुनि रे सजनी । तू बूझै सो नहि 'या'¹ रजनी ।
जो 'असे'² मिलवै सच पावै । पंछी 'बोहोत'³ पंजरे नावै ॥२५३॥
संकट मध्य जेदो(बेतो)मच पइये । 'को दुख सहै विजोग न सहिये'¹ ।
झूठे मन कैसे समझइये । बागुर चूसे 'रस'² कित पइये ॥२५४॥³

---

[२४८] १. प्र० १ मो विन पाट न फूटै, तृ० १ मा विजोगिनी फटै । २. प्र० ३ कौन ते ।

[२४९] १. प्र० ३ आज निसा हु । २. प्र० १ कही । ३. प्र० ३ तुछ फटाई ।

[२५०] १. प्र० ३ ढिग । २. प्र० ३ पजर । ३. प्र० १ चकई कंत मिल्यो सोई कि हीनू, तृ० १ में यह चरण छूटा हुआ है ।

[२५१] १. प्र० १ अषरयणी, प्र० ३ आज रयणेह । २. प्र० ३ चकवी तब ऐसी कहे । ३. प्र० ३ वन जीवो लष करेह मेटियो राम लेहाणं ।

[२५२] १. यह छंद प्र० १, ३ मे नहीं है, किन्तु बाद वाले छंद से प्रकट है कि यह प्रसग के लिए अनिवार्य है, इसलिए उनमे छूटा हुआ लगता है ।

[२५३] १. प्र० ३ या । २. प्र० ३ ऐसे । ३. प्र० १ बोहर ।

[२५४] १. प्र० १ को दुष रह बीजोग नै रह । २. प्र० १ मे यह शब्द छूटा हुआ है । ३. प्र० ३, तृ० १ मे यह छंद नहीं है ।

(मालती वाक्य)

"तूं'[1] बियोग सुख दुख मिलायो । पीउ पीउ करि कै सबद सुनायो ।
फुनि केते संकट कित आयो । वागुर 'चूसी[2] मोहि बतायो ॥२५५॥

(चकई वाक्य)

'सरस'[1] निरस की गती न ठानै । तू वारी इतनो काहा जानै ।
प्रथम समागम सुख न सूझै । वागुर 'चूसी काहा तू बूझै'[2] ॥२५६॥

(दूहा सोरठा)

मिटत न सहज सुभाव 'जिहाँ'[1] बिधना जैसै दियौ ।
सींधन प्रसूति 'पिराय'[2] 'अभ तूटा'[3] कुंजर 'हयो'[4] ॥२५७॥

'भादु'[1] निसा के भाइ अंधकार रवि दरस लु ।
चंद जानि 'बिगसावै[2] कुमुद कहा करतूत इह[3]॥२५८॥

(चोपई)

हूँ पंछिनि थोरी बुधि मेरी । पढी 'विगूचै'[1] 'वे'[2] गति तेरी ।
तूं'चकोर(चकोरि)होय'[3]दूरहि'ढूकी'[4]। 'मलय'[5]भुयंगम की गति'चूकी'[6] २५९[7]

चकई वचन सुनत सच 'पाई'[1] । जैतमाल सखी वेगि बुलाई ।
'तिणसुं'[2]वात 'कहत'[3]संक धरई । 'जिन'[4]करतार कछु विपरीत करई ॥२६०॥

---

[२५५] १. प्र० ३ तोहि । २. प्र० ३, तृ० १ मुचे ।

[२५६] १. प्र० १ में यह शब्द नहीं है । २. प्र० ३ चुसे तोहिं कहा सूजे ।

[२५७] १. प्र० १ जीय । २. प्र० १ पिरावै । ३. प्र० १,२ अभ तूटी, प्र० ३ मृग ढुढे । ४. प्र० ३ मृग हीयो ।

[२५८] १. प्र० ३ भाम । २. प्र० ३ बरसावतो । ३. प्र० १ हो ।

[२५९] १. प्र० १ वेगूनवे । २. प्र० ३ वा । ३. प्र० ३ चकोरहि । ४. प्र० ३ ढुके । ५. प्र० १ स्यलय, प्र० ३ मिले । ६. प्र० ३ चुके । ७. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है : तैं चकोर होइ चित लायो । मधुकर चित कछु औरैं गायो ।

[२६०] १. प्र० १ पाये । २. प्र० ३ तास । ३. प्र० ३ कहे ते । ४. प्र० ३ मन ।

[illegible]

([illegible])

[illegible] ॥२६१॥

([illegible])

[illegible] ॥२६२॥

[illegible] ॥२६३॥

(श्लोक)

चिन्तातुराणां न सुखं न निद्रा :
कामातुराणां न भयं[1] न लज्जा ।
क्षुधातुराणां न बलं न तेजः :
अर्थातुराणां 'स्वजनो न[2] बंधुः ॥२६४॥

(चौपाई)

खुआरगी 'मेरे (मेरे)'[1] अनुरागी । 'च्यंता'[2] काम काम करि जागी ।
लज्जा डर मेरे मन भागी । सुन सखी जैतमाल की साखी ॥[3]२६५॥

---

[२६१] १. प्र० १ मे यह शब्द नहीं है । २. प्र० ३ होय । ३. प्र० १ दीपजन त काउं । ४. प्र० १ विको जाव ।

[२६२] १. प्र० १ दीप । २. प्र० ३ एनी । ३. तृ० १ मोहिनी जानी ।

[२६३] १. प्र० ३ सषी दुराय मे आप दुराइ, द्वि० १ सपी चुराय कै आन झंपायो । २. प्र० ३ आइ । ३. प्र० ३ अब सहीयन कहिए । ४. तृ० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : जब करनी करत न आई । तब सपी मैं तोहि सुनाई ।

[२६४] १. प्र० १ भयनं । २. प्र० १ सजनत्या ।

[२६५] १. प्र० मेरी । २. प्र० ३ एतो । ३. द्वि० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : चिंता काम काम कर जागी : सुन सषी जैतमाल यो त्यागी ।

जैतमाल तू 'द्विज'[1] की वारी । सब सखियन मैं 'तुं मोहे'[2] पियारी ।
तोने 'दुराव'[3] नही कछु मेरै । मेरो पिराण 'पर्यो'[4] बसि तेरै ॥२६६॥

दुज कुं सकल लोक 'नर'[1] ध्यावै । 'सुनियत दव्ब लछन सोइ'[2] पावै ।
याको कोन भेद कहि मोसुं । पाछै मन की 'बूझै'[3] तोसुं ॥२६७॥

जैतमाल 'जंपै'[1] सुनि बाई । तैं मोसुं ए 'काक'[2] सुनाई ।
सब जुग 'आहि देव के'[3] धंधे । 'दुज के चरण सकल जुग वंदे'[4] ॥२६८॥

(श्लोक)

देवाधीना जगत् सर्वं 'मंत्राधीना'[1] च देवता ।
ते मंत्रा ब्राह्मणाधीना तस्मात् ब्राह्मण देवता ॥२६९॥

(मालती वाक्य)

ऐसे 'मंत्र'[1] सखी मुख तेरै । काज न आए एक ही मेरै ।
मधु मधु करत 'मोहि'[2] दिन बीते । कोडि तेतीस कौन 'कुं'[3] 'जीते'[4] ॥२७०॥

जो कसतूरी त्रिगह न 'खाई'[1] । मुकता माल गज कंठ 'न आई'[2] ।
मणिधर अणि की गति 'नहुँ'[3]चीनी । तेरै 'मंत्र'[4] एहै गति कीनी ॥२७१॥

(दूहा)

मृगमद गज सिर 'स्वाति'[1] सुत पंनग 'पास मनिराज'[2] ।
या'ते निरधन ही भला जो जीवत 'न आवै'[4] काज ॥२७२॥

---

[२६६] १. प्र० १ हीन, प्र० ३ दिल । २. प्र० १. मे तोहि । ३. और ।
४. प्र० ३ मेरो ।

[२६७] १. प्र० ३ निज । २. प्र० ३ सुनि मन मोदष्ट वसु, द्वि० १ इच्छा करै सोइ फल । ३. प्र० ३ पुछे ।

[२६८] १. प्र० ३ बोले । २. प्र० ३ कहा । ३. प्र० १ आए दे । ४. प्र० ३ देव सकल दुजन सुष नथे, तृ० १ देव सकल द्विज सू आरंभै ।

[२६९] १. प्र० १ मित्राधीना ।

[२७०] १. प्र० १ मीत्र । २. प्र० ३ केही । ३. प्र० ३ परि । ४. प्र० १ जेते ।

[२७१] १. प्र० ३ पाई । २. प्र० ३ नाइ । ३. प्र० १ न । ४. प्र० १ मीत्र ।

[२७२] १. प्र० ३ सीप । २. प्र० ३ मणि मन राज । ३. प्र० ३ ता ।
४. प्र० ३ नावे ।

(चौपई)

'तुम्ह'[1] तुम भाग नहीं कछु अंतर । बिधना 'देह लिखे दोय'[2] अंतर ।
मो मरतां तू निहचै मरै । तेरै 'मंत्र'[3] काज कहा सरै ॥२७३॥
जैतमाल फिर उत्तर दीनी । तैं अपजस मेरे सिर कीनी ।
'तै'[1] परपंच मधु मोहि 'दुरायो'[2] । 'सो तो तेरै हाथ न आयो'[3] ॥२७४॥

(दूहा सोरठा)

'पलट प्रान द्रिढ'[1] प्रीति मैं मन वच क्रम कै करी ।
पिक बायस की रीत तैं मोसुं मन मैं धरी ॥२७५॥
जिहि 'जिय कै जिय'[1] लाज भेद छेद तिण 'सुं'[2] कहै ।
'सरै न'[3] ताको काज प्रीत कपट 'जिहां'[4] मालती ॥२७६॥

(चौपई)

मालती दौरि चरन लपटानी । मेरो चूक सबै मन मांनी ।
अब तो मोकुं मरत जिवावै । मधु सूरति मोहि 'नैन'[1] बतावै ॥२७७॥[2]
जंपै जैत मालती भोरी । आरतवंत काज बुधि थोरी'[1] ।
'तैं'[2] ननसा चात्रग 'लुं'[3] बंधी । 'वे ही'[4] विकल काम की अंधी ॥२७८॥

---

[२७३] १. प्र० ३ ते । २. प्र० ३ दोय देह रची एक । ३. प्र० १ मीत्र ।

[२७४] १. प्र० ३ जे । २. प्र० ३ दुराई । ३. प्र० ३ नेकन कबहुं भेद न पाइ ।

[२७५] १. प्र० ३ प्रगट प्रमांण ढिग ।

[२७६] १. प्र० ३ जाकै कुल । २. प्र० ३ कुं । ३. प्र० १ सरनै । ४. प्र० ३ ढिग ।

[२७७] १. प्र० ३ नेक । २. तृ० १ मे यह छंद नहीं है ।

[२७८] १. तृ० १ में अर्द्धाली है : जपै जैत मालती अयानी । सीधी बुद्धि न होय सयानी । (तुल० १५६ १, २) । २. प्र० ३ तो । ३. प्र० १ क । ४. प्र० ३ वीवल ।

(श्लोक)

नहि पश्यति कामान्धो जन्मान्धो नैव पश्यति ।
नहि पश्यति मदोन्मत्त अर्थी दोपो न पश्यति[1] ॥२७६॥

(दूहा)

जोही गति जनमंध की सो ही गति कामंध ।
'मदमत सोई'[1] अंधरो 'आरत'[2] पूरन अंध ॥२८०॥

'आरति'[1] अपनी जानि कै चरन पखारत खीर ।
गरज 'सरै' समियो फिरै नेक न 'पावै (प्यावै)' नीर ॥२८१॥

अति आदर सनमान देय 'फुनि'[1] निछावरी होइ ।
आरत बिन सुनि मालती बात न 'पूछै'[2] कोइ ॥२८२॥

(चोपई)

मालती जैतमाल 'तन चहै'[1] । 'मेरी दाद'[2] कौन 'मन'[3] गहै ।
बड़े 'आप'[4] तन कुं दुख सहैं । ओछी बात न मुख सुं कहैं ॥२८३॥

(दूहा)

जीवन पर उपगार हित देखो धरनी आभ ।
वा बरसे 'वा नीपजै'[1] 'छेहा गिणै न'[2] लाभ ॥२८४॥

देपो 'धुं'[1] गति अंब की फलै बिस्व के हेत ।
वो इत ते पत्थर हणे वो 'उत'[2] तें फल देत[3] ॥२८५॥

---

[२७६] १. प्र० ३ में यह छंद नहीं है ।
[२८०] १. प्र० १ अे तीहुन मैं । २. तृ० १. अरथी ।
[२८१] १. तृ० १ अरथी । २. प्र० ३ सरी । ३. प्र० ३ पावत ।
[२८२] १. प्र० ३ अरु । २. प्र० ३ बूझे ।
[२८३] १. प्र० ३ नेक कहे । २. प्र० ३ मेरो वचन । ३. तृ० १ चित । ४. प्र० ३ आइ ।
[२८४] १. प्र० ३ अति नीर सू । २. प्र० ३ पर उपगारे ।
[२८५] १. प्र० ३ धो । २. प्र० ३ इत । ३. तृ० १ में चरण का पाठ है :
पंथी पाहन स्यूं हनें वे अमृत फल देत ।

पुनि तरवर की गति सुनो परहित कुं ज रचाइ।
धूप सहै सिर आपणें छाया करै औरांह ॥२८६॥

(श्लोक)

श्लोकार्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रंथ कोटिभिः।
परोपकाराय पुण्याय पापाय पर पीडनं ॥२८७॥

(चोपई)

'अरध'[1] श्लोक माहि यूँ भाखी। वेद पुराण सकल द्विज साखी।
पर उपगार पुन्नि नही अैसो। पर दुख समो पाप नहीं कैसो ॥२८८॥
बोछो बोछी बुद्धि विचारै। बड़ो बड़ाई करत न हारै।
'ए'[1] तो आहिं सहज के लच्छन। उत्तर जाई 'के रहो दच्छन'[2] ॥२८९॥
जेत 'विहसि'[1] मालती उर लाई। तू कुंवरी 'जिन मन'[2] दुख पाई।
धीरज राखि जीव दृढ तेरो। करूं सो 'ख्याल'[3] देखि' अब'[4] मेरो॥२९०॥
कहै तो गगन चंद रवि 'रुंधू'[1]। कहै तो इंद्र मेघ जल बंधू।
कहै तो बिन पावक'पख(पक?)[2] रांधूं। 'सुरग पताल सुर तीसू बांधूं'[3] ॥२९१॥
कहै तो जोगिणी बीर हंकारूं। कहै तो गिरिवर सुं गिर 'मारूं'[1]।
कहै तो'उदधि धिरित करि जारूं'[2]। कहै मेरु अंगुरी सुं 'टारूं'[3] ॥२९२॥
कहै तो बसुधा 'चलन लचाऊँ'[1]। कहै तो 'इण (अन) रितु मेघ'[2] बरसाऊँ।
कहै तो अष्ट धात गिरि धारूं। 'कहै तो सात समुद्र पिव डारूं'[3] ॥२९३॥

---

[२८८] १, प्र० ३ आधे।

[२८९] १. प्र० १ अह। २. तृ० १ रह्यो कोउ पच्छिम।

[२९०] १. प्र० १ विहस्यां। २. प्र० १ जीनमै, प्र० ३ मन मै। ३. प्र० ३ काज। ४. प्र० ३ बल।

[२९१] १. प्र० ३ बंधूं। २. प्र० ३ करि संधू। ३. प्र० ३ कहै तो सुरग पताल सर सांधू; तृ० १ में यह चरण नहीं है।

[२९२] १. प्र० ३ ढारूं। २. प्र० ३ उदध गरम करि डारूं। ३. प्र० ३ डारूं। ४ तृ० १ मे अर्द्धाली है: कहै तो दस द्वार पकड़ करांधू। कहै तो राजा प्रजा एक साधू।

[२९३] १. प्र० ३ चरण चलाई। २. प्र० ३ अमरत जल। ३. द्वि० १ कहै तौ सरिता उलटि बहाऊ, तृ० १ कहै तो चलिता चाल चलाऊं।

'मलिन मंत्र'[1]'होइ ते सहु'[2]जानूं । सुर नर सकल 'बंध करि'[4] आनूं ।
जो मधु नेक देखवे पाऊँ । पंछी लुं 'गहि कै अक'[3] लाऊँ ॥२६४॥
मधु की सुद्धि राम सर पाई । दूती देखि जैत पै आई ।
'दुज'[1] कुंवरी सुनि कै उठि धाई । मालति 'कंम'[2] हेत चित लाई ॥२६५॥
'मंत्र'[1] मोहनी मुख उच्चरही । वसीकरन 'की वानी'[2] धरही ।
थोरी वैस बुद्धि तो पूरी । परहित काम करन कुं सूरी ॥२६६॥
'लई'[1] हंकारि सखी दोय च्यारा । 'सज्या कीनो'[2] सोला सिणगारा ।
मंजन चीर रच्या उर हारा । कर कंकण नेवर झणकारा ॥२६७॥
तिलक भाल नेना दिए अंजन । माला 'मुगताफल'[1] मनरंजन ।
तन चंदन 'उर'[2] कंचुकि 'तरकै'[3] । 'कटि पर छुद्र घंटिका'[4] पलकै ॥२६८॥
मुख तंबोल वीरी 'मुख डारी'[1] । मानुं 'किर पंकज निरवारी'[2] ।
अति चातुर मुख सोभा सोहै । 'जित चितवै वित ही मनु'[3]मोहै ॥२६९॥
मात गयंद 'चाल ता'[1] सोहै । 'जां देखे मुनिवर मन'[2] मोहै ।
सरवर 'निकट'[3] सखी चलि आई । मधु खेलत देखे सच पाई ॥३००॥
पहिले याकुं वचन 'भखाऊँ'[1] । कैसो चातुर 'सो इत'[2] पाऊँ ।
प्रेम असारत 'कुं सर सांधूं'[3] । पाछे मंत्र सकति करि 'बांधूं'[4] ॥३०१॥

---

[२६४] १. प्र० १ मिलिठ मित्र । २. प्र० ३ वही । ३. प्र० ३ जे सत्र । ४. प्र० ३ बांधिके ।

[२६५] १. प्र० ३ द्विज । २. प्र० ३ काम ।

[२६६] १. प्र० १ मा... । २. प्र० ३ वानी मन ।

[२६७] १. प्र० १ ले, प्र० ३ लेइ । २. प्र० ३ सज कीने ।

[२६८] १. प्र० ३ तिलक भाल (तुल० पूर्ववर्तीचरण) । २. प्र० १ मन । ३. प्र० ३. झलके । ४. प्र० १, २, ३, ४ पग नेवर कटि मेखल ।

[२६९] १. द्वि० १ करि गोरी । २. द्वि० १ इंद्र अपछरा मोरी । ३. प्र० ३ जा देषे मुनिजन ।

[३००] १. प्र० चाल तन । २. प्र० ३ जित चितवै तितही मन । ३. प्र० १ नीकली ।

[३०१] १. प्र० ३ वकाउं । २. प्र० ३ सोहीहुं । ३. प्र० ३ कर पर संधू । ४. प्र० ३ वंधूं ।

रोगी 'होय तो रोग बसि'[1] जंपे। वैद अयांन होय कित कंपे।
मधुकर जो रे मालती 'तजिहै'[2]। 'आक पलास कंटाई भजिहै'[3] ॥२०८॥

(दूहा सोरठा)

फल हु न आवै काज कुसुम कोउ 'फरसै नहीं'[1]।
'आकर'[2] आक 'अकाज'[3] मधुकर रीझै 'तास सूं'[4] ॥२०९॥

(मधु वाक्य)

आक कुसम यह जानि कै मधुकर बैठ्यो हेत।
मरण जानि उहि ढिग गयो सत्य वचन सुनि जेत ॥२१०॥

(जैतमाल वाक्य)

प्रथम स्याम फुनि लाल फल हू पत्र गँवाइ के।
केसू कुसम गुलाल अलि परसो तुम कवन गुन ॥२११॥

(मधु वाक्य)

केसू पावक जानि के मधुकर मरबो हेत।
जरबे कूं वेहि द्रुम गयो येही जान तू जेत ॥२१२॥

(जैतमाल वाक्य)

कंड्याई कांटे सघन ताको अति विस्वास।
मधुकर अति गुनवंत तूं सदा रहत तिह पास ॥२१३॥

(मधु वाक्य)

सर्प पिंजर सेज्या रची अलि वियोग के हेत।
कंड्याई मधुकर गयो सत्य वचन सुन जेत ॥२१४॥

(जैतमाल वाक्य)

आप स्वारथ कुं बन बन भटके। मन यों विरह न मनछा अटके।
रस लै अनत उड़त तिहां देखे। फुनि यह लता बढै जू सूके ॥२१५॥

---

[२०८] १. प्र० १ रोग सब लहो। २. प्र० १ तजीयै। ३. प्र० ३ में यह चरण छूटा हुआ है।

[२०९] १. प्र० १ कैसे सही। २. प्र० १, २ आलर। ३. प्र० ३ ज आक। ४. प्र० १ तार सूठ।

(मधु वाक्य)

तुम बैली मधुकर फिरि जग जानैं सब लेहु ।
यह पै दूरब प्रीत कूँ वन वन भटकैं देहु ॥२१६॥

(जैतमाल वाक्य)

चंदन आदि कौन मधु तो तन । तुम बैली भटकै सब बन बन ।
सांची बात मोहि समझायो । क्रूर कलावंत लौं फिरत गायो ॥२१७॥

(मधु वाक्य)

क्रूर कलावंत जो घर भूलैं । मधुकर सो फुनि यह गति डोलैं ।
पै यह अचरज लागे मेरे मन । लता भटकत फिरत केहि गुन ॥२१८॥

(जैतमाल वाक्य)

जैत सकुचि मन लज्जा पाई । मेरी बात मोहि पर आई ।
मैं मधु तोनूं सांची बूझी । तेरे जिय कछु और ही सूझी ॥२१९॥

(चौपई)

वनिता लता अरु पंडित नरा । 'इन कें'[1] सहज 'एक चित धरा'[2] ।
जो लुं एक न 'आलय'[3] ग्रहें । तो लुं भला न कोऊ कहे ॥२२०॥

(श्लोक)

वैडूर्य मणि माणिक्य हेमाश्रयं भूषणं ।
विनाश्रय न शोभंति पंडिता वनिता लता ॥२२१॥[1]

[२१०-२१९] ये समस्त छंद प्र० १, २, ३, ४ अर्थात् प्रथम शाखा की समस्त प्रतियों मे नहीं हैं, और इनके न रहने से छंद २०९ तथा ३२० मे परस्पर का संबंध नहीं रह जाता है, इन्हीं से उनकी संगति मिलती है, इसलिए ये छंद प्रथम शाखा की किसी आदि पूर्वजमे भूलसे छूटे हुए ज्ञात होते हैं। संभवतः आदर्श का एक पृष्ठ ही छूट गया होगा, जिन पर ये छद आते थे। ये छंद और शाखाओं की समस्त प्रतियो मे आते हैं, इसलिए प्रथम शाखा की प्रतियों का विकृति-संबंध ये छंद प्रमाणित करते हैं।

[२२०] १. प्र० १ इनकें। २. प्र० १. आई एक जरा, तृ० १. आनि कै धरा। ३. प्र० १. अस्टम, प्र० ३. आश्रम।

[२२१] १. यह छंद प्र० ३ में नहीं है।

(चोपई)

मधु कुं जनंम 'आपनो'[1] सूझै। मिस करि जेतमाल कुं बूझै।
मधुकर कौन मालती कैसी। उतपति मोहि सुनाओ 'जैसी'[2] ॥३२२॥

('जेतमाल'[1] वाक्य)

सुन मधु कथा कहुं तो 'आगल'[2]। मधुकर भ्रमर मालती पाडल।
उतपति 'भई'[3] 'तो आदि सुनावुं'[4]। पाछे कछु 'एक'[5] तो पै हुं पाऊं[6] ॥३२३॥
महादेव काम जब जार्यो। भसम अंगार छार करि डार्यो।
जारत अनंग देखि कै गोरी। अति आकुल बाकुल होइ दोरी ॥३२४॥

(दूहा)

संकर कोप अनंग दहो बिकल भई वर नार।
बामा कर लघु अंगुरी लीनुं निर्मल तुसार ॥३२५॥

(चोपई)

'जरि वरि काम भयो जग'[1] नाहर। भसम अंगार रहे 'उहि'[2] ठाहर।
पाडल भमर तास 'के'[3] कीने। करता की गति कोउ न चीने'[4] ॥३२६॥

(दूहा)

भसमी 'तो'[1] पाडल भई कोयला भया अंगार।
नाके 'ए'[2] मधुकर भए सो कारे एह 'प्रकार'[3] ॥३२७॥

(चोपई)

ढिग हो वृच्छ सेवंत्री केरो। सो अवतार एही मधु मेरो।
पाडल भमर 'आहि'[1] तुम दोऊ। 'विध'[2] के खेल न जाने कोऊ ॥३२८॥

---

[३२२] १. प्र० १ आपनु। २. प्र० ३ तेसी।

[३२३] १. प्र० १ मधू। २. प्र० ३ सुनमधु कथा कहुंतो आडल, द्वि० १ कथा कहत उपजे रसना जल। ३. प्र० १ होय। ४. द्वि० १ सोई सुन लीजे। ५. प्र० ३ हुं। ६. द्वि० १ मे चरण का पाठ है: मनसा वाचा कै चित दीजै।

[३२६] १. प्र० ३ जगत काम भइ जन्न। २. तृ० १ तिहां। ३. प्र० ३ कुं ४. प्र० ३ कोन ते चीनी।

[३२७] १. प्र० ३ ते। २. प्र० ३ इह। ३. प्र० ३ विचार।

[३२८] १. प्र० ३ इह। २. प्र० ३ बुध।

सेवंत्री जरत कछू एक बांची । दिन दोए प्रान 'रहे तन सांची'[1] ।
मधुकर प्रीत तहां उन पर 'खी'[2] । 'जरत'[3] मालती नयनइं निरषी ॥३३६॥
दिवस दूसरइं कीन्ही फेरी । किनइं सवद 'सेवंत्री'[1] टेरी ।[2]
मैं निरषी गत्ति सबै 'तिहारी'[3] । तुम सुं प्रीत करे तिहां गारी ॥३३७॥

(दूहा)

भए 'देव सो'[1] आन 'निरपै हो तुम तो नए'[2] ।
गई प्रीत 'पहचानि'[3] को मधुकर को मालती ॥३३८॥
सुख 'देखी'[1] की प्रीत ऐसी तो सब कोइ करे ।
वे फुनि 'न्यारे'[2] मीत' जीए'[3] जीवै 'मूए'[4] मरै ॥[5]३३६॥
'जरी'[1] मालती 'जोर'[2] मधुकर 'कुं'[3] भावै नही ।
दिन दोए 'रहो'[4] न सोग लोक लाज सबही तजी ॥३४०॥
जरिबो मरिबो 'कठिन'[1] है मधू मालती संग ।[2]
'जुग विवहार न करि सकै'[3] भसम चढावत अंग ॥३४१॥

(चोपई)

इहि बिधि वचन कहै 'है उनसे'[1] । पुनि सेवंत्री व्रिच्छ 'हु'[2] सूकै ।
सो हूँ आय जैत दुज वेई । मधु सोपे 'सगरो'[3] सुनि लेई ॥३४२॥

---

[३३६] १. प्र० ३ दिन दोय प्रान रही तन संची, द्वि० १ तातै कथा कहत सब सांची । २. यह अक्षर तथा परवर्ती चरण प्र० १ में छूटे हुए हैं । ३. तृ० १ जैत ।

[३३७] १. तृ० १ मालती । २. प्र० १ मे यह अर्द्धाली छूटी हुई है । ३. प्र० ३ तुमारी ।

[३३८] १. प्र० ३ विदेसी । २. प्र० ३ निरपे हो तुमतो नहीं, द्वि० १ मधु मूरति निरपे नयन । ३. प्र० ३ पेछाणा ।

[३३६] १. प्र० १ देखन । २. प्र० १ नारे । ३. प्र० ३ जीवत । ४. प्र० ३ मृत । ५. तृ० १ मे यह दोहा नहीं है ।

[३४०] १. प्र० १ जरती । २. प्र० १ जोग । ३. प्र० १ कै । ४. प्र० ३ गयो ।

[३४१] १. प्र० ३ कठण । २. तृ० १ में चरण है : वड नही वेली मही नही काहु कौ संग । ३. तृ० १ कोन कारन भमरो रटे ।

[३४२] १. प्र० १ सुनि आगै, प्र० ३ इह उपा । २. तृ० १ तन । ३. प्र० ३ सघरी ।
म० वार्ता ४ (११००–६३)

(मधु वाक्य)

सेवंत्री फूली बाग 'कहा'[1] जानै । फूली फूल कि पचासक ठानै ।
लोग बातें मोहि बात न सूझै । पर घर 'आनि'[2] परोसनि बूझै ॥३४३॥

(दूहा)

जरत मालती देखि मधुकर तो तब ही जरै ।
सो प्रतीति अब पेष सूए बिन कोऊ अवतरै ॥३४४॥

(चौपई)

सूए बिन कोइ सरग न देखै । सूए बिन अवतार न पेखै ।
सूए बिन 'कोउ प्रतीति न'[1] जानै । 'बिन प्रतीति कोइ बात न मानै'[2] ॥३४५॥

(जैतमाल वाक्य)

सेवंत्री 'जेति बात'[1] 'द्रिग'[2] दाषी । तितीक मैं 'तोहि आगमच'[3] भाषी ।
जो ए बचन झूठ करि गिनिये । तो 'साचे'[4] तेरे मुख तैं सुनिए ॥३४६॥

(मधु वाक्य)

मालती जरत मधुप जरि निवटै । फुनि वाके नव पल्लव प्रगटै ।
साखा ब्रच्छ पत्र भए तबही । मानुं दगध भये नहि कबही ॥[1]३४७॥
अलि के प्रान पवन संग रहै । मिले संग 'सुरग मारग चहै'[1] ।
देखी इहां प्रीत 'है'[2] कांची । 'मधुकर'[3] सुन्या मालती बाची ॥३४८॥
वन मैं सहज आपनै फूली । प्रीत 'पुरानी'[1] सो सब भूली ।
मधुकर प्रेम संपूरन 'दाषो'[2] । अंतरेख अपनो जिय 'राखो'[3] ॥३४९॥

---

[३४३] १. प्र० १ कहा । २. प्र० ३, तृ० १ कहा ।
[३४५] १. प्र० ३ परभव नही । २. तृ० १ प्रीत बिना कोउ कहा बषानै ।
[३४६] १. प्र० ३ जेतीयक । २. प्र० १ डिढ । ३. प्र० ३ आगम करि । ४. प्र० ३ साची । ५. तृ० १ में यह छंद नहीं है ।
[३४७] १. प्र० ३ तथा द्वि० १ में यह छंद नहीं है, किन्तु प्रसंग के लिये आवश्यक है, इसलिए छूटा लगता है ।
[३४८] १. प्र० १ सूर गमन मारग चहै, प्र० ३ संघी सग महमह, तृ० १ अंग जान कै चहैं । २. प्र० ३ भइ । ३. प्र० १ जरत मधुप ।
[३४९] १. तृ० १ पुरातन । २. द्वि० १ देष्यो । ३. द्वि० १ पेष्यो ।

किति एक दिवस वीते ग्रैसे करी। मालती वोहोरि 'सीत पावक'[1] जरी।
तिहां सेवंत्री कोक (काक) 'सुनायो'[2]। ग्रभ्यंतर को भेद न 'पायो'[3]॥३५०॥

मधुकर ग्रवर उड़त तिहां देखे। 'कवन ज सयानै ग्रंक करि लेखे'[1]।
ग्रैसे जांन होय 'जो'[2] पूरे। 'तिन वरि'[3] ग्रानि 'चिवावत मूरे'[4]॥३५१॥

(ग्रलि वाक्य दूहा)

सूरख प्रेम भुलाए बिन वूझे वातां करै।
वे मधुकर 'ये'[1] नाहि काक सुनावे जास तूं॥३५२॥

(चोपई)

ग्रलि जीव ग्रंतरेष होय वोलै। सुनि सेवंत्री 'चूकि हूं'[1] भूलै।
'कहत कहूं वर वोहोतक'[2] जोलुं। मालति प्राण ग्राय 'मिले'[3] तोलुं॥३५३॥

ग्रलि मालती मिले जीय जातैं। कीनी वोहत परस्पर वातैं।
जैतमाल सो समो सुनीजे। 'एक मन एक ग्रग्र चित दीजै'[1]॥[2]३५४॥

(दूहा सोरठा)

तो तन जरतो देखि मैं देही ऊपर दही।
'बिछुरन निमख न पेख सो एते दिन क्युं रहै'[1]॥३५५॥

तो 'मो'[1] पूरब नेह जानी पै वूझी नही।
तै कीनी गति तेह ज्युं नृप मानधाता मही॥३५६॥

---

[३५०] १. प्र० १ पावक मैं। २. प्र० ३ सुनाई। ३. प्र० ३ पाई।

[३५१] १. प्र० ३ कोन वसवे एव रस लेपे, द्वि० १ ताही मन महि संच करि पेख्यो, तृ० १ मन मौं प्रेम मालती होपै। २. प्र० ३ जिहा ३. प्र० ३ तो नगर, द्वि० तिहठा। ४. प्र० १ चावी वत मूंडी, प्र० ३ बतावे सूरे, द्वि० १ विवाहै मूरे।

[३५२] १. प्र० ३ वे।

[३५३] १ प्र० ३ चोकही। २. तृ० १ केतक उत्तर बोले। ३. १ मल।

[३५४] १. द्वि० १ झूठी वात न मन मों दीजै। २. प्र० ३ में यह छंद नहीं है।

[३५५] १. द्वि० १ प्रीत पुरातन पेष रटत तोहि ग्रोर न चढ्यो।

[३५६] १ प्र० ३ मांनुं।

(मालती वाक्य)

जो कछु जीय मैं खोट तो साखी संकर कहूँ।
कै तन रहै 'अखोट'[1] कै 'फरसै'[2] मधुमालती ॥३६५॥

(चोपई)

मो तन तुम 'सुधि'[1]'कारन'[2]प्रगटे। जानुं नहीं जो तुम जरि'निघटे'[3] ।[4]
'नव खंड'[5]सात'समुंद्र'[6]लुं भटकी। निस वासर कहुं 'नैक न अटकी'[7]॥३६६॥

अह पूरब 'खोज्यां'[1] दुख पावै। 'एऊ न कोऊ सुद्धि बतावै'[2]।
पंछी भमर आनि अति देखे। तुम बिन सून्य सबै करि लेखे ॥३६७॥

'ज्युं'[1]निसि 'उडिगन चंद'[2]बिहूनी। फुलवारी चंपक विन सूनी।
रिति बसंत'पिक'[3]बिन नही नीकी। बरषा रिति दामनी बिन फीकी ॥३६८॥

सैन सुभट 'घन पै ग्रप नाही'[1]। सरवर 'पंख न पंखी तिहां ही'[2]।
मणि 'धरी'[3] लाल हेम बिन सूनी। त्रिया नव जोबन कंत बिहूनी ॥३६९॥

मालती करुणा 'करत'[1] सुनावै। एकहुं अलि की सुद्धि न पावै।
अबहूँ निहचै प्राण गमाव(गमावुं)। 'पतिबिजोगकैसेपति'[2]पाव(पावुं) ॥३७०॥

रटति नाम 'श्री'[1] कृस्न हरी हर। 'आराधु (आराधो) संकर[2] नीके करि।
'मधुकर'[3] प्रीत हेत 'चित धारी'[4]। एह बचन करि देह 'प्रजारी'[5] ॥३७१॥

---

[३६५] १. प्र० ३ अखोट। २ प्र० १ परसै।

[३६६] १. प्र० १ संधि। २. प्र० ३ करण। ३. प्र० घटै, प्र० ३ निकटे। ४ द्वि० १ मे अर्द्धाली है : तो मोहि बचन गनत आमिथ्या। तो बिन जनम मोहि सब वृथ्या। ५. प्र० ३ वसत। ६. तृ० १ दीप। ७. प्र० १ नैक न अटकै, प्र० ३ नहि अटकी।

[३६७] १. प्र० ३ पोज्यां। २. प्र० ३ इ काहु सुद्दी न पइए।

[३६८] १. प्र० १ जू, प्र० ३ जो। २. प्र० १ चद गीगन। ३. प्र० १ पीव।

[३६९] १. प्र० ३ नृपती नहीं त्यांही। २. प्र० ३ सूनो पानी नाही, द्वि० १ कछू न पंकज ताही। ३. प्र० ३ घर।

[३७०] १. प्र० ३ करहि। २. प्र० ३ प्रीतम बिन कैसे अंग सुष।

[३७१] १. प्र० ३ मन। २. प्र० ३ आरहु संकट तुम। ३. प्र० ३ मधुकंकर। ४. प्र० ३ सुखकारी। ५. तृ० मझारी।

पवन प्रतीत प्रीत छिट रानी । 'दंपति मिले दिही तिहां'[1] साखी ।
गिरा कोई 'उपदेसन कारे'[2] । 'कोउ घटै न कोऊ बाढ़े'[3] ॥३७२॥

(सोरठा)

मालती ससो न प्रेम (प्रेमि ?) मधुकर से प्रीतम नहीं ।
कोऊ 'घटै न रोम'[1] मनसा वाचा कर्मना ॥३७३॥

पवन 'पंखी'[1] मधुमालती कोउ घटै न लेख ।
'मसि'[2] 'कागद गच घोलहर'[3] एह पटंतर पेख ॥३७४॥

(चौपई)

'प्रेम वचन सुनि कै भ्रम भागो'[1] । 'अलप जीए गगन मधि लागो'[2] ॥
'फुनि'[3] अवतार बनिक ग्रह लीनो । इहि प्रबंध 'केहि'[4] कारन कीनो ॥३७५॥

मालति 'जनम नृपति ग्रह बरिका'[1] । तुम तो भए साह 'घरि'[2] लरिका ।
तुम जाण्यो 'इह'[3] अंतर होई ।[4] मेरी सुद्धि न 'पावै'[5] कोई ॥३७६॥

राजा 'बनिक ब्याह कुं होए'[1] । इह बिपरीत तेरे जिय जोए ।[2]
असी तो 'मधु मन मैं'[3] बूझै । करता की गति 'कोइ न सूझै'[4] ॥३७७॥

---

[३७२] १. प्र० १ दपति मिलि देही (ढिही) तिहां, प्र० ३ दपति मिले भइ तिहां, द्वि० १ जैत बिना कोउ लहै न । २. द्वि० १ मो उपदेस बतायौ । ३. द्वि० १ सोइ दियौ पै हाथ न आयौ ।

[३७३] १. प्र० ३ भए न मेक ।

[३७४] १. प्र० ३ प्रीत । २. प्र० १ मीस, द्वि० १ सम । ३. प्र० ३ कागल घसि घोल करि, द्वि० १ कागद पाहन लिषी ।

[३७५] १. द्वि० १ प्रीत दृढ़ावन सुन भ्रम भागी । २. प्र० ३ अलप जिय लाज गगन मधि लागो, द्वि० १ मधु संकोच रहै जिय लागी । ३. प्र० ३ कुण । ४. प्र० ३ किण ।

[३७६] १. तृ० १ नृपति ग्रहे कुमारिका । २. प्र० ३ के । ३. प्र० १ आहा । ४. द्वि० १, तृ० १ में यहाँ और है : नृपति कुंवरि नृपती कूं बरिहै । ५. प्र० ३ जाणे ।

[३७७] १. प्र० १ बीना वाहे कीम होई, द्वि० १, तृ० १ बिना न व्याहै कोई । २. द्वि० १, तृ० १ मे यह चरण नहीं है । ३. प्र० ३ मन मैं नहीं । ४. प्र० १ कछु न चीनी ।

तुम तो 'आहि देव'[1] अवतारी । 'तातैं'[2] जाति 'करो क्युं न्यारी'[3] ।
मानिक[4] रंक हाथ जो 'चढै'[5] । 'कंचन'[6] बिनु कहीं 'अनत न जडै'[7] ॥३७८॥

देवन की उतपत्ति सुनाऊं । निंदा कहां आप मुख गाऊं ।
'एतो मोपै कहै'[1] न आवै । जैतमाल मधु कुं समझावै ॥३७९॥

(मधु वाक्य दूहा)

'सबै सयानप'[1] 'छंडि'[2] दे 'जैतमाल'[3] सुनि बैन ।
पूरवली पूरब 'कुं'[4] गई सो अब 'वासर'[5] रयणि ॥३८०॥

(चोपई)

पूरवली तुम सबै बिसारो । 'अब'[1] तो लादि गयो बिणजारो ।
तिथि बीती कोइ बिप्र न बूझै । तिन को जैत सयानप 'सूझै'[2] ॥[3]३८१॥

राजा मीत सुने नही 'कोई'[1] । तीनलोक मैं बूझो लोई ।
काहू करी न कोऊ करिहै । 'नृप की प्रीत न आगै सरिहै'[2] ॥३८२॥

एक त्रिया जात अरु नृप 'बंसी'[1] । एह नही प्रीत 'संपूरन'[2] कैसी ।
जैसी लता करेली करैं । 'न्यारी'[3] वोहोर बकाइन 'चढिहे (चढै)'[4] ॥३८३॥

---

[३७८] १. प्र० ३ दे आवहि । २. प्र० ३ उनकी । ३. प्र० १ करै कुण नारी । ४. प्र० २ में यहाँ 'राव' और है । ५. प्र० १ चार । ६. प्र० ३ कनक । ७. प्र० १ अंत न जार, प्र० ३ अंग न बढे ।

[३७९] १. प्र० ३ एतो मो कुं कहत, तृ० १ जैतमाल हेत ।

[३८०] १. तृ० १ स्यामपि सूझै । २. प्र० ३ छोड । ३. प्र० २ मधु मालती । ४. प्र० ३ सुं । ५. प्र० १ वीसरे, प्र० ३ वासो ।

[३८१] १. तृ० १ सो । २. प्र० १, २ बूझै (किन्तु यह पूर्ववर्ती चरण का तुक है) । ३. प्र० ३ में यह नहीं है, किन्तु परवर्ती छंद के लिए आवश्यक है, इस लिए भूल से छूटा लगता है ।

[३८२] १. प्र० ३ कबही । २. द्वि० १ नृप कुंवरी नृप कुंवर कूं वरिहै, तृ० तापर बहुत बकायण परै (तुल० ३८३ ४) ।

[३८३] १. प्र० ३ वेसी । २. प्र० ३ न पूरन । ३. प्र० ३ तापर । ४. प्र० ३ फिरे ।

(काव्य)

काके शौचं द्यूत कारेषु सत्यं
क्लीबे धैर्यं मद्ये तत्त्व चिन्ता ।
सर्पे क्षान्तिः स्त्रीषु कामोपशांतिः
राजा मित्रं केन दृष्टं श्रुतं वा ॥[1]३८४॥

(चौपई)

'काग न'[1] 'सुच्चा'[2] 'सुनो'[3] नहीं कोई । जुवां ठोरि 'तिहां'[4] सत्य न होई ।
'विह्वल'[5] कोई सूर न देख्यो । 'सुरापान कोइ तत्त्व न पेषो'[6] ॥३८५॥

सरप पांति बिन खाणु रहै । काठ अगिन बिन जारे दहै ।
पुनि त्रिय काम 'अपत'[1] 'कित'[2] होई । 'तैसे'[3] राजा मीत 'सुने'[4] नहीं कोई ॥[5]३८६॥

(दूहा सोरठा)

राजा मीत न होइ दूजो जो कोउ कहै ।
सब गत लखे न कोए राज 'दरसन'[1] वारिज 'कमल'[2] ॥३८७॥

(जैतमाल वाक्य चोपई)

तूं 'दच्छन लच्छन'[1] चित धारै । मालती तो अनुकूल विचारै ।
पूरब प्रीत जान(जानि)चित 'धरिए'[2] । नातर वनिक मित्र को 'करिए'[3] ॥३८८॥

---

[३८४] १. प्र० ३ मे यह छंद नहीं है, किन्तु परवर्ती छंद मे उसका भाषांतर है, इसलिये यह छंद भूल से छूटा लगता है ।

[३८५] १. तृ० १ कागश्वर । २. प्र० ३ तृ० १ सुच । ३. प्र० १ सुनु (= सुनो), प्र० ३ सुने । ४. प्र० ३ तिहां । ५. तृ० १ भागे दल । ६. प्रथम शाखा की समस्त प्रतियों में है : सूरापान कित चिंता पेषो, जो संस्कृत श्लोक से भिन्न है, तृ० १ सुरापान कित चिंता पेखे ।

[३८६] १. प्र० १ साज । २. प्र० ३ ज । ३. प्र० १ नैमे । ४. प्र० १ में यह शब्द नहीं है । ५. तृ० १ में छंद है : सरप्र खाय त्रिनषाए डरियै । त्रिया संग जन अपजस धरियै । राजा मित्र सुन्यो नहि कोई । जैतमाल सब पूछै लोइ ।

[३८७] १. प्र० ३ दसण । २. तृ० १ गहै ।

[३८८] १. प्र० ३ लछिन दसीन । २. प्र० ३ धरे । ३. प्र० ३ करे ।

(श्लोक)

न चार्थं न च सामर्थं वणिक मित्र कदाचन।
प्रज्वलितं वन केशानां अंगारोऽति च भस्मकर[1] ॥३८९॥

(चोपई)

'आरत'[1] भीर 'टरे'[2] नही कैसे। वनिक मित्र केरी गति जैसे।
जैसे जलै केस के भारे। भसमी होए न 'परे'[3] अंगारे ॥३९०॥

(मधुवाक्य)

तूं 'ए बात कौन पर'[1] कहै। पंनग तिहां न दीपग रहै।
राज काज की 'बात नयारी'[2]। 'को बूझे गूंगे की गारी'[3] ॥३९१॥
'सीखो जाए'[1] बात की कीली। ता पीछे तुम करो वकीली।
'देखी'[2] सुनी न कबहूं कीजे। अपने 'कुला क्रम'[3] चित दीजे ॥३९२॥

(श्लोक)

शस्त्रे शूराः रणे धीराः परस्पर विरोधिनः।
नही विप्राः राजयोग्याः भिक्षायोग्य पुनः पुनः ॥३९३॥

(चोपई)

'गधो रे चढ़ि'[1] रण 'कबहुं'[2] न लरे। परस्पर अति विग्रह करे।
स्वारथ त्रिष्ना अति घन 'बाढ़ी'[3]। 'आ थे'[4] भीष कपालै 'चाढ़ी'[5] ॥[6]३९४॥

---

[३८९] १. प्र० ३ मे यह छंद नहीं है, किंतु भाषांतर का बाद का छंद है, इसलिए यह छंद उसमे भूल से छूटा लगता है।

[३९०] १. तृ० १ अर्थ। २. तृ० १ सरै। ३. प्र० १ प्र।

[३९१] १. प्र० ३ कही बात एकन सु। २. प्र० ३ गति एक न बूझे (तुल० छद ३९५)। ३. प्र० ३ इन कुं भीष मांगवो सुझे (तुल० छंद ३९५)।

[३९२] १. तृ० १ पेहली सीष। २. तृ० १ कही। ३. प्र० १ कल क्रम, प्र० ३ कुल कर्म।

[३९४] १. प्र० ३ घर बाहिर। २. प्र० १ कबुह। ३. प्र० २ गाढी। ४. प्र० १ आप थे, प्र० ३ ताथे। ५. प्र० १ चाढै। ६. यह छंद प्र० ४, तृ० १ मे नहीं है।

तब परेच 'झांखित'[1] मुख देख्यो । 'अचक'[2] रूप 'नखसिख लुं पेख्यो'[3]।
उपमा 'कौन'[4] पटंतर 'कोहूं'[5] । सुरनर नाग 'त्रिया'[6] मन मोहूं ।।४०१।।
बदन कलानिधि रूपइ तरुनी । कवि को(उ)उपमा 'रूप'[1] न बरनी ।
ससि कला घटि घटि 'केतन'[2] वाढ़ै । सुख सोभा दिन दिन अति 'चाढ़ै'[3]।।४०२।।
वेणी 'मांग मध्य'[1] 'दई'[2] पाटी । मानुं सेस फुनि करवत काटी ।
तापर सीस फूल मणि धारी । मृगमद तिलक 'रसना'[3] दे(दई)कारी ।।४०३।
सुभग 'डुंह'[1] स्यामता सुहाई । 'कलम'[2] हाथ सरसती बनाई ।
कीधुं काम धनुक कर 'तूटे'[3] । चितवत 'ज्युं नावक सर'[4] 'छूटे'[5]।।४०४।।
नयन कम दल मधुकर 'वैठे'[1] । मृग खंजन आरन उर 'पैठे'[2] ।
फुनि विसाल राजैं द्रिग 'कोए'[3] । मानुं मीन माह जल 'धोए'[4] ।।४०५।।
'नासा कैसू कली बनाई'[1] । 'केहर नख'[2] 'मुख सूकै पाई'[3] ।
मुकता चार 'अलक ढिग सोहैं' ।[4] 'अंजन पर जैसे'[5] नागिन रोहै ।।४०६।।
अधर 'प्रवाली'[1] निरखत हारे । फुनि बिंवा पाके 'निरहारे'[2] ।
तामैं दसन मुसक(मुसकि)मन मोहै । 'निसि अँधियारी बीज सो कोहे[3] ।।४०७।।

---

[४०१] १. प्र० १ झंषी । २. प्र० ३ अछे । ३. द्वि० १, तृ० १ कलानिधि ।
४. प्र० ३ केहु । ५. प्र० १, २ कहू, प्र० ३ कोउं । ६. प्र० ३ तिहुं ।

[४०२] १. प्र० ३ ओर । २. प्र० १ तन । ३. प्र० ३ काढे ;

[४०३] १ प्र० ३ मध्य मंद । २. प्र० १ दे । ३. प्र० १ रस । ४. तृ० १ उदकारी ।

[४०४] १. प्र० ३ सोह । २. प्र० ३ कलमां । ३. प्र० १ तूतै, प्र० ३ तुटी ।
४. प्र० १ वनीक्ष नवरस प्र० ३ ज्यु नव के सब । ५. प्र० १, ३ छुटी ।

[४०५] १. प्र० १ वैठो । २. प्र० १ पैठो । ३. प्र० १ कोई । ४. प्र० १ धोई ।

[४०६] १. प्र० १ में यह चरण छूटा हुआ है । २. तृ० १ केशर पै नप । ३. प्र० ३ के सु सुख पाई, तृ० १ की सुल सूनाइ । ४. प्र० १, २ अलंक्रित सोहैं, प्र० ३ अली की त सोहैं, तृ० १ अब तिहां मोहै । ५. प्र० ३ ता ऊपर फुनि ।

[४०७] १. प्र० १ प्रवाकै । २. प्र० ३ परिवारे । ३. द्वि० विज की मनो रक्त घन कोहै; तृ० १ में यह चरण नहीं है । ४. प्र० ३ में अर्द्धाली है :-
निस पदित पातसि सोहे । देपत मुनिजन के मन मोहे ।

नाभी 'वल्ली'[1] 'दाडिक वटी'[2] जैसी । फुनि त्रिवली सजैहत (?)कैसी ।[3]
पैड़ी काम चढण कूं कीन्ही । कै विधि आनि अंगुरी दीन्ही ॥४१४॥
अंगी कटि किधुं केहर ढव ही । मानुं तूट परै जिन अब हीं ।
तापर 'छुद्र'[1] वंटिका वधी । मानुं विधि 'तुच्छ जानिकै'[2] संधी ॥४१५॥
कनक खंभ कदली 'जंघ'[1] सोहैं । 'पाधरि'[2] काम तरकस त्यों हैं ।
किती एक कहूं 'बहुरि छवि'[3]तैसी । ग्रैंडी 'इंद्रायन'[4] फल जैसी ॥४१६॥
राजहिं चरण कंवल रवि वंसी[1] । गज मराल केरी गति विहंसी ।
'नूपर रवहिं'[2] सुरत के सूरे । मानुं काम दूत हैं पूरे ॥[3]४१७॥

(दूहा सोरठा)

'द्वादस'[1] अभरण अंग सजि फुनि सिंगार नवसात ।
उलटी सोभा 'उनकुं'[2] भई देखो 'धौं'[3] इह बात ॥४१८॥

(दूहा)

काठ बनाए सिंगारीय सो फुनि सोभा 'होए'[1] ।
बिना भूषन तन राजही साची 'सोभा सोए'[2] ॥४१६॥

(चोपई)

मालती विन भूषन तन सोहै । सोभा 'साज देखि सुर'[1] मोहै ।
तीन लोक 'मैं भई न कोई'[2] । 'विधि बनाय कलसा सी'[3]'धोई'[4]॥४२०॥

---

[४१४] १. द्वि० १ कूप । २. तृ० १ दीहुम फल । ३. प्र० ३ मे यह अर्द्धाली नहीं है प्रसंग में आवश्यक है, इसलिए भूल से छूटी हुई लगती है ।

[४१५] १. प्र० ३ छिद्र । २. तृ० १ सुजान के ।

[४१६] १. प्र० ३ जुग । २. प्र० ३ पीधरि । ३. प्र० ३ काम तरे जुग मोहे द्वि० १ जान पंचसर मोहै । ३. प्र० १ छव्या । ४. प्र० १ चंद्राएण ।

[४१७] १. प्र० १ छवी वंसी, प्र० ३ रविवेसी । २. प्र० १ उनव रवही, प्र० ३ नूपर रचे, तृ० १ नेउर रवहिं । ३. प्र० १ में यह छद नहीं है ।

[४१८] १. प्र० ३ षटदस । २. प्र० ३ वाकुं । ३. प्र० १ मधु ।

[४१६] १. तृ० १ देह । २. तृ० १ उपमा तेह ।

[४२०] १. प्र० १ सीय देसु रा, तृ० १ देपत कामी मन । २. प्र० १ मैं भई न कोइ, प्र० ३ भइ कहुं न मोहे, तृ० १ हुई न होई । ३. तृ० १ बहु विधना ऐसी कर । ४. प्र० १ धोई, प्र० ३ धोहे । ५. द्वि० १ में

(नेतमाल वाक्य दूहा)

पट रिति बारा मास लुं चात्रक 'मंद'[1] पियास ।
स्वाति बुंद 'पाडक करे तो रे पुकारे कास'[2] ॥[3]४२१॥

(सोरठा)

सुणो सयाने लोग हूं तोसुं ऐसी 'कहूं'[1] ।
मांगे मिलै न दोण एक मोती दूजी मालती ॥४२२॥
'ज्युं दधि मंथन'[1] होय एह गति मन की बुझिए ।
वोहोर न जामे सोय माखन तक्र मिलाइये ॥४२३॥

(श्लोक)

अजा युद्धं 'मुनि श्राप'[1] दंपति कलहमेव च ।
चत्वारो विलभीयं याति प्रभाते मेव डंबरे ॥४२४॥

अजाजुध ते चोट न 'परही'[1] । 'मुनि के सरापि'[2] 'डरभ कित चरही'[3]।
दंपति कलह निसा नहि 'न्यारे'[4] । बरपै नही प्रात घन वारे ॥४२५॥

नीरस वचन तुम सुख उच्चरहीं । सुनत वचन मालती अब मरही ।
सवही सयानप जेहे तेरो । मधु एह बचन सत्य सुनि मेरो ॥४२६॥

(मधुवाक्य)

ऐसे वचन 'नही'[1] चित धरिहूं । 'फुनि कवहूं विभचार न करिहूं'[2] ।
'जीय तैं सत्य न तजिहूं मेरौ । करिहै जैत कहां लुं सेरो'[3] ॥[4]४२७॥

अर्द्धाली का पाठ है : वस चतुर्दश लच्छन पूरी । पूरन कला सकल विधि सूरी ।

[४२१] १. तृ० १ मरे । २. द्वि० १ बिन सुख नहीं रटत सदा मधु आस । ३. प्र० ३ मे यह छंद नहीं है ।

[४२२] १. प्र० ३ कही ।

[४२३] १. प्र० १ जो दध्या मथन, प्र० ३ दधि मांखन ।

[४२४] १. प्र० १ मना अपि, प्र० ३ जटा श्राकं ।

[४२५] १. प्र० ३ परहे । २. प्र० १ मनि के सराप, तृ० १ द्विज के सराप । ३. प्र० ३ दंभ अती करहे । ४. प्र० १ न्यरितता ।

[४२७] प्र० ३ जोय । २. द्वि० १ देह विदा यह कवहुं न करिहूं । ३. प्र० ३ १. मे अर्द्धाली है: सबे सयानप जेहे तेरे । मधु ए सत्य वचन सुनि मेरो । ४. प्र० ३ में यह छंद ४२८ की प्रथम अर्द्धाली के बाद आता है ।

जैत माल मन मध्य विचारे। 'वात कहत ये'[1] कवहूं न हारे।
झगरत ही 'सगरो'[2] दिन जैहै। पाछै 'मंत्र'[3] काज 'काहा'[4] करिहै ।।४२८।।

जिन मंत्र 'ते'[1] तरवर सूकै। फुनि सूके ते 'पल्लव'[2] मूकै।[3]
माते कुंजर मद जो 'उतारूं'[4]। सोई 'इन वरियां क्युं'[5] न 'संभारूं'[6]।।[7]४२९।।

मधु चरित्र ए निरखि 'निहारी'[1]। पढ़ि कैं 'मंत्र'[2] मोहिनी डारी।
वसि कीनो 'अरु'[3] बात लगायो। 'फुनि थल आगै उतर बतायो'[4]।।४३०।।

(जैतमाल वाक्य)

मधु तैं कहां सो मेरे मनमानी। 'बीभचार'[1] दूसन ए ठानी।[2]
देवन मैं बीती सो कोजे। 'मेरो बचन सत्य सुनि लीजे'[3] ।।४३१।।

उषा अनिरुद्ध भई है ज्यूंही। 'गंध्रप'[1] ब्याह करो तुम त्यूंही।
पूरब नेह ग्रेह चित दीजें। इन बातन कुं बिलंब न कीजै ।।[2]४३२।।

(मधु वाक्य)

पूरबली गति कोइ न जानै। अब तो नृपत 'वनिक की'[1] ठानै।
लरक बुद्धि जो 'मन'[2] में धरिये। इन वातैं नाही 'विस्तरियै'[3] ।।४३३।।

---

[४२८] १. प्र० १ वितैहै जो। २. प्र० ३ सघरो। ३. प्र० १ मीत्र। ४. प्र० ३ कित।

[४२९] १. प्र० १ भी। २. प्र० ३ तन जीम। ३. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है : जिन मंत्रन सरिता सर सूके। पुनि संकेत रूप ले टूके। तृ० मे है : जिन मंत्रन चलिता जल चूकै। सूका तरुवर पल्लव मूके। ४. प्र० ३ उतारे। ५. प्र० १ व को। ६. प्र० ३ संभारे। ७. तृ० १ में चरण का पाठ है : सोई बीर हूं अबही हंकारूं।

[४३०] १. प्र० १ निहारै। २. प्र० १ मीत्र। ३. प्र० १ डर। ४. द्वि० १ तौ लौं मंत्र और पढि धायो।

[४३१] १. प्र० ३ विन विचार। २. द्वि० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : कछू एक मधु मानत नाही। कबहू उतर देत कछु नाहीं। ३. द्वि० १ छांडि सियानप वचन चित दीजै।

[४३२] १. प्र० ३. कंद्रप। २. यह छंद प्र० ४, तृ० १ में नहीं है।

[४३३] १. प्र० १ कुं। २. प्र० ३ जीअ। ३. तृ० १ मे यह चरण नहीं है।

(जैतमाल वाक्य दूहा)

षट रिति बारा मास लुं चातक 'मंद'[1] पियास ।
स्वाति बुंद 'पावक भरै तो पै पुकारै कास'[2] ॥[3]४२१॥

(सोरठा)

तूको सयाने लोग हुं तोसुं केती 'कहूं'[1] ।
गांठे मिलैं न दोए एक लोही दूजी मालती ॥४२२॥
'ज्युं दधि मंथन'[1] होय एह गति मन की बूझिए ।
बोहोर न जामै सोय माखन तक्र मिलाइयें ॥४२३॥

(श्लोक)

अजा युद्धं 'मुनि आपं'[1] दंपति कलहमेव च ।
चत्वारो विलभीयं याति प्रभाते मेघ डंबरे ॥४२४॥

अजाजूध तें चोट न 'परही'[1] । 'मुनि के सरापि'[2]'डरभ कित चरही'[3]।
दंपति कलह निसा नहि 'न्यारे'[4] । वरषैं नही प्रात घन वारे ॥४२५॥

नीरस वचन तुम मुख उच्चरहीं । सुनत वचन मालती अब मरही ।
सबही सयानप जैहै तेरो । मधु एह वचन सत्य सुनि मेरो ॥४२६॥

(मधुवाक्य)

अैसे वचन 'नही'[1] चित धरिहूं । 'फुनि कबहूं विभचार न करिहूं'[2] ।
'जीय तैं सत्य न तजिहूं मेरौ । करिहै जैत कहां लुं सेरो'[3] ॥[4]४२७॥

अर्द्धाली का पाठ है : बस चतुर्दश लच्छन पूरी । पूरन कला सकल विधि सूरी ।

[४२१] १. तृ० १ मरे । २. द्वि० १ विन मुख नहीं रटत सदा मधु आस । ३. प्र० ३ मे यह छंद नहीं है ।

[४२२] १. प्र० ३ कही ।

[४२३] १. प्र० १ जो दध्या मथन, प्र० ३ दधि मांखन ।

[४२४] १. प्र० १ मना अपि, प्र० ३ जटा आर्कं ।

[४२५] १. प्र० ३ परहे । २. प्र० १ मनि के सराप, तृ० १ द्विज के सराप । ३. प्र० ३ दंभ अती करहे । ४. प्र० १ न्यरितता ।

[४२७] प्र० ३ जोय । २. द्वि० १ देह विदा यह कबहुं न करिहूं । ३. प्र० ३ १. में अर्द्धालीहैः सबे सयानप जेहे तेरे । मधु ए सत्य बचन सुनि मेरो । ४. प्र० ३ में यह छंद ४२८ की प्रथम अर्द्धाली के बाद आता है ।

जैत माल मन मध्य विचारै। 'वात कहत ये'[1] कबहूं न हारै।
झगरत ही 'सगरो'[2] दिन जैहै। पाछै 'मंत्र'[3] काज 'काहा'[4] करिहै ।।४२८।।

जिन मंत्र 'ते'[1] तरवर सूकै। फुनि सूके ते 'पल्लव'[2] मूकै।[3]
माते कुंजर मद जो 'उतारूं'[4]। सोई 'इन बरियां क्युं'[5] न 'संभारूं'[6]।।[7]४२९।।

मधु चरित्र ए निरखि 'निहारी'[1]। पढ़ि कै 'मंत्र'[2] मोहिनी डारी।
बसि कीनो 'अरु'[3] बात लगायो। 'फुनि थल आगै उतर बतायो'[4]।।४३०।।

(जैतमाल वाक्य)

मधु तैं कहां सो मेरे मनमानी। 'वीभचार'[1] दूसन ए ठानी।[2]
देवन मैं बीती सो कीजे। 'मेरो वचन सत्य सुनि लीजे'[3] ।।४३१।।

उषा अनिरुद्ध भई है ज्यूंही। 'गंध्रप'[1] व्याह करो तुम त्यूंही।
पूरब नेह ग्रेह चित दीजै। इन बातन कुं बिलंव न कीजै ।।[2]४३२।।

(मधु वाक्य)

पूरबली गति कोइ न जानै। अब तो नृपत 'वनिक की'[1] ठानै।
लरक बुद्धि जो 'मन'[2] में धरिये। इन बातैं नाही 'विस्तरियै'[3] ।।४३३।।

---

[४२८] १. प्र० १ वितैहै जो। २. प्र० ३ सघरो। ३. प्र० १ मीत्र। ४. प्र० ३ कित।

[४२९] १. प्र० १ भी। २. प्र० ३ तन जीम। ३. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है: जिन मंत्रन सरिता सर सूके। पुनि संकेत रूप ले टूके। तृ० मे है: जिन मंत्रन चलिता जल चूकै। सूका तरुवर पल्लव मूके। ४. प्र० ३ उतारे। ५. प्र० १ व को। ६. प्र० ३ संभारे। ७. तृ० १ में चरण का पाठ है: सोई बीर हू अवही हंकारूं।

[४३०] १. प्र० १ निहारै। २. प्र० १ मीत्र। ३. प्र० १ डर। ४. द्वि० १ तौ लौं मंत्र और पढि धायो।

[४३१] १. प्र० ३ विन विचार। २. द्वि० १ मे अर्द्धाली का पाठ है: कछू एक मधु मानत नाही। कबहू उतर देत कछु नाहीं। ३. द्वि० १ छांडि सियानप वचन चित दीजै।

[४३२] १. प्र० ३. कंद्रप। २. यह छंद प्र० ४, तृ० १ में नहीं है।

[४३३] १. प्र० १ कुं। २. प्र० ३ जीअ। ३. तृ० १ में यह चरण नहीं है।

सुनत राम् [illegible] गुरु मैं [illegible] । [illegible] परि [illegible] ।
बिगरि गये तो 'मर्यादा'¹ धरि है । मान दुर्जोधि की गति 'धरिहौ'²॥४३४॥

([illegible])

ऐसें वचन 'क्रोध करि'¹ भाखे । 'जो तु कहे न मोहि भावे'² ।
[illegible] 'जोगी'³ [illegible] । [illegible] 'कवन तें'⁴ [illegible] ॥४३५॥

जनम 'ही'¹ सो मन 'जनम'² [illegible] । भागो भीम न कौन करै ।
[illegible] 'तिन'³ [illegible] । [illegible] कोइ न 'हारै'³॥४३६॥

मधु कौं 'पान' [illegible] । उतर [illegible] करि दीनो ।
निरखि मालती रूप 'लोभानो'² । तिन दर्शन पाये विक मनु(मानो)³॥४३७॥

नर खग रूप [illegible] । लागै 'जनम तें जानि'¹ उचारैं ।
करता त्रिया ठाकुर सब धारैं । 'गरब करें सो पूरब'² हारैं ॥४३८॥

जे जे बात जैन उचारी । 'मधु सोई सुनि के चित धरही'¹ ।
कीनुं 'लरसु'² दुजो के साकर । 'फुनि जो(ज्युं)बाजीगर को'³ साकर ॥⁴४३९॥

लीनुं लगन 'बेद तुल ज्युंही'¹ । परसे पानि परस्पर त्युंही ।
कर कंकण संगरा गहि बांधो । तुठो नेह 'परसपर'² बांधो ॥४४०॥

---

[४३४] १. प्र० १ बसीठ । २. तृ० १ में चरण का पाठ है : बिगर परे बसिठ कहा करिहै । ३. प्र० २ धरहो, तृ० १ मरिहै ।

[४३५] १. प्र० ३ कोप करि । २. प्र० २ जे कही ते नो मोही भावे । ३. प्र० १ जान । ४. तृ० १ कवन तें ।

[४३६] १. द्वि० १ ही । २. प्र० जनम । ३. तृ० ३ हारे ।

[४३७] १. प्र० ३ बांधि । २. प्र० १ लोभाणी । ३. तृ० १ मे अर्द्धाली है : एक मेरे मन लज्या होइ । जग मां भलो ना कहे कोइ ।

[४३८] १. प्र० ३ जनकूं जनम । २. प्र० ३. गरब करे सो पूरब, द्वि० १ अतहि आइ त्रिया यै ।

[४३९] १. प्र० १ मे यह चरण दुहराया हुआ है । २. प्र० १ लरमु । ३. प्र० ३ ज्युं वसि होय जोगी के । ४. द्वि० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : मधु बस कीन्हो द्विज की बारी । मालति काज सकल विधि सारी ।

[४४०] १. प्र० ३ बेध टाल ज्युंही । २. प्र० ३ बहुरि फिरि ।

रचे कलस ज्युं अंबुज केरा। मधु मालती कराया फेरा।
मंगलाचार जैत उच्चरही। 'सुर निरखैं तिहां अति सुख'[1] धरहीं ॥४४१॥

(दूहा)

'विचि व्याही'[1] मधु मालती 'सुर निरखैं सुख होए'[2]।
फुनि बिग्रह बाढै कथा चित दे सुनियो सोए ॥४४२॥

(चोपई)

राम सरोवर के ढिग बारी। बिलसैं सुख मधुमालती नारी।
लाली एक दुन्यो तिहां रहै। 'सगली'[1] बात राय सुं कहै ॥४४३॥
मंत्री सुत अरु राज कंवारी। दिवस च्यारि के 'तजी न बारी'[1]।
'करैं किलोल'[2] कछु संकन धरैं। मो पै कछु एक कहत न परैं ॥४४४॥
नृप दुख पाइ महल मैं आये। कनकमाल त्रिय बेग बुलाए।
'सुनी'[1] हो बात कन्या क्रम काढ्यो। मंत्री सुत सुं नेह ज बाढो ॥४४५॥
कन्या उदर पडो जिन कोई। सुख चाहत 'तिहां दुख जै'[1] होई।
नीके कहै तो ग्रिह ग्रथ खोवै।[2] बिगरै तो दोऊ कुल रोवै ॥४४६॥
'कहै'[1] बेग पायक 'हंकारो'[2]। मधुमालती दोउन कुं मारो।
'एक'[3] कहत सौ एक अनुसरै।[4] तोलुं कनकमाल काहा करै ॥[5]४४७॥
चेरी एक 'उहि बेर'[1] बुलाई। पठई 'बेग राम सर'[2] जाई।
मधु मालती दोउन 'कूं'[3] कहियो। तजियो देस उहि ठोर न रहियो ॥४४८॥

---

[४४१] १. प्र० ३ सूरवीर तिहां धीरज।

[४४२] १ प्र० ३ रच्यो व्याह, द्वि० १ बना व्याह। २. द्वि० १ जैतमाल जस होइ, तृ० १ धवल मंगल सुख होई।

[४४३] १. प्र० ३ सघली।

[४४४] १. प्र० ३ निजतन कारी। २. प्र० ३ करे केल।

[४४५] १. प्र० ३ सुनो।

[४४६] १. प्र० ३ ताकुं दुष। २. तृ० १ नारि रहै तो सबइ बंधावै।

[४४७] १. प्र० ३ कहो। २. प्र० ३ हकारो। ३. प्र० ३ इह। ४. द्वि० १ में चरण का पाठ है : यह विचार राय चित धरै। ५. तृ० १ में अर्द्धाली है : एते कहत नीर भरि आयो। कन्या जनम कौन सुख पायो।

[४४८] १. प्र० १ उही ऐक बेग, प्र० ३ एक उहां बेर। २. प्र० ३ राम सरोवर। ३. प्र० ३ सू।

नृपत दूत पठयो तुम तारण । हुं 'सुष देहुं पुन भीष कों'[1] कारण ।
सुनि त मालती अति बिलखानी । मधु के कंठ दोरि लपटानी ॥४४६॥

(मालती वाक्य)

प्रीतम बचन श्रवन सुनि लीजे । 'इह'[1] ठाहर रहि नीर न पीजे ।[2]
चडी (चढिय) तुरग अब बिलंब न कीजें। जाइये तिहां दिना दस जीजें ॥४५०॥

(श्लोक)

यत्र जलं तत्र तीर्थं यत्र 'अन्नं'[1] तत्र देवता ।
यत्र भार्या गृहं तत्र 'स्वदेशो'[2] यत्र जीवनं ॥४५१॥

(सोरठा)

मालती धर 'जीय'[1] धीर सोहि निलोल करता दई ।
अजहूं 'परे न'[2] भीर ज्युं मलयंद सुत सुं भई ॥४५२॥

(चोपई)

बोहोर मालती बूझै ऐसी । मलयंद सुत सुं भई सो कैसी ।
'जो'[1] 'प्रसंग भयो समीयो'[2] 'जैसी'[3] । मधु 'सु'[4] कहो बात है कैसी ॥४५३॥

(मधु वाक्य)

चंपावती नृपति मलयंद । ताको 'कंवर'[1] नाम जसु चंद ।
वरस बीस बाईस मैं सोई । तास पटंतर अवर न कोई ॥४५४॥
'जास'[1]मंत्रि ग्रह कन्या'सुंदरि'[2] । वरस'अठारह'[3]माहि 'पुलंदर(पुलंदरि)'[4] ।
रूप रेखा नाम तसु सोहै । जां देखे सुर नर मन मोहै ॥४५५॥

---

[४४६] १. प्र० १ सुष देह भीह हाकै ।

[४५०] १. प्र० ३ इह । २. तृ० १ में चरण है: एही ठोर को नाम न लीजै ।

[४५१] १. प्र० ३ अग्नि । २. प्र० ३ सुदेसे ।

[४५२] १. प्र० ३ मन । २. प्र० ३ न परिहै ।

[४५३] १. प्र० १ जे । २. प्र० १ समीयो भयो बात कहो । ३. प्र० ३ नैसे । ४. प्र० ३ सुनाभ ।

[४५४] १. प्र० ३ कुमर ।

[४५५] १. प्र० ३ तास । २. द्वि० १ अनवरी । ३. द्वि० १ चतुर्दश । ४. प्र० ३ पुरंदर ।

पुर समीप जिहां सुंदर वारी । 'पोहोप'[1] सुगंध जिहां सुखकारी ।
कुंवरी सयल करण तिहां आवै । जाई 'जूई'[2] कुंज बणावै ॥[3]४५६॥
तिहां कहुं चंद कुंवर सुनि पाई । काम 'लालच मनसा हो आई'[1] ।
फेरी च्यारि बाग मैं करे । रूपरेख कारण मन धरे ॥४५७॥
मालन एक 'डोकरी'[1] रहै । ता 'सुं'[2] चंद कुंवर 'युं'[3] कहै ।
कुंज 'कोठरी'[4] करि इहां नीकी । 'फूली'[5] लता जाइ जूही की ॥४५८॥
नीकी ठोर निरषि सुख 'पैहुं'[1] । तोकुं उचित द्रव्या 'बोहु'[2] देहुं ।[3]
एइ वचन कहि 'मिंदर'[4] आयो । कहो सो मालनी तुरत वणायो ॥४५६॥
रूपरेख कुं घर न सुहाई । परे 'दो पोहरे'[1] बाग मैं जाई ।
निरषि 'कुंज'[2] नयन सुख 'पाए'[3] । रूपरेख जिय भरम भुलाए ॥४६०॥
जान्यो मालती 'मोहि'[1] बुलाई । सखि इन'छांडि'[2]आप तिहां आई ।
मालती चंद कुमर कुं जानै । रूपरेख कुं नाहि पीछानै ॥४६१॥
जो लुं चंद कुमर तिहां आयो । जुगल परसपर दरसन पायो ।
देषो धूं करता की करनी । निरषत 'गिरे'[1] विकल होय धरनी ॥४६२॥
मालती मन मैं सोच अति करे । संकै 'सीत'[1] भए दोउ 'परे'[2] ।
पीपर बांटन वु 'ग्रह[3] दौरी । भयो प्रसंग इहां कछु औरी ॥४६३॥
बपु संभार दोउ उठ बैठै । मानुं 'मैन'[1] बान उर पैठै ।
कुमरी 'चित्त'[2] चमक मुसकानी । चंद कुंवर सब जिय की जानी ॥४६४॥

---

[४५६] १. तृ० १ परमल । २. तृ० १ कुछ कहे । ३. यह छंद प्र० ३ में नहीं है, किन्तु प्रसंग में आवश्यक है, इसलिए छूटा लगता है ।

[४५७] १. प्र० ३ लालसा मनह जगाई ।

[४५८] १. द्वि० १ सुघर तिहां । २. प्र० ३ कूं । ३. तृ० २ एम । ४. प्र० १ कटोरी । ५. प्र० ३ फुनि ।

[४५९] १. तृ० १. पाऊं । २. प्र० ३ बहु । ३. तृ० १ में चरण का पाठ है । मालत तोहि सिर पचि पहिराऊं । ४. प्र० १ मीदर, प्र० ३ मंदिर ।

[४६०] १. प्र० १ दोहो परै, प्र० ३ दोपहरां । २. प्र० १ कुंद । ३. प्र० ३ पावे ।

[४६१] १ प्र० ३ वेग । २. प्र० ३ छोरा ।

[४६२] १. प्र० ३ गिरी ।

[४६३] १. प्र० १ सीस । २. प्र० ३ मरे । ३. प्र० ३ ग्रह कुं ।

[४६४] १. प्र० ३ मीन । २. प्र० १ चेत ।

गही नांद 'अंक'[1] उर 'फरसी'[2]। मानुं छूट गई काम करसी।
तन मन ग्रान भए एक दोऊ। कहिए कौन भांत सुं 'सोऊ'[3] ॥४६५॥
'बांधी'[1] सहंटि दोउ एक ठिकाणे।[2] तीजो वान न कोऊ जाणै।
मधि रवणि सनियो 'जिहां'[3] होय। बांधे वचन मिलें तिहां दोय ॥४६६॥
एक दिवस 'वाटिका मंझारु'[1]। रूपरेख अरु चंद 'कुमारु'[2]।
कुसम सेझ रचि 'बैसे'[3] 'दोई'[4]। फुनि अंछा काम की 'होई'[5] ॥४६७॥
रचे अंग सुगंध सुवासन। 'रति सुख सुरत मिले सुख आसन'[1]।
'वह'[2] वरिया एक नाहर आयो। रूपरेखा डरि सबद सुनायो ॥४६८॥
तजो सोहि तुम उठि 'क्युं न'[1] 'भाजे'[2]। यों नाहर निरख्यो'[3] मुंह 'आगें'[4]।
चित दे सुणो 'हिमत की'[5] साखी। चंद कुंवर जैसे द्रढ राखी ॥४६९॥
त्रिया आसन गह राषो[1] 'अैसे'[1]। कर कवाण कंवर गही 'तैसे'[2]।
'तबक'[3] 'बाव ने मुक्ख'[4] पसार्यो। देइ कसीस 'सीस सुं'[5] मार्यो ॥४७०॥
फूटो वाण जाय तरु अटक्यो। 'मानुं'[1] प्राण 'सींव ली(लिय) छुटक्यो'[2]।
दई कुवाण हाथ तैं डारी। कीधो सेज रमण 'रसकारी'[3] ॥४७१॥
मन मैं कछु न संका कीनी। करना हिम्मत सपूरन दीनी।
'अैसे'[1] कोऊ धीरज धरिहै। एक बार 'तासुं'[2] दई डरिहै ॥४७२॥

---

[४६५] १. प्र० ३ अरु अंग। २. प्र० १ परसी। ३. प्र० १ जोऊं।

[४६६] १. प्र० ३ वही। द्वि० १ मे चरण का पाठ है: प्रगट्यो मैन अधिक सुष माने। २. प्र० १ तीहा।

[४६७] १. प्र० १ वारी के मझारी। २. प्र० १ कुवारी। ३. प्र० १ वैठे। ४. प्र० १, ३ दोऊ। ५. प्र० ३ भइ सोऊ। ६. तृ० १ मे चरण है: इच्छा फरी काम की दोई।

[४६८] १. प्र० १ रीत्यं सूष सुरत्य पलई आसन। २. प्र० ३ उन।

[४६९] १. प्र० ३ कें। २. प्र० १, ३ भाजो। ३. प्र० ३ उह नाहर निरखो, तृ० १ सिंघ एक देखे। ४. प्र० १ आगल, प्र० ३ आगों। ५. प्र० १ हम ताछी।

[४७०] १. प्र० ३ राषी ऐसी। २. प्र० ३ तैसी। ३. प्र० ३ पटकि। ४. प्र० १ बाघ त मोह। ५. तृ० १ वेग से।

[४७१] १. तृ० १ सिंव को। २. प्र० ३, तृ० १ संग लीये सटक्यो। ३. प्र० ३ रस नारी, तृ० १ सुषकारी।

[४७२] १. प्र० १ जैसे। २. प्र० ३ ताथे।

(श्लोक)

उद्यमं साहसं धैर्यं बलं बुद्धि पराक्रमं ।
षडेते 'यत्र तिष्ठंति'[1] 'तस्य देवो'[2] पि शंकते ॥४७३॥

(मालती वाक्य-चोपई)

कवहुंक हीमति कोऊ धरही ।[1] तो फुनि पांच सात सुं लरही ।
'नृप सुं'[2] झूझ कहां लों कीजे । मधु 'मेरी'[3] बिनती सुण लीजे ॥४७४॥
तैं गिलोल खेलन कुं धारी । परिहै झूझ इहां अब भारी ।
विन आवध तूं 'क्युं'[1] करि लरिहै । 'हाहा देव'[2] कवन गति करिहै ॥४७५॥
हूं पापनी इतनो नही 'वूझी'[1] । मधु कुं कारन पहली[2] 'सूझी' ।[3]
श्री हर आयकैं अगहीं उबारै[4] । पुनि रवि आगें गोद पसारै ॥४७६॥
पहली जनम 'निग्ररथ'[1] गमायो । दूजें भटक भटक 'अब'[2] पायो ।
फुनि तामैं एह विग्रह वाध्यो । करता कौन करम मैं काध्यौ ॥४७७॥
मालती विललाये युं कहै । 'जव'[1] गोरी संकर तन चहै ।
स्वामी 'अव'[2] इनकी सुध लीजे । पूरन कृपा अनुग्रह कीजे ॥४७८॥
अव ही झूझ वोहोत इहां परिहै । अंतरेख रहि के चित धरिहैं ।
'या'[1] का जिय की रख्या कीजे । सेवग अपनो जान चित दीजे ॥४७९॥
हर गोरी कोतिग कुं रहैं । 'मालती मधुकर[अ] नेंकन कहै'[1] ॥
'चिहुं ओर तैं भीर जव परिहै'[2] । 'विन आवध तू क्युं करि लरिहै'[3] ॥४८०॥

---

[४७३] १. प्र० ३ यस्य विद्यंते । २. प्र० १ तस मापी ।

[४७४] १. तृ० १ सूरा तो सूरापन करही । २. प्र० ३ नृप लुं । ३. प्र० ३ वेरी ।

[४७५] १. प्र० ३ कुं । २. प्र० १ ईहा देवन ।

[४७६] १. प्र० १, तृ० १ चीनी । २. प्र० २ लीन्हि । ३. तृ० १ में चरण है : करता कौन बुद्धि मोहि दीनी । ४. प्र० ३ आप उगारे ।

[४७७] १. प्र० १ न अरथ, तृ० १ यूंही । २. तृ० १ मै ।

[४७८] १. प्र० ३ तव । २. प्र० ३ हो ।

[४७९] १. प्र० ३ आ ।

[४८०] १-३. प्र० ३ में ये तीन चरण छूटे हुए हैं । ३. द्वि० १ में चरण का पाठ है : मालति धीरज कैसे धरिहैं ।

(मधु वाक्य)

कंकर सेर 'वाड मैं कीनी'[1]। हाथ गिलोल तराजू 'लीनी'[2]।
सगरो कटक तोलि 'जू'[3] काढुं। नातर वनिक वल 'हुं'[4] वाढ़ुं ॥४८९॥
उठो 'प्रचारि'[1] बांह वल तोलै। जैत माल उहां ऐसी बोलै।

(जैतमाल वाक्य)

ठाढो कुंवर श्रवन सुनि 'बातें'[2]। 'या तो'[3] नही 'फ़ौज'[4] की वातें ॥४९०॥
तूं तो जाइ अकेलो लरिहै। 'जीय त्रास मालती'[1] धरिहै।
अवला हांक सुनत ही मरिहै। पीछे जूध जीति कहा करिहै ॥४९१॥
जो 'तुम'[1] अपनो कारिज साधो। पूरव जनम कुल 'कुटम'[2] आराधो।
प्रथम मालती वन 'बिसतारो'[3]। पाछे भंवर ज आनि 'हंकारो'[4] ॥४९२॥
'ऐसै बिन नही कारज होय[है]'[1]। 'अंगी सुहाल नोरि दल लैहै'[2]।
तेरो अपजस कोउ न करिहै। विन मारे 'सगरो'[3]'अब'[4]मरिहै ॥४९३॥

(मधु वाक्य)

जैतमाल तैं भली बताई। पै इहां फौज सूड़ पै आई।
इहि वरियां एह मतो न होई। स्यान 'गनत पुरषा तन'[1] खोई ॥४९४॥
ऊषर मध्य आन जब परही। मूंसल घाउ कहां लुं डरही।
एक वेर उनकुं 'समुझावैं'[1]। फुनि पाछे वहु बुद्धि 'उपावै'[2] ॥४९५॥

---

[४८९] १. प्र० ३ बांटि मही कीनो। २. प्र० ३ लीनो। ३. प्र० ३ के। ४. प्र० ३ नही।

[४९०] १. प्र० ३ पसारि। २. प्र० ३ लीजै। ३. प्र० ३ तो ऐसी। ४. प्र० १ जुध।

[४९१] १. प्र० ३ पीछे सोच बहुत मन।

[४९२] १. प्र० ३ लुं। २. प्र० ३ करम। ३ प्र० १ विसतार्यो। ४. प्र० १ हंकार्यो।

[४९३] १. प्र० ऐसी वानी नही कर घेहे। २. प्र० ३ भृंगी समुंह आनि दल। ३. प्र० ३ सबही। ४. द्वि० १, तृ० १ दल।

[४९४] १. प्र० ३ गीत परीषनह।

[४९५] १. प्र० ३ समझाऊं। २. प्र० ३ उपाऊं।

सो ज्युं कटक धाय गयो 'नेरो'[1] । फुनि दलिया धनिया कहि हेरो ।
'कह्यो'[2] रे पायक 'किन पै मारे'[3] । सो कहां गए दीत तजि न्यारे ॥४९६॥
देख तुमाय 'झूझ इहां करै'[1] । [illegible] तो गयो सुन 'परै'[2] ।
सो ऊपर को आयुध भरिहैं । एक [illegible] मारो मरिहैं ॥४९७॥
सुनत वचन सातु कु दिल 'लागे'[1] । 'गयो चलाइ'[2] दैठ दुस आगे ।
'तकि'[3] गिलोल हाथ गहि 'लीनो'[4] । [illegible] संग लागि मोह 'दीनो'[5] ॥४९८॥
'ताही बिन करि' कंकर मारे । [illegible] विहंड करि डारे ।[4]
एक एक कंकर के लागे । 'सगरे'[3] जोधन के भ्रम भागे[4] ॥४९९॥
ज्युं बरखा 'भाद्रवे झरझारे'[1] । 'पजर'[2] हाउ चूर करि डारे ।[3]
किते एक लुरु धा[illegible] तन छूटे । किते एक चीस करें घर लूटे ॥५००॥
किते एक तुरत नैं वचन न बोले । किते एक पागल 'सो रण मैं'[1] डोलैं ।
किते एक 'गरभराए'[2] 'सनु'[3] सूते । किते एक सानु जागि 'निस'[4] सूते ॥५०१॥
किते एक 'सुख पानी'[1] नहीं मांगे । किते एक गए राय पै भागे ।
किते एक मधु ऊपर 'चलि'[2] आये । शंकर निरख बोहोत सुख पाये ॥५०२॥

---

[४९६] १. प्र० १ नीगे । २. प्र० १ कहै । ३. प्र० १ बिन मारे, प्र० ३ किन पै मारो ।

[४९७] १. प्र० १ झूझ इहा करिहै, प्र० ३ पायक कहा करे । २. प्र० लरिहै ।

[४९८] १. प्र० १ लागी । २. प्र० ३ चलत गयो । ३. प्र० ३ तव । ४. प्र० १ लीनो । ५. प्र० १ दीनो ।

[४९९] १. प्र० ३ जो गिलोल म, तृ० १ आयुध कउन । २. द्वि० १ में अर्द्धाली है : आयुध कर्यो न कक्कर मार्यो । मानो तुपक घाव भरो सारो । ३. प्र० ३ सबरे । ४. द्वि० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : येक पै येक परे मतवारे : सगरे जोधन के भ्रम टारे ।

[५००] १. प्र० एक भाद्र झूम्भारे । २. तृ० १ पकज । ३. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है : ज्युं बरषा भादों की बरसे । सो सभ कटक हा हा करि तरसे ।

[५०१] १. प्र० ३ धावन सूरन । २. प्र० ३ किंतेएक राय गरभ, द्वि० १ केतेक गिरै उठै भए भूते, तृ० १ कितेक भरि भराइ । ३. तृ० १ भुइ । ४. प्र० ३ न । ५. तृ० १ मे चरण है : केतेक परे नगन अवधूते ।

[५०२] १. द्वि० १ गिरे सो जल । २. प्र० ३ फिर ।

मधु कुं भीर बोहोत 'जिहां'[1] परै । तिहां त्रिसूल रुद्र की फिरै ।
सिव रच्या अैसी जिहां करै । 'सुर नर सूझ कवण तै डरै'[2] ॥५०३॥

(सोरठा)

हारे सुभट हजार फुनि पायक दल 'सब मुए'[1] ।
न्रप सुं करी पुकार 'घाएल ज्युं हाएल भए'[2] ॥५०४॥

चंद्रसेन घाएल कुं बूझै । कित एक 'राय कटक'[1] रण सूझै ।
सो हूं बात श्रवन सुन 'पाई'[2] । तापर 'तैसे कुमख पठाई'[3] ॥५०५॥
घाएल कहैं कटक कोउ नाही । गही गिलोल मधु कुंवर तांही ।
कंकर मारि छिद्र सब कीने । दूजे आवध नही करि लीनै ॥५०६॥
चंद्रसेन नृप बात न मानै । बनिश्रा कहा जूध की जानै ।
कटक गिलोलन सुं कित मरे । लरका एक कहां लुं लरै ॥५०७॥
पद चक्री निहचै कोइ 'पायो'[1] । सुनिके खत्री वेग बुलायो ।
पंच हजार वोहोर सक्स कीजे । 'चढो वेग'[2] नृप आयस दीजे ॥५०८॥

(जैतमाल वाक्य)

मधु 'अब करिहै कहो हमारो'[1] । लरो तो अपनो कुल बिसतारो ।
'जो तजि चलो'[2] तो ठाहर छंडो । दोए थल माझ एक थल मंडो ॥५०९॥

(मधु वाक्य)

नृप को चोर होए कित जाऊँ । इन बातैं कैसे 'पन'[1] पाऊं ।
'जो सूरन'[2] आगै रण 'भज्जै'[3] । सुनत 'बानीए के'[4] कुल लज्जै ॥[5]५१०॥

---

[५०३] १. प्र० १ जब । २. प्र० ३ प० सुभट कोइ पाय नहीं धरे ।
[५०४] १. प्र० १ हसम । २. प्र० ३ घायल ज्यु हारल हुआ ।
[५०५] १. प्र० ३ सुभट मुआ । २. प्र० ३ लीजे । ३. प्र० ३ तैसी बुधि करीजे ।
[५०८] १. प्र० ३ आयो । २. प्र० १ चढ्यो क्रोध ।
[५०९] १. तृ० १ बचन हमारो चित धारो । २ प० ३ भली चाहो ।
[५१०] १. प्र० ३ परि । २. प्र० १ ज्यो सूरन, तृ० १ जो सुर नर । ३. प्र० १ भंजू । ४. प्र. १ राए, नीए (बानीए) के । प्र० ३ जेत बनिया । ५. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है; जो नर इन सन मुखते मागै । ते यह जन्म धर्‍यो किह काजे ।

सो तू 'कुसम'[1] कलिका करि जानैं । मालती सुनति 'कुंवरि'[2] पहि ठानैं ।
'हम सो प्रेम परापत धारैं'[3] । 'क्षीर नीर मिलि होइ' न न्यारैं'[4] ॥५११॥
इन सिंगार 'भाषि लिन' जाऊं । तौ लौ कहौ सो बुद्धि उपाऊं ।
देत मालती 'बन'[1] निरवारी । पुनि मधुकर को नाम पुकारी ॥५१२॥
राम मनोहर के हित वारी । ढूंढे कोटि विरह 'मझारी'[1] ।
'मार'[2] मरहि जागि मनोरी । मो मन 'भई'[3] मालती केरी ॥५१३॥
सो तूं बीन पवन उपाध्यौ । सीतल मंद सुगंध 'ही साध्यौ'[1] ।
'अति ही बास'[2] 'दिस'[3] 'धाई'[4] । भौंर समूह सैन चलि'[5] 'आई'[6] ॥५१४॥
कंवर संग 'मधुमाखी'[1] 'लख कोरी'[2] । सुनत सुवासु चिहूं दिस दौरी ।
'मंत्री'[3] सुनत सकल तुरि करैं । 'मधु मधु'[4] भाखि समूह विस्तरैं ॥५१५॥
'बसैं'[1] गगन कटक चलि आयो । मधु कुंवर 'सुनतहि उठि धायो'[2] ।
मालती दौरि 'चरन'[3] लपटानी । बोलै बैतमाल कहा बानी ॥५१६॥

(बैतमाल वाक्य)

धीरो कुंवरि 'वचन चित दीजै'[1] । काज 'अकाज ही क्यूंकर'[2] कीजै ।[3]
मधु सुं त्रूटे तुम जो सोई । काठ न काटे 'कुहारे'[4] कोई ॥५१७॥

---

[५११] १. प्र० ३ सत्र । २. प्र० १ कुवर । ३ प्र० १ हमै नून प्रेम पूरने धारे ।
४. द्वि० १ देव अंश क्यों होहि नियारे ।

[५१२] १. प्र० ३ छोरिके । २. प्र० १ बीन ।

[५१३] १. प्र० १ मझारे । २. प्र० १, २, ३ मार । ३. प्र० १ मयो ।

[५१४] १. प्र० ३ कर डायो । २. प्र० ३ अतिही सुगंध, तृ० १ अति सुनवार ३. प्र. ३ दिशतें । ४. प्र० १ ध्याये । ५. प्र० ३ समूह सेन सत्र । ६. प्र० १ आये ।

[५१५] १. प्र० ३ ककर मधुमाखी, तृ०१ फेर मधुमाखी । २. तृ० १ विस्तारी ।
३. प्र० १ मित्रि । ४. प्र० १ तू तो ।

[५१६] १. प्र० १ वसै । २. प्र० ३ सुनत उठि आयो । ३. प्र० १ उर, तृ० १ कंठ ।

[५१७] १. प्र० १ छुयो न चीत दीजै, प्र० ३ वचन सुनि लीजे । २. प्र० १ अकाज ही की कर, प्र० ३ ही काज कुंवर कवु । ३. तृ० १ में चरण है : कौन काज तै आप चढीजै । ४. प्र० ३ कुराडो ।

कीरन पै 'सब'[1] कटक पुवाऊं । तो कुं एह परतीत दिखाऊं ।
अलि के 'डसत'[2] जीउ न उवरही । तो क्युं आज यहां जुध करहीं ॥५१८॥
बुद्धि सयानी 'चातुर'[1] भाषी । सुनि मधु कुंवर जैत की साखी ।
जो लुं जाय के सेवग लरै । तोलुं 'झूझ'[2] न साहिब करै ॥[3]५१९॥
आवत ही 'सब'[1] बच्छ 'झंझेरो'[2] । भंवर मुहाल माखी सब छेस्यो ।
ज्युं टारै 'कहुं गार'[3] पगारी । त्युं अलि अते सेन पर डारी ॥५२०॥
'विरचे भंवर'[1] कटक सैं 'आई'[2] । जैसे टीडी खेत कुं 'खाई'[3] ।
कोटि कोटि एक तन कुं लागै । मानुं अंगार बच्छ त्रिण दागै ॥५२१॥
हंस वरन 'कटक उजियारो'[1] । पल मैं भयो छाग 'सो'[2]कारो ।
भँवर मुहाल माखिन तन 'चाढे'[3] । मानुं कटक 'कांमरी'[4] वोढे ॥५२२॥
डसहिं भँवर मानुं पूरन बीछू । झझक तुरी पग डारत 'पीछू'[1] ।
जोधा 'झूझन'[2] की गति हारे । उवड़े सूंड मानुं मतवारे ॥५२३॥
तुरी 'तार वर (खुर?)'[1] 'करै अपाई'[2] । 'घर माते'[3] 'घर मते'[4] सपाई' ।[5]
कहुं 'कवाण'[6] कहुं तरगस तूटे । नेजा 'सीस'[7] परसपर फूटे ॥५२४॥
कहुं खंजर कहुं गिरी कटारी । कहुं 'जमधर'[1] कहुं ढाल ही न्यारी ।
कहुं तरवार कहु कीत खंडा । कहुं 'गिरी'[2] गुरज 'पटा कहुं छुंडा'[3] ॥५२५॥

---

[५१८] १. प्र० १ सत्री । २. प्र० १ डरत ।

[५१९] १. प्र० १ चातुरी । २. प्र० १ जुद्ध । ३. तृ० १ में यह छंद नहीं है ।

[५२०] १. प्र० ३ सु । २. प्र० ३ ज झेस्यो । ३. प्र० षहुं गरी ।

[५२१] १. प्र० ३ बिचरे भमरा । २. प्र० ३ आए । ३. प्र० ३ खाए ।

[५२२] १. प्र० ३ सब कटक उजारो । २. प्र० ३ ज्युं । ३. प्र० ३ चुंटे, द्वि० १ तोड़े । ४. प्र० ३ कांबली ।

[५२३] १. प्र० १ पाछै । २. प्र० जूझन ।

[५२४] १. प्र० ३ तार कर, द्वि० १ चमकि भागै । २. प्र० १ कसहै सपाई, द्वि० १ घर जाई । ३. प्र० ३ घर माने, द्वि० १ खेत रहे । ४. द्वि० १ तिहां सकल सिपाही । ५. तृ० १ में अर्द्धाली है : तुरी तोषार भर षरेइ आपइ । घरमरि धरी मधी सापइ । ६. प्र० १ कुवाण । प्र० ३ ढाल ।

[५२५] १. प्र० १ जंबूर । २. प्र० १ गरि । ५. प्र० १ पतापहू छुंडा, तृ० १: पताका झंडा ।

कहुं कवांण बंदुक कहुं 'छूटे'[1]। 'मरि मरि सबही सेन'[2] अखूटे।
'फरसी फरी पगहरी पेरे'[3]। 'आवध रहे न एकहू नेरे'[4] ॥५२६॥
मधु लुं 'झूझ'[1] करन 'कुं'[2] आए। ज्युं समीर घन घटा घटाए।
बवे एक दोए कोई भागे। उन चार कीनी नृप आगे ॥५२७॥
'भागी'[1] कटक भंवरन कुं खाए। जिन 'झूझे'[2] सब[3] धरनी 'आए'[4]।
नर तुरंग तन तुचा 'न बंचे'[5]। जीवत मुए रहे दस 'पंचे'[6] ॥५२८॥
सुनत राए मुख अंगुरी नाए। 'पंच सहस कैसे अलि खाए'[1]।
झूठी बात कहां ते ल्याए। डसे भंवर सो आनि दिखाए ॥५२९॥
'तोऊ'[1] नृपनि चित बात न आए। कुनि पोकार तोलुं अरु पाए।
डसे भंवर सो आनि दिखाए। कछु सांची कछु 'झूठी जनाए'[2] ॥५३०॥
परचर्म्मा तिसचे कोइ आयो। भंवर रूप कछु सरह 'चलायो'[1]।
हुं सूरून कुं हाथ खुजाऊं। घर बैठां 'आपौं कित'[2] पाऊं ॥५३१॥
दोरे बेग दमामा 'घाई'[1]। अर चासनी सम्मी'[2] करनाई।[3]
घुरे निसान सानु 'घन राई'[4]। सींधू राग बाजे 'सहनाई'[5] ॥[6]५३२॥

---

[५२६] १. प्र० ३ छूटे। २. प्र० ३ डसे डसे सेना सव। ३. प्र० फरसी फरी बग हीरा पेरा, प्र० ३ फटक सिपर बगहरी रेपे, द्वि० १ कोइ भूने कोइ गिरे नियारे। ४. प्र० १ आवध रह्यो न अहू कोइ नेरा, द्वि० १ आयुध रह्यो न कोउ कर सारे।

[५२७] १. प्र० १ जूथ। २. प्र० १ लु।

[५२८] १. प्र० ३ गिरे। २. प्र० १ झूझक। ३. प्र० १ नाथे। ४. तृ० १ मे चरण है : डसे भमर सो आनि देषाए। ५. (तुल० ५२६.४) प्र० ३ संचौ। ६. प्र० १ दस षंचै।

[५२९] १. प्र० ३ में इसके स्थान पर है : इह तो आज तुमने सुनाई।

[५३०] १. प्र० ३ तोलुं। २. प्र० १ झूठ जणावै।

[५३१] १. प्र० ३ बुलायो। २. प्र० ३ आपै कित, प्र० ३ कछु कहां न।

[५३२] १. प्र० ३ घाई। २. प्र० १ अजूं चासनी समी, प्र० ३ अर चारस निकरो। ३. तृ० १ मे चरण है : अरु चहुं ओर वजै करनाई। ४. प्र० ३ घरनाई। ५. ३ सरनाई। ६. तृ० १ में चरण है : सिंधू राग सुरे सन भाई।

गज तुरंग तन चाम 'मंडाए'[1]। [2]सझि 'सनाह सामंत'[3] चढ़ि आए।
भंवर डसन कुं ठाहर नाही। सब दल जतन कीये नृप 'ताहीं'[4]॥५३३॥
तुरी सहस दस चंचल 'ताते'[1]। कुंजर पंच सहस 'मद'[2] माते।
'वेकर(वैरक)लाल लगी'[3]छवि पावै। मानुं 'गयंद दाझते धाए'[4] ॥५३४॥
तातै 'तुंरी तिहां चढि'[1] आए। देषै पंच सहस अलिखाए।
'श्रोणित'[2] स्रवत'गिरे'[3] तिहां सूरे। नृप जाणै या वायल पूरे ॥५३५॥
लागै सांग परसपर नेजा। 'हिय पंजर तोरै कै'[1] भेजा।
यो तो नृप परचक्री जानै। भंवर बात सब झूठी 'मानै'[2] ॥५३६॥
दूत च्यार उहि 'वेग'[1] बुलाए। सीख दिई चिहुं ओर पठाए।
दोरो कटक देष कै आवो। 'अन्यत'[2]कहूं जिन भेद जनावो ॥५३७॥
उतर दिसा एक दूत 'पठायो'[1]। 'चलिके'[2] राम सरोवर आयो।
वारी मांझ कुवर मधु देखै। ढिग ही 'जैत'[3] मालती पेखै ॥५३८॥

(दूत वाक्य दूहा)

जिहां कुल 'आतम'[3] दोष है जदपि जान कोउ षाए।
कंठ न बांधे कोउ फिरै 'हाड'[2] ही हार बनाए ॥[3]५३९॥

(चोपई)

करता कोन अयानप कीनो। लता सहज वनिता कूं दीनो।
ढिग द्रुम होय ताहि 'चढि'[1] वाढै। ऐरंड अंब पटंतर काढै ॥५४०॥

---

[५३३] १. तृ० १ ओढाए। २. प्र० ३ तुरंगम चमर ढलाइ। ३. प्र० ३ सामत साम। ४. प्र० ३ साइ।

[५३४] १. प्र० ३ नाते। २. प्र० १ दस। ३. प्र० १ वार हजार उट। ४. प्र० ३ गज तक किंतु दुघ ध्याए, तृ० १ घटा चंद्र की आई।

[५३५] १. प्र० ३ चढि तिहां चलि। २. प्र० ३ सुरनत। ३. प्र० १,२ मे यह शब्द नहीं है।

[५३६] १. प्र० ३ पंजर तो कटकटे। २. प्र० ३ वांने।

[५३७] १. प्र० ३ वेर। २. प्र० ३ अन्य।

[५३८] १. प्र० ३ धायो। २. प्र० ३ सो फुनि। ३. प्र० ३ जन।

[५३९] १. प्र० १ अम, प्र० ३ आमिष। २. प्र० १ हार। ३. तृ० १ में यह छंद नहीं है।

[५४०] १. प्र० १ चढी न।

केहरि जिहिकर 'हाथी'[1] मारे। उन हाथैं मिडक नहीं मारै।
रूठे तूठे जगहु न जाणै। तो करतूति 'बड़े कित मानै'[2] ॥५४८॥

(श्लोक)

यस्मिन् रुष्टे भयं नास्ति तुष्टे नैव धनागमः।
निग्रहानुग्रहो नास्ति रुष्टे तुष्टे किं करिष्यति ॥[1]५४९॥

(दूहा)

जिहि रूठे कछु डर नहीं 'तूठे'[1] सरै न काज।
'कहै अली'[2] कित 'खीजिये'[3] दोऊ कुल की लाज ॥५५०॥

दीनो दूत विदा करि तबही। करहु जो राय करो सो अबही।
नव नव मन के 'धूह बजाए'[1]। 'सो क्यु डरपै सूप बजाए'[2] ॥५५१॥

दूत ज आए[1] एह सुनि लीनी। चढो क्रोध नृप 'आएस'[2] दीनी।
पहलैइ दोई 'पटकि पछाड़ो'[3]। पाछै कटक 'खोजि कै'[4] मारो ॥५५२॥

'हला कीने' हाथिन के हलका। लीने काढि सारके मलका।
घेरो राय सरोवर बारी। बोले जिहाँ तिहाँ ते गारी ॥५५३॥

बनियो दुरो कहां लु 'लरिहै'[1]। धरती 'फोरि त'[2] 'कहाँ समैहै'[3]।
'विहंगम'[4] चरन धरा मिलि गैहै। ताको खोज न कोऊ पैहै ॥५५४॥

---

[५४८] १. प्र० १ कोटि। २. तृ० १ वैठ कहा ठानै।

[५४९] १. प्र० ३ में यह श्लोक नहीं है। किंतु इसके भाषान्तर का छंद है, इससे उसमें सस्कृत रचना होने के कारण छोड़ा हुआ लगता है।

[५५०] १. प्र० १ तूठां। २. प्र० ३ तो आली। ३. प्र० ३ कीजिये।

[५५१] १. प्र० ३ गुहर गुजाये। २. प्र० ३ सो कह डरे सो संष बजाए।

[५५२] १. प्र० ३ आइ तब। २. प्र० ३ आग्या। ३. तृ० १ पकरि के मारौं। ४. प्र० १ फोज ले।

[५५३] १. प्र० ३ पहली कीनो।

[५५४] १. तृ० १ लाई। १. प्र० १ फोर न, प्र० ३ फाट न। ३. प्र० ३ तिहां समैहै, तृ० १ निकस न जाई। ४. प्र० ३ विहंग।

ऐसें वचन कहे, नव 'डेरो'[1]। 'चारों आनि निहूं दिसि'[2] 'फेरो'[3]।
'सघन'[4] कुंज देखि के अधिको। गज तुरंग तिहां पैसि न सको ॥५५५॥

तब नृप कह्यो काटो बन सारो। गज लगाय 'सगरे'[1] द्रुम तारो।
नव कुंजर धन तोरन 'लागे'[2]। भंवर सुहाल ओहोर फिर जागे ॥५५६॥

'दौरे'[1] भंवर कछु अंत न पारा। रोके 'जाय'[2] सबै दल भारा।
लागे उमया कोप करि तातो। ए करतूत 'कहन की'[3] नाहीं ॥५५७॥

'चक्षि'[1] चरण तु 'चरमें'[2] ढंके। लखें सनाह ताम पर बंके।
तस 'सिव'[3] तु कहु नहीं उधारे। छांडि आपनो सगरो 'श्रम'[4] हारे ॥५५८॥

तोलु सुरति भई 'मधु कारन'[1]। उठ्यो सनाह वेग 'उहि वारन'[2]।
करि 'गिलोल अस'[3] कंकर 'बैटे'[4]। 'पहली'[5] 'आनि गजन सुं फेटे'[6] ॥५५९॥

इन देख्यो कुंजर वन ठारत। चारी तोरि मरोरि गहि डारत।[1]
'दह'[2] दिसि वाग होत 'दस बाटन'[3]। मानुं किसाण लागे 'पड काटन'[4]॥५६०॥

निरखत कुँवर बोह बल तोले। मुख तें[1] वचन कछू नहीं बोले।
गहि गिलोल 'सुं'[2] कंकर जोरैं। प्रथम 'प्रहार दंत उर'[3] फोरैं ॥५६१॥

---

[५५५] १. प्र० १ टेरो। २. प्र० ३ बनिया ने च्यारे दस। ३. प्र० १ घेरो ४. प्र० १ सध्यान।

[५५६] १. प्र० ३ खारो। २. प्र० १ लागो।

[५५७] १. तृ० १ उड़े। २. प्र० ३ राय। ३. प्र० ३ छुले कछु।

[५५८] १. प्र० ३ चख्नु। २. प्र० ३ मर। ३. प्र० ३ चप। ४. प्र० ३ चरम।

[५५९] १. प्र० १ मो करनी। २. प्र० १ उही वारीनी, प्र० ३ इकारन। ३. प्र० ३ हालोल अरु। ४. प्र० १ षटै (बेटै?)। ५. तृ० १ गोला। ६. प्र० ३ अंन गंजन कु बेढे।

[५६०] १. तृ० १ में चरण है: मानी ज्यूं मूली गहि डारत। २. प्र० १ चहूं। ३. तृ० १ षयकारा। ४. प्र० ३ थल काटन, तृ० १ षले कुभारा।

[५६१] १. प्र० ३ नै। २. प्र० १ अरु। ३. प्र० १ प्रहार दंद उर, प्र० ३ प्रहार दंत सब, तृ० १ मधू गज दसनहिं।

छिन छिन छिद्र 'छिद्र'[1] करि डारे। 'कूहे काठ मानु परे कुहारे'[2]।
कंकर कोटि कोटि विस्तारे। 'कुंजर खंड विहंड करि डारे'॥[3]५६२॥

'झरी'[1] पंख जैसे बुगलन की। 'कटी'[2]बांह'जैसी है'[3]'दुगलन'[4]की।
दसन किरच 'फैली रिण राजे'[5]। 'टूटे सुंड'[6] असुंड विराजे॥५६३॥

अप जानै परचक्री आयो। झूझ निसाण 'गहगहै नायो'।[1]
मार मार कहि बोलन लागे। एह सुनि कुंवरि मालती जागै॥५६४॥

(दूहा)

सुनत रोल रिण झूझकी 'उठी'[1] उनींदी बाम।
'एक एक धीरज नहि धरै'[2] दिगहु न देख्यो स्याम॥५६५॥

(चोपई)

दिग देखो मधु कुंवर नाही। मालती मलिन वदन भई 'ताही'[1]।
जैत माल गहि उर सु लीनी। 'सीख'[2]समझाए के धीरज दीनी॥[3]५६६॥

तूं जिन जीव सैं अवर विचारै। मधु कुंवर कुं कोइ न मारै।
काम 'अंस'[1] पूरन अवतारी। 'अन की अकल कथा है न्यारी'[2]॥५६७॥

तीन लोक 'सगरो'[1] इन जीते। ऐसे ष्याल 'बहुत होए'[2] बीते।
सुर नर असुर नाग नर 'जोई'[3]। ब्यापे सकल रह्यो नही कोई॥५६८॥

---

[५६२] १. प्र० १ विछिद्र। २. प्र० १ कूहे काठ मांडु परै कूहारे, तृ० १ कहूं मानस कहूं परे कुहारे। ३. प्र० १ में यह अर्द्धाली नहीं है।

[५६३] १. प्र० १ झर। २. प्र० ३ काढ़ी। ३. प्र० ३ सही। ४. प्र० १ दंगन। ५. प्र० १. फैल रचि राजै, तृ० १ गज राजै। ६. प्र० १ तूटी सुंडी।

[५६४] १. तृ० १ दमामा दिवायौ।

[५६५] १. प्र० १ उठ। २. तृ० १ धगधगाय कायर भई।

[५६६] १. प्र० १ तीहा। २. प्र० ३ सषी। ३. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है: जैत उठी मालति उर लाई: मन कुंवरी मन मों दुष पाई। तृ० १ में है: जैत माल गरि उर सूं लीनी: छाती लाय दिलासा दीनी।

[५६७] १. प्र० ३ एह। २. तृ० १ में चरण है: वाकी वात सबन सौं न्यारी।

[५६८] १. प्र० सिघरे। २. प्र० १ होये अत्र। ३. प्र० ३ जेहें।
म० वार्ता ६ (११००-६३)

दीनों तीन निमद मन मानो । तिम उनहूं 'किमो'[1] मद टारो ।[2] ।
कलि मनाद एकौ सुन पाए । रत्न महन मग अंग लगाए ॥५६९॥

जोगम आदि किया 'इन'[1] दीनी । गानधर 'नृमि'[2] मुद्रा[3] लीनी ।
कहि अपार तोतक 'मताए'[4] । इन सबरै कुत गैल छिनाए ॥[5]५७०॥

इनके गुन गोतमी सदे गोरी । इनो ध्यान 'लगे हर'[1] ओरी ।
इनकी कोप दान सब जारे । पारवती में भरन उबारे ॥५७१॥

जो मन रव 'जिहो'[1] नुं जोई । सो प्रतिबिंब 'तान कुं होई'[2] ।
इन कंदर्प 'दलन'[3] कुर नानी । तेरो 'पिता किन'[4] लेखा साही ॥५७२॥

(काव्य)

गजेन्द्र कुंभ दलने भुवि 'संति'[1] शूराः
केचित् प्रचंड मृगराज 'बधेऽपि दक्षाः'[2] ॥
'अनेक वीर सुभटा रण चत्र शूराः'[3]
कंदर्प दर्प दलने विरला मनुष्याः ॥[4]५७३॥

(चोपई)

मात गयंद गहन कुं नूरे । 'फुनि'[1] केहरी हतन कुं पूरे ।
ऐसे सुभट पराक्रम 'जोरे'[2] । पै कंद्रप्प दलन कुं थोरे ॥५७४॥

---

[५६९] १. प्र० १ केखो । २. द्वि० १ में चरण है : और के सहि दुख विदारे ।

[५७०] १. प्र० मन । २. प्र० १ वाली, प्र० ३ छल । ३. प्र० १, २ चंद्रा । ४. प्र० ३ रमवाए । ५. तृ. २ मे यह छंद नहीं है ।

[५७१] १. प्र० लगे हरी ।

[५७२] १. प्र० १ जोही । २. प्र० ३ सो प्रतिबिंब कहाई, द्वि० १ व्यापो सकल रहो नहि कोई । ३. प्र० ३ बलन । ४. प्र० १ पीताने । ५. ३ पिण पति । ५. द्वि० १ मे अर्द्धाली है : सो प्रतीत काम अंश न व होई । याको दर्प्प दले नहिं कोई ।

[५७३] १. प्र० साती । २ प्र० ३ जनेपि दीक्षा । ३. प्र० ३ किंतु ब्रवीमि मलिन पुरत प्रसर्व्व । ४. यह छंद प्र० ४, द्वि० १ मे नहीं है ।

[५७४] १. प्र० पून्या । २. प्र० ३ सूरे ।

अदुमन देह क्रस्न 'जिह साथै'[1] । सर भी 'कौन ताह के साथै'[2] ।
जादू बंस अंस अवतारी । तू कित सोच करै 'जिय'[3] यारी ॥५७५॥

जादू कुल की 'जैत'[1] सुनाई । किती इक 'धीरप जिम्र'[2] मैं आई ।
'सुणो'[3] पूरबलो सब अपनो । मानुं 'जागी'[4] देखत सुपनो ॥५७६॥

प्रगट्यो ग्यान अयानप छूट्यो । जैसे रबि उदोत तम त्रूट्यो ।
सुमरत नाम एक केसौ को । कटन पाप जनम जनमांतर को ॥[1]५७७॥

जैतमाल दीनो 'उपदेसो'[1] । मालती 'जंपत'[2] नाम श्री केसो ।[3]
भगत बछल नाम बिरुद वहीये । इन अवसर ए कौन सुं कहिये ॥[4]५७८॥

समरत सुने न संत पुराने । झूठे वेद किये जुग जाने ।[1]
संतन सुत की वाचा राखी । जुग'ध्यावै ए'[2]सुनी'धुं'[3]साखी[4]॥५७९॥

जन अपराध कोटि एक करही । 'तुम दयाल होइ'[1]चितहु न धरही ।
गुन अवगुन'जो जीय'[2]बिचारै । तो गनिका'दुज'[3]'कुं कित'[4]'तारै'[5] ॥५८०॥

भ्रगु रिषि आय 'लात उर'[1] मारे । मगन जानि तिहां चरन संचारे ।
'एते पर नाही'[2] दुखदाई । तुम पूरन ऐसे सुखदाई ॥५८१॥

---

[५७५] १. प्र० १ जि माथै, प्र० ३ जिह थोरे । २. प्र० १ करन त्राह की साथै, प्र० ३ करन कौन जिहां सो थे । ३. प्र० १ जीन ।

[५७६] १. प्र० १ जत, प्र० ३ नेत । २ प्र० १ धीरज मन । ३. तृ० १ छूट्यो । ४. प्र० १ जाग, प्र० ३ लागी के ।

[५७७] १. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है : मिवरत नाम एक सब करता । करइ सपाप कष्ट दुख हरता ।

[५७८] १. द्वि० १ उपदेसू । २. प्र० ३ रटत । ३. द्वि० १ में इस चरण का पाठ है : रटत नाम बाइन जिस पसू । ४. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है : हे हरि वत्सल भक्त विहारी । यह अवतार सवन मे कारी ।

[५७९] १ द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठहै : सिमरत संत करे प्रभु माने : झूठी मति सो सांची प्रभु जाने । २. प्र० ध्याअनै, प्र० ३ ध्याइए । ३. प्र० ध्यो । ४. तृ० १ चरण है : जुग धावै सुन केशव साषी ।

[५८०] १. प्र० ३ तुटे नलन प्रभु । २. प्र० ३ प्रभु बहु की । ३. द्वि० १ भीलनी । ४. प्र० ३ कुकर । ५. प्र० १ टार्यो ।

[५८१] १. प्र० १ के के लात । २. प्र० ३ दूत परणाहि अती ।

तुम मैं रूप देख 'जिन'[1] कीनै । जानि सिंह रंभा कुं दीनै ।
पहरी 'सीस'[2] कंठ पर डाली । मानुं लगी 'पहारहि'[3] पाली ॥५८२॥
पुनि गगन सुमन 'झुडाए'[1] । नैं कपाल 'नारे कर'[2] 'तुराए'[3] ।
'अति प्रवाह आनंद नदाए । मैं नुग मैं पानिप चढ़ाए'[4] ॥५८३॥
छिन त्याग कारन सिर धारै । ता रघुन 'पै'[1] हाथ पसारै ।
'सवना देव भार जति मारै । पै जग पै कछु संत पुकारै'[2] ॥५८४॥
कौनक नारन करुनामइ कैसो । अस्तुति 'करि रसना न परै सो'[1] ।
'कष्ट'[2] सोचन है चिन्त 'तुम्हारो'[3] । एते जानि कै नेक 'निहारो'[4] ॥५८५॥
प्रदुमन रूप 'आनि हम'[1] दोऊ । 'पूरन'[2] मागी संपूरन सोऊ ।
सेवक 'सुत'[3] जिहां जग विख्याता । 'वोहोत'[4] जानि 'बहो'[5] दोउ नाता ॥५८६॥
बार बार कैसे करि कहियें । अंतरजामी मन की लहियें ।
बार सुनत कहूं बिलंब न 'करियें'[1] । मेरो दाद क्यों न मन 'धरियें'[2] ॥५८७॥
माजरा की अस्तुति सुनि लीनी । गरुड काज 'हरि'[1] आग्या दीनी ।
पंखी दोए सारंड पठाए । वेगही मधु मालती 'छुडाए'[2] ॥५८८॥

---

[५८२] १. प्र० १ ज । २. प्र० ३ सेस । ३. प्र० १ हीर है ।

[५८३] १. प्र० १ बढ़ाए । २. द्वि० १ बहु अंबर । ३. प्र० ३ माइ, द्वि० १ छाए । ४. प्र० ३ मे यह अर्द्धाली नहीं है, किंतु प्रसंग में आवश्यक और इसलिए छूटी लगती है । तृ० १ अर्द्धाली है : अति प्रवाह अंबर ढिग कीनो । मारे दैत्य सुजस सब लीनो ।

[५८४] १. प्र० १ ते । २. प्र० ३ मे यह अर्द्धाली नहीं है, किन्तु प्रसंग में आवश्यक है और छूटी लगती है । तृ० १ मे अर्द्धाली है : भादव मेह भार अति मारे : व्याधि दोर विसहर षाए : सूर सुजान विचान लगाए ।

[५८५] १. प्र० १ कित कारन केसो । २ प्र० ३ संकट । ३. प्र० १ तुहारा । ४. प्र० १ निहारा । ५. द्वि० १ मे चरण का पाट है : संत काज को असुर संघारो ।

[५८६] १. प्र० १ आये तूय । २. प्र० ३ फुनि अरु । ३. प्र० १ संत । ४. प्र० ३ बहेला । ५. प्र० १ बहू ।

[५८७] १. प्र० ३ करे । २. प्र० ३ धरे ।

[५८८] १. प्र० ३ हरि । २. प्र० ३ बुलाए । ३. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है : गरुड वेग भारंड बुलाए । मधुमालती वेग छुडाए ।

'गरुड वेग भारंड'[1] बुलाए। आग्या लेन 'सुनत'[2] उठि धाए।
अति बड़ रूप भयानक दीसैं। परवत सिला चरन सुं पीसैं ॥५८९॥

जरै सुसाल 'नैन'[1] 'जीय अंतर'[2]। मानु पंच 'लोह'[3] की 'कातर'[4]।
मानुं ग्रहै भुवन नासासुर। उपमा कहुं कहा उर (ओर) पर ॥५९०॥

ऐसे पंछी दोए पठाए। 'जैसे भरथ बान गिर दाए'[1]।
पवन वेग पलक मैं आए। 'देखे कटक असन कुं धाए'[2] ॥५९१॥

चुंगल 'इक लीला से जे हैं'[1]। 'अंधक'[2] से दल्ल 'आसि गए'[3] हैं।[4]
'आए के'[5] ऊपरि केहर'[6] धाए। संकर 'निरपि बोहोत सुख पाए'[7] ॥[8]५९२॥

बाज तुरंग 'त्रास'[1] सहि न सके। भारंड 'सींह देषि दल कंपे'[2]।
भागे जाय करत फुनि 'लींदी'[3]। 'गिर गिर पडे पटा ज्युं पीडी'[4] ॥५९३॥

एक दिसा मधु कंकर मारैं। दूजी दिशा भारंड सहारैं।
तीजी दिसा सीह 'गल गरजै'[1]। कुंजर 'भुंड दादुर'[2] ज्युं भज्जै ॥[3]५९४॥

---

[५८९] द्वि० १ भारंड दो एक और। २. प्र० ३ सुनिके।

[५९०] १. प्र० १ तन। २. द्वि० १ दोइ आगै। ३. प्र० १ केत। ४. द्वि० १ मागै।

[५९१] १. प्र० २ मे इस चरण के स्थान पर भी तृतीय है और द्वि० १ में है: जैसे प्रान लेन जम आए। २. प्र० २ में चरण है: संकर सिव त्रिसूल तर्त (तुर्त) पठाए।

[५९२] १. प्र० १ हीअ लीलहीई तमचर ज्यूं, प्र० २ हीअ ललील से जे हैं, प्र० ३ इक लीला से जे हैं। २. प्र० १ अरधक। ३. प्र० ३ आसीजे। ४. तृ० १ में अर्द्धाली है: चुगल लगे दल हाथी घोड़ा। उन समान दलबल कोउ थोड़ा। ५. प्र० ३ अध। ६. प्र० १ केसर। ७. प्र० ३ सिव तस बाहर पठाए। ८. तृ० १ में दूसरी अर्द्धाली नहीं है।

[५९३] १. प्र० ३ संक। २. प्र० ३ पची जीअ संके। ३. प्र० ३ लंडी। ४. प्र० १ गोरी सी गीरे परी ज्यूं पीड। ५. द्वि० १ अर्द्धाली है: भागे सकल देषि के अंडी। गिरि गिरि परै मान पग पैंडी। तृ० १ में अर्द्धाली है: भागे जाय धीर न धरहीं। होय भय भीत गिर गिर परही।

[५९४] १. तृ० १ ललकारै। २. प्र० ३ भडडारे। ३. तृ० १ में चरण है: होय विगत सकल दल हारै।

(चोपई)

नदी तीर द्रुम निहचे 'वहै'[1]। पर घर भमन नारि पति दहै।
मंत्री 'बिना राज'[2] नही रहै। चाणायक 'साखी'[3] युं कहै ॥६०३॥

पहली 'सौ पायक जब डारे'[1]। दूजे 'तुरी[2] सहस 'संहारे'[3]।
तीजे पंच 'सहस'[4] अलि खाए। तादिन हम कुं 'तुम न बुलाए'[5] ॥६०४॥

फुनि 'ऊपर एते अति'[1] सूले। 'चढे बजाइ आप बल'[2] फूले।
कटक झुझाए 'के आपन'[3] भागे। तब 'तो'[4] हम कुं बूझन लागे ॥६०५॥

(दूहा)

दूहा-जीय तें लोभ छाडें नहीं सब दिन करत सयान।
सर अवसर 'बूझै'[1] नही सो नृप खरो अयान ॥६०६॥

(चोपई)

हानि लाभ कछु समझ न परे'[1]। ढिग ते चुगल न न्यारे 'टरे'[2]।
झूठे वचन राय चित 'धरे'[3]। तो मंत्री भला कवण गति 'करे'[4]॥६०७॥

(श्लोक)

सन्निपातेषु ये वैद्याः भ्रष्ट राज्येषु मंत्रिणः।
रण भंगे च ये शूराः पृथिव्या तिलक त्रयं[1] ॥६०८॥

---

[६०३] १. प्र० १ वही। २. प्र० ३ हीन नृप। ३. द्वि० १ सांची। ४. तृ० १ में छंद है : नदी तीर द्रुम निहचै वहिवे : मंत्रिहीन नृप राजा न रहिये। चंचल नार अत दुपदाई : मंत्र साख राय सो गाई।

[६०४] १. प्र० ३ राय पायक मधु मारे। २. प्र० १ अस्व। ३. प्र० १ तीहारे। ४. प्र० १ हजार। ५. प्र० १ पूछ न आए।

[६०५] १. प्र० ३ एते पर ओरु। २. प्र० १ चा० वेजा जाऐ आप दल। ३. तृ० १ पेत तजि। ४. प्र० ३ तुम।

[६०६] १. प्र० १ समझै।

[६०७] १. १ प्र० परीहै। २. प्र० १ टरीहै। ३. प्र० १ धरीहै। ४. प्र० १ करीहै।

[६०८] १. प्र० ३ में यह छंद नहीं है, किंतु भाषान्तर का छंद है, इसलिए यह मूल का ज्ञात होता है।

(चौपई)

'पैंड मंत्रिनि सौहु मत्री'¹ । 'छन्द'² रात रांधै सोहु मन्त्री ।
हारे कटक भये 'नौं'³ भूपो । दुरजौं 'नीन'⁴ [illegible] 'ह'⁵ पूरो ॥६०९॥

सुनि नारायु [illegible] [illegible]¹ ठानै । 'इन सौं'² नाहि न कोऊ जानै ।
जब 'तौं'³ [illegible] मार को धावै । 'सो तौ'⁴ [illegible] 'कर'⁵ लावै'⁶ ॥६१०॥

तेरे मंत्री [illegible] [illegible] । सो तुम मुचित कियो बहु 'नाह'¹ ।
हम [illegible] वारे आज्ञाकारी । [illegible] [illegible] 'तारण'² अधिकारी ॥६११॥

गुरु 'विग्रह'¹ 'तारकन'² तें धायो । ता मित्र नैं 'तुम'³ तारण काढ्यो ।
पूत कपूत [illegible] [illegible] । ताको पिता कवण गति करै ॥६१२॥

सब मंत्री मिलि नृप समझायो । तब हीं तारण तुरत बुलायो'¹ ।
'सनमुख आए'² अंक उर लायो । 'आगे आसण लें'³ बैठायो ॥६१३॥

(राजा वाक्य)

सुनि तारण यह विग्रह वाख्यो । मैं तोसुं कछु वचन नहीं काढ्यो ।
'तूं जिय में कछु दुख न'¹ पावै । राजा मंत्री कुं समझावै ॥६१४॥

तो तुं एक पाहरू टेर्‌यो । भारंड सीह आय दल घेर्‌यो ।
भयो सोर कछू समझ न परे । गज तुरंग सब छूटे फिरे ॥६१५॥

---

[६०९] १. द्वि० १ मिथ्या दोसन को जो मंत्री, तृ० १ भरत सन छंद सोही अत्री । २. प्र० १ भीलट । ३. प्र० ३ सो । ४. प्र० ३ नीत । ५. प्र० ३ कर ।

[६१०] १. प्र० ३ अब । २. प्र० ३ इनमे । ३. प्र० १ तो । ४. प्र० ३ तबही । ५. प्र० १ करी । ६. प्र० ३ नावै ।

[६११] १. प्र० ३ राय । २. प्र० ३ अति ।

[६१२] १. प्र० १ वीग्रहो । २. प्र० ३ सूरन । ३. द्वि० १ कित ।

[६१३] १. प्र० १ मे अर्द्धाली है : मंत्री वचन बुलायो तारण । आदर मान कीयो बहु कारन । २. प्र० ३ आवत देषि । ३. प्र० ३ पकरि बांह ढिग ही ।

[६१४] १. प्र० १ तजिय तै कछु दुख मत, द्वि० १ तू अजहूं मत निज दुष ।

तारण दुरगा को वरदाई। 'दल हलबल उठ्यो'[1] सिर नाई।
हरकै सीह हांक दै गाढी। रवी मरजाद 'भारंडहि काढी'[2] ॥६१६॥
रे भारंड वचन चित 'धरो'[1]। 'हरि की आन जो'[2] विग्रह 'करो'[3]।
दीनी गरुड पंख (पंखि?) 'दुहाई'[4]। आग्या मानि रहे 'थिरताई'[5] ॥६१७॥

(दूहा)

आग्या सुनत 'हरी'[1] की 'बचन'[2] मान भारंड।
केहर खेत न छांडहो 'ठाढो प्रबल'[3] प्रचंड ॥६१८॥

'ठाढो'[1] सीह महा गल 'गज्जै'[2]। सबद सुनत सगलो दल भज्जै।
बिलबिलाए जैसे मधुमाखी। 'कोऊ सुभट न सत्या'[3] राखी ॥६१९॥
तारन तारन कहि नृप टेरै। एह अवसर नाही कोई मेरै।
तूं राखै के करता राखै। राजा चंद्रसेन 'युं'[1] भाखै ॥६२०॥

(दूहा)

'बचन'[1] सुनत भई लाज तब तारन कैसी करै।
मो 'जीतब'[2] फल आज स्याए धरम चित मैं धरै ॥६२१॥
परै स्याम सुं काम सेवक अंतर 'दे रहै'[1]।
ताकूं नरकन 'ठाम'[2] चोरासी लख मैं भमै ॥[3]६२२॥

---

[६१६] १. प्र० ३ दहल दलह उठ्यो, द्वि० १ उठ्यो भजन कीन्हीं। २. प्र० १ भारंड नै रापी।

[६१७] १. प्र० ३ धरिहो। २. प्र० ३ हरि की आन। ३. प्र० ३ करहो। ४. प्र० १ दीनी गरुड पंख की धूताई, तृ० १ ताको दीनी गरुड दोहाई। ५. प्र० ३ उह ठाई।

[६१८] १. प्र० ३ हरी। २. प्र० १ जब। ३. प्र० ३ ठाडे पवन।

[६१९] १. प्र० ३ चाढे। २. प्र० १ गरजै। ३. प्र० ३ कोउ सुभट दल सेना, द्वि० १ हिम्मत सगरे जोधन नहि।

[६२०] १. प्र० १ मधु।

[६२१] १. प्र० १, २ मे यह दोहा नहीं है, किंतु प्रसंग में आवश्यक है, इसलिए छूटा लगता है। २. द्वि० १ चिंता।

[६२२] १. प्र० १ दे रही (<रहै), प्र० ३ देह में। २. प्र० १ ठोरै। ३. द्वि० १ में चरण का पाठ है : धृग जीवन कुल ल ज स्यामि दुख चित ना लहै।

(श्लोक)

एकतः ततु सुरभी एकतः पृथ्वी द्विजं ।
एकतः सर्वं धर्माणि स्वामि धर्मं च एकतः ॥६२३॥

(दूहा)

विधना अपने हाथ सुं तोले ततने करम ।
सब धरम एक पालडे एक पल स्वामी धरम ॥[1]६२४॥

(चौपई)

तारण 'स्वामि धरम तन हरें । मंत्र प्रसाद सीह मुख फेरें ।
मारें हाथ मूंठ कंकर की । 'आन'[1] देत गोरी संकर की ॥६२५॥

[1]तारन वचन सुने जब गोरी । संकर अंक छाड़ि के दोरी ।
अंतरिच्छ ही बोले बानी । पूरन संकर रुद्र की रानी ॥[2]६२६॥

(दुरगा वाक्य)

अहो राइ ए नीकी 'बूझी'[1] । पहली ऐसी कोइ न 'सूझी'[2] ।
बनिया जानि 'आप'[3] चढि आए । 'तब'[4] चेते जब 'सिर मैं खाए' ॥६२७॥

देव चरित को अंत न पावै । तू तौ नृप कछु और ही गावै ।
मधु मालती नही नर देही । एक प्रान प्रगटे तन वे ही ॥६२८॥

---

[६२४] १. प्र० १, २ में यह दोहा नहीं है किंतु यह श्लोक के भाषांतर का है इसलिए अनिवार्य है और भूल से छूटा लगता है । २. द्वि० जीवन ।

[६२५] १. प्र० १ आग्या ।

[६२६] १. प्र० २ में इसके पूर्व ६२५ का प्रथम चरण पुनः आया है ।
२. प्र० १, २ मे इसके स्थान पर है :—
छंद—सुंदर पुत्र प्रापती करै । आनंद भूधर पाधरग्रही । मापदमा पदमा करी । चरचुं भूयतास्या वस्य भवतू गज्य सू संकर संकरी ।
यह छंद प्रसंग संमत नहीं है, और न इसके संस्कृत अंश का भाषांतर हो है, इसलिए यह छंद पता नहीं किस प्रकार आ गया है ।

[६२७] १. प्र० ३ बूझें । २. प्र० ३ सूझें । ३. प्र० ३ तुही । ४. प्र० ३ जब । ५. द्वि० १ काल जगाए ।

(दूहा)

जैतमाल मधु मालती तीहुं तन एक सरीर ।
एह पटंतर पेखिए 'तक्र'[1] खीर 'अरु'[2] नीर ॥६२९॥
पारबती के बचन सुनि चेत भयो नृप चंद ।
सरन राख 'बागेसुरी'[1] मेटि सकल दुख दंद ॥[2]६३०॥
मैं इतनी जानी नहीं देवन 'केरा भाव'[1] ।
लोक लाज तैं एह भई संसारी 'को दाउ'[2] ॥[3]६३१॥

(मंत्री वाक्य : चोपई)

मंत्री कहै राय अवधारी । देवचरित को मेटै पारी ।
तुम तो राए आप बल फूले । होणहार होते [अ] म भूले ॥६३२॥

(राजा वाक्य : श्लोक)

भवतव्यं भवत्येव नारिकेल फलाम्बुवत् ।
गमवेचगमत्येव गजमुक्त कपित्थवत् ॥६३३॥

(दूहा)

नालकेल 'फल नीर जह'[1] गज कवीथ फल खाइ ।
वह 'फल कित होय जल भरे'[2] वह फल दल कित जाइ ॥[3]६३४॥
'हम हारे'[1] अपने 'भरम'[2] कछु न 'रही'[3] करतूत ।
राजपाट उन कुं दियो वह कन्या वह पूत[4] ॥६३५॥

---

[६२९] १. प्र० ३ जैसे । २. प्र० ३ ने ।

[६३०] १.. प्र० ३ वावेस्वरी । २. द्वि० १ में दोहे का पाठ है : तारन के नृप बचन सुनि कोप भयो मुख दुद । मंत्री को उत्तर दयौ औसो कहि नृपचंद

[६३१] १. प्र० ३ केरे भाइ । २. प्र० ३ के दाइ । ३. द्वि० १ मे चरण का पाठ है : संसारिक सबको कहै जान ते करइ सेव ।

[६३२-३३] ६३२–६३३ केवल प्र० १, २ में हैं, शेष प्रयुक्त प्रतियों में नहीं हैं। पुनः समस्त प्रतियों मे ६३३ तथा ६३४ के बीच ११४ छंद आए हैं । ६३४ स्पष्ट ही ६३३ का भाषांतर है, अतः दोनों के बीच में आए हुए उक्त समस्त छंद निश्चित रूप से प्रक्षिप्त हैं ।

[६३४] १. प्र० १ फर नीर जह, प्र० ३ तरुनीर ज्युं । २. प्र० ३ जल के फल किहां चढे । ३. तृ० १ मे यह छंद नहीं है ।

[६३५] १ प्र० ३ मे हार्यो । २. प्र० ३ भव । ३. प्र० १ रह्यो । ४. तृ० १ में यह छंद नहीं है ।

([illegible])

[illegible] ॥६३६॥

[illegible] ॥६३७॥

[illegible] ॥६३८॥

[illegible] ॥६३९॥

[illegible] ॥६४०॥

(दूहा)

'इतहि जैत छत'[1] मालती 'बिचे'[2] 'मधु आनंदकंद'[3] ।
एक ठौर 'मानुं मिले'[4] 'भृगु गुरु सारद चंद'[5] ॥६४१॥
कृपन चंद कर जोरि कैं अधिक दीनता होय ।
ताहु सुं वचन कहा करै चिनदे सुनियो मोय ॥६४२॥

---

[६३६] १. १. प्र० १ त्याय, प्र० ३ त्याही । २. प्र० १, २ में यह शब्द नहीं है । ३. प्र० ३ मालती कुं व्याह । ४. द्वि० १ अपजस मिटै तो जस सिर लेहुं ।

[६३७] १. प्र० १ चारू ।

[६३८] १. प्र० १ को । २. प्र० ३ और भंडारन ते द्रव्य । ३. प्र० १, २ मेरे जिय को, प्र० ३ मे इह राज कुं । ४. प्र० १ कलस चढ़ावो ।

[६३९] १. तृ० १ सुभग । २. प्र० ३ इक घोरो । ३. प्र० ३ जंत्र रबानाद रस बाजे ।

[६४०] १. प्र० १ सबनाई । २. प्र० १ सब । ३. प्र० ३ बडे निसान मंगल ज्युं गर्जे ।

[६४१] १. प्र० १, २ इतहि जैत मधु, प्र० ३ इह जैतमाल इह । २. प्र० १ बीचू, तृ० १ बीच मां । ३. तृ० १ मधू अनंग । ४. प्र० १ बैठे मनू । ५. प्र० ३ गुरु भृगु सुत अरु चंद, द्वि० १ ज्यौ नक्षत्र महि चंद ।

पूत न भाई बंध कोउ कुटंब सगो नहीं ओर ।
'किसहै सूंपूं सार एह राखे मेरी ठोर'[1] ॥६४३॥

मनसा वाचा क्रमना यामै 'नही'[1] त्रिवेक ।[2]
जाके कुल में को नहीं 'पूत जमाई एक'[3] ॥६४४॥

राजपाट तेरो सबै ए दोउ 'कन्या'[1] दास (दासि) ।
मोकुं आज्ञा होये 'अब'[2] 'करूं श्री गोकल वास ॥६४५॥

(चोपई)

राजपाट मधु [कुं ?] सब दीनो । चंद्रसेन राजा तप लीनो ।
राज रिद्धि त्रिय बोहोत होई । उनकी कथा लप) नही कोई॥६४६॥

काम प्रबंध प्रकास फुनि मधुमालती विलास ।
प्रदुमन की लीला इह कहत चत्रभुजदास[1] ॥६४७॥

राजा पढै लो राज 'गति'[1] 'मंत्री'[2] पढै ताहि वुद्धि ।
कामी काम विलास रस 'ग्यानी ग्यान संसुद्ध'[3] ॥६४८॥

॥ इति मधुमालती कथा सपूर्णम् ॥

—००—

---

[६४३] १. प्र० २ किस सिर अप्पू राज इह ठोर राषे सुत सोय, द्वि० १ मनशा वाचा कर्मना राजपाट शिर मौर ।

[६४४] १. प्र० १, २ कोन । २. द्वि० १ में चरण का पाठ है : तीन देव की साखि लै कही वेद विधि आन । ३. द्वि० १ कन्या पति सुत जान ।

[६४५] १. प्र० १ कना । २. प्र० ३ तो । ३. प्र० ३ करूं सो गोकुलवास, द्वि० १ तीरथ करौं निवास, तृ० १ गोकुल करौं निवास ।

[६४६] १. यह छंद प्र० ३ मे नहीं है, किंतु इसके बिना कथा अपूर्ण छोड़ी हुई लगती है इसलिए प्रसंग मे आवश्यक और प्र० ३ में भूल से छूटा लगता है। इसका पूर्ववर्ती छंद 'राजपाट' से प्रारंभ होता था, और यह भी, कदाचित् इसी वर्ण साम्य के कारण प्र० ३ में यह भूल हुई ।

[६४८] १. प्र० १ नीत । २. प्र० १ मीत्र । ३. १ योगी पढे तो सीध ।

परिशिष्ट

(अस्वीकृत छंद)

[०]

प्र० ३, द्वि० १, च० १ :

अलख निरंजन चित धरूं समरूं सारद साय ।
कथा कहूं मधुमालती निज गुरु तणै पसाय ॥

[१ अ]

तृ० १ :

सकल बुद्धि में सरस्वती वाहुंगरू के पाय ।
मधुमालती विलास को कहेश चतुर्भुज [राय] ॥

[२१ अ]

पनिहारी राम सरोवर तरसी । मधु कुंवर रूप पखेरू तरसी ।

[२२ अ]

द्वि० १ तृ० १, २, च० १ :

किं कुलेन विशालेन विद्याहीने तु देहिना ।
कुलहीनोऽपि विद्वांसो सदेशो यत्र जीवते ॥

[२२ आ]

द्वि० १ :

लघुकुल विद्यासहित दीरघकुल अनुमान ।
कुल दीरघ अतिहीन गुन लघू कुल नहीं जान ॥

[२२ इ]

द्वि० १, तृ० १, २, च० १ :

विद्या बिन सोभा नहिं पावे । विद्या बिना ज्ञानहिं आवै ॥
विद्या बिन अति मूढ़ कहावे । अपढ़ अकारथ जन्म गँवावै ॥

[३८ अ]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, २ :

अंबर ससिहर जल कुमुद दूर थकी विहसंत ।
जन्मांतर मेलौ नहीं नेहा नवि चूकंत ॥

म० वार्ता ७ (११००–६२)

च० १ (तृ० १ खंडित है) :

गिर पर मोर रहें अति गाढ़े। तिनसूं प्रीत मेघ अति चाढ़े ॥
दोय लख जो चंद्र मेहमंता। कमोद प्रीत बसत वेहि चित्ता ॥
येहाँ विष धरनी नहिंआवे। तिनसूं निकट दूर गति चाहे ॥

द्वि० १ :

कुमोदिनी जलहर बसे चंदा बसे अकास।
जो जाहू के मन बसे सो ताहू के पास ॥
सूरज प्रकास कमल जग प्रीत नहीं भरपूर।
जो तो मन से हेत है कहा बसे भये दूर ॥

लाख कोस पर सूरज चंदा। कमल फूले सरोवर फंदा ॥
मेघ अकास मोर गिरिंदा। हित मिले अंत परम समीपा ॥

[४१ अ]

तृ० १ :

मधुमालति कूँ ब्राह्मण मणावे। एक घी·········

[५२ अ]

तृ० १, २ : (५३. १. तथा के बीच मे) :

मालति मधु को बदन निहारी ॥
देखत मदन काम तन छायो। मालति के मन मधुकर आयो ॥
मालति मन में सोच विचारी।

[५६ अ]

तृ० १, २ :

लगे प्रीत के बान मालति तन व्याकुल भयो।
बिरह सतावे गरत मधुकर सू सनमुष हयो ॥

[६८ अ]

पं० १ :

दूजै बनि इक सिंघनी रहई। बिरह बिथा वौरतै तन सहई।
येक धौल सिंघति मृग देष्यौ। अति नैमंत जु पर भी पेष्यौ ॥

[७१ अ]

प्र० १, द्वि० २, च० १ :

धरणी अगन जल पवन अकासा। तो मो विच परमेसर आसा ॥
कपटी मित्र द्रोह जो करहीं। कुंभीपाक नरक मंह पड़हीं ॥

[७४ अ]

द्वि० १, तृ० १, २ :

मेरी प्रीत परेखो लीजे। कंद्रप कोटि काम रस पीजै।
मेरी सुरत लेहो हितकारी। मृगनी भली कि सिंवनि नारी ॥

तृ० १, २ में दूसरी अर्द्धाली नहीं है।

[७४ आ]

तृ० १, २ :

सुनि सिंवनि मृग इम कहै तो सूं को पतियाय।
साधु रूप धरि सिंवनी सो वनचर पकर्‌यो जाय ॥
मृग कूं पूछे सिंवनी कहो वनचर की वात।
क्यूँ कर सिंघ साधू भयो करो वनचर को वात ॥

[७४ इ]

तृ० १, २, च० १ :

(मृगो वाच)

येक दिना सुन सिंघनी सिंघकूं लागी भूख।
सब दिन ढूंढत वे फिर्‌यो सो वनचर पायो रूख ॥
आसन सवही थाकियो कियो जो साधु सुभाव।
ऐसी विधना देहि मति लो वनचर आवे हाथ ॥
कूद फांद कर थाकियो कियो जो साध उपाव।
चिंटी हूं कूं देख के सो फूंक फूंक दे पाव ॥

(वनचरो वाच)

वनचर बूझे सिंघकूं यह तेरो कोन सुभाव।
नहिं काठो नहिं थोबरो सो फूंक फूंक दे पाव ॥

(सिघो वाच)

सुनि कपि आतमा परमातमा बसै दूध मा घीव ।
फूंक फूंक पग देतहूं मो जनि कोइ मरहीं जीव ॥

(वनचरो वाच)

ठाडे रहे कहूं जावो जनि सांईं दरसन की आस ।
वनफल दो एक तोर के सा ले आउं तुमारे पास ॥

(कवीश्वरो वाच)

मूरष भयो रे वनचरा सिंव कहूं फल खाय ।
भोले भाव जु संचर्‌यो सो ले चुबको सुघु भाव ॥

(सिघो वाच)

मुख परियो वनचर हँसे सिघ जो पूछे येम ।
तू पड्यो काल के गाल मो तोहि हाँसी आवे केम ॥

(वनचरो वाच)

एक बेर को तूं हँसे पन परसिद्ध होवे मुझ ।
दुरित वात मनमो रही सो परगासूं तुझ ॥

(कवीश्वरो वाच)

सिंवने जाण्यो वेरो ते मुख दियो पसार ।
जि हाथि आयो वनचरो तिहाँ जो बेठो जाय ॥
डाले बैठो वनचरो हियो नेना ढाले नीर ।
सिंघ जो पूछे वनचरा तू क्यों रोवे वीर ॥

(वनचरो वाच)

ने परहरंति मृत्यु अष्टोत्तर राजपंडिताः ।
धनं कंचनं समर बिना वाहे विनो नृप ।
तपसि पेम जुगतां सुष दुष समरनां ।
बनं गतां येह वेलि सब सुक्रितां वारनां ॥
सुनु सिंव जीवन अरु मरन किसुष दुष मेटे नाहि ।
ये तासे साधकी संगत करे सो मे रोवत हूं ताहि ॥

(सिंवनी वाच)

मृग मूरष जाने नहीं बहुत कयो समुझाइ।
तृणचरे भागो फिरे ताकी गति है वाहि॥

[८३ अ]

द्धि १, तृ० १, २, च० १ :

सब पंछी मिलके सुध लहई। पहली कथा कहो कैसी भई।
साएर तीर ठींठोरा रहाई। मेघ बरन पंछी सो कहाई॥
उत्तानपाद नाम तिसु कही। त्रिया गर्भ संपूरन भई।
कंत विनंति सुनो हो वोरे। अंडन काज करो कहूँ ठोरे॥
येहि ठोर अंग धरन कि नाहिं। आवे वेला बहि जो जाहिं।
अनत कहूँ अंडन को करो। तिहां जाय एक आस्रम करो॥
तब पंछी बोलो धरहड़ी। तेरी बुद्धि विधाता हरी।
मेरे अंड जो सायर लेहै। तौ उनि ठौर उड़ाऊं येहै॥
तुम निसंक होए अंडन कूं धरो। मनमों चिंता अवर जनि करौ।
येतनो कहि ठींठोरा गयौ। सरवर तीर ठीकानो लह्यो॥
येह सुनि ठोठोरा के वैना। साएर क्रोध भए दोइ नैना।
हूँतो पराक्रम देषूं एह। पाछे याके अंडा देह॥
मेलि ते अंड लिए तेहि वारि। उड़ी ठींठोरी गई पुकारि।
सुन हो कंथ बात उतपात। मों सुत उदधि लिये परभात॥
सो स्वामी तेरो बल लियो। तो मो सुत विहूना कियो।
हुव धरती गंगा के तीर। जिव तावला होता वलवीर॥

त्रिया हरण बंधू मरण पुत्रहि तणो वियोग।
येता दुष जनि संपजे जो संपति होय न होय॥

त्रिया हरन रघुपति कूं भयो। बंधव मरन युधिष्ठिर सह्यो।
पुत्र हरण रुकमिणि कूं भयो। जनमत षेव प्रदुमन हरि लियो॥
सो दुष आजु उदधि मोकूँ दियो। देषत बाल विछोहा भयो।
हूँ वालक विन कैसे रहूँ। निहचै प्राण अगिन में देहूँ॥
अवहूँ तुम पर तजिहूँ प्राण। की मोहि बालक मिलावो आणि।
कंथ ने सुणी त्रिया की बात। तू त्रिया जनि करे अपघात।

[८४ अा]

द्वि० १ :

टिहिहरी केन मंत्रेण सागरो जल सोपयेत।
साध को जीव को धर्यो धग जीवान पथ्य को ॥

[८५ अ]

तृ० १, २ च० १ :

बड़ा भए तो कहा भा बुधि बल उपजे नाहिं।
ससा सिंहं कूं डारियो देखत कुवां के मांहि ॥
(च० १ में इस दोहे के स्थान पर है :
जेसे रे बुद्धि बलं तसे नर बुद्धि संकतो।
बल वेह निसीह मंदो बिज्ञता ससा सिंह निपातिते ॥)

बन मो एक सिंघ जोरावर आई। तास पटंतर और न कोई।
ससा सूं उन प्रीत जो कीन्ही। कपट करि प्रान तेहि लीन्ही ॥
मास अहार सिंह जो करही। मेरे बन मों कोउ न रही।
ससा कहे एक सिंघ जो आयो। सो सिंघ कहे त्रिया ले जाऊँ ॥
कोपि सिंघ ससा सूं कहे। मोरि बतावउ कहा रहे।
ससा चल के फुनि आगे जाये। पाछे थे वे सिंह बुलावे ॥
कुवा किनारे उभा रहाई। देत हांक कूप गिर जाई।
देषे वा मो दरस जो करही। सबद सुनत कूप परि मरही ॥
करता सेवी क्यो कहिं करिही। तो बड़ो कपूत होइ निसतरही।
चातुर होय तो बुद्धि विचारे। तो कहा ससा सिंघ कूं मारे ॥

[६२ अ]

द्वि० १, तृ० १, च० १ :

मेघ वरण एही चित दीजे। अपनो बेर दाँव के लीजे।
कांचो मनो कबहुं ना कीजे। जिय दिढ होय तो यूहर छीजे।

[६३ अ]

द्वि० १, तृ० १, च० १ :

मेघ बरन मंत्री यूं कही। द्रुम वेली कथा मोसूं उचरही।
कैसी विधि वेली द्रुम चढ़ी। आगे कथा कहो क्यूं बढी ॥

[१४८]

द्वि० १ तृ० १, २ च० १ :

सागर निकट ब्रच्छ इक भारी । तिहां हंस बसै ब्रच्छ माहीं ।
बधिक निकट बेलि चलि के आयो । रंग मर्म पै फंद डुरायो ॥
ज्या दिन तुम बेली निकट ही जाहीं । वृद्ध हंस मत दिन्ही याही ।
गहे बेलि तुम डारो तोरि । दुख न पावो फेरि बहोरि ॥
तरुवर हंस नहिं माने बात । आगे तू कहूं सुनो विख्यात ।
रोकि वृच्छ पावे नांहिं त्याग । तब पूछो अंग आगे याणि ।
बठर बुद्धि मन मानी नांहि । अब जिन विचारी उभार कराहिं ।
जो तो आज तुम शाखा त्याग । वृद्ध प्रसिद्ध तूं सारो काज ।
जिहां जो वहे हंस को राग । एक मतो उपजो मन मांह ।
मृतक रूप धरो तुम सबही । वधिक मृतक जाणे तुम अबही ॥
जब पृथिमी मंडल नावे तबही । फुनि उडि चलो प्रचारहि सबही ।
अैस रे मित्र करिज्यरो आजे । ।नहचल करो सरोवर राजे ॥
जेपे कही सोहि सब कीन्हो । मृतक रूप सबही धरि लीन्हो ।
चढ्यो ब्रच्छ पर वधिक पचार्यो । चहुं दिसि पास देइ कर डारि ॥
चढि करि हंस गहो करि नावे । देखि मृतक बहुत दुख पावे ।
कौन वसि भई अब इनहू क्याजे । गयो प्रान मोहि भयो अकाज ॥
गहि ले जातो नग्र मझारे । पावतो द्रव्य बहोत अपारे ।
सोचि द्रिष्टि तब दीन्हो डारि । उतरने लागो ब्रच्छ सभारि ॥
उडे चले हंस गए एक ठौरे । दुष्ट पाछे फिरि कहां तक दौरे ।
कहे मित्र याहि विद सोहि । समझि वात चलो सब कोइ ॥
असि विधि तुमहू करो उपाव । छल बल लैहो आपण दाव ।
मंत्रि कहे सोही बिधि कीन्हो । तेको बचन तुम हित करि लीन्हो ॥

[१०३ अ]

द्वि० १ :

जौ दुर्जन प्रण अति करै तौ न पतीजै गंभीर ।
ज्यों ज्यों नीचे ठिगंली त्यों त्यों सोषै नीर ॥

[१०६ अ]

द्वि० १ :

पाहन रेख जु उच्चरै हृदय रहै कछु फेर ।
साध वचन कबहूं न टरै ध्रूव टरै की सेर ॥

[१३६ अ]

तृ० १, च० १ :

कर्म लिखे येहि लेख यह अरु लिखे कर्म के लेख ।
त्रिया भुवन बिसेखिये सो जावे नहिं कर्म की रेख ॥

[१३६ आ]

प्र० ३, ४, द्वि० १. तृ० १, च० १ :

जारूं जीतब काज जो प्रीतम अंतर धरूं ।
सिंघणि कै कुल लाज जो मृग पहले वा मरूं ॥

[१३६ अ]

द्वि० १ :

समयो रवि पश्चिम उगे जल में तरै पपान ।
समयो स्थल छंडियो कर्म देख दृढ़ जान ॥

[१४७ अ]

तृ० १, २ च० १ :

नेह निभाए ही बणै अर सोच सोच मन आण ।
मन देह और सीस देहे मन नेह न दीजे जाण ॥
सिंहनि सोच हिये कियो मृग मार्यो मोहि काज ।
विधि के अंक न चूकहीं आय बनीं येह आज ॥
तन रोवै मन डगमगै लियो न मेरे मान ।
प्रीत वचन के कारन सिंघ न दीन्हो प्रान ॥

[१५० अ]

द्वि० १ :

वारि बुंद या दिन सजित ता दिन लीप्यो सुभाव ।
हानि मृत्यु दुख सुख निपट मिटन कौन पै जाइ ॥

[१५५ अ]

तृ० १, २, च० १

अहमद तजं अंगार ज्यूँ ओछे के संग साथ ।
सियरो कर कारो करै सो तातो दाझै हाथ ॥
नैना केरि प्रितड़ी जो कर जाने सोय ।
जो रस नैना उपजं सो रस सहज न होय ॥

[१५६ अ]

द्वि० १ (संक्षिप्त रूप में), तृ० १, २ च० १ :

मालति कहै सोइ सुन लीजे । कृष्ण किन्ही सोई अब कीजे ।
उन ने नार चंद्रावलि लाई । उनके कहा कमी थी काई ॥
मात पिता सगरे मिलि बरजे । उनके मन ते केहि न भज्जै ।
सुन मधु एह टेक परि हरिये । कृष्ण कियो सोई चित धरिए ।
चंद्रावलि कहां की सुंदर । वाकूं स्याम सु आनी मंदिर ॥
सगरे बरजे ते कहा कीन्हो । कसननाथ चंद्रावलि लीन्हो ।

सुनो मधुमालत्ति कहै सोही करिये आज ।
कृष्णमुखी चंद्रावली सोही करो महराज ॥

(मधु वाक्य)

सुन मालती उन खेल न परिये । उनकी बात सु चित में धरिए ।
वे जगदीस त्रिलोक के नाथ । जोति सरूप काछे संग न साथ ॥
उनकी बात मोतें सुन लीजे । उपाय होय तो चित मैं दीजै ।
जो तुम सुनो तो तुम्हें सुनाऊँ । महापुरुष को भेद बताऊँ ॥
कहै मालती मधु सुरग्यानी । मोहि सुनावो कृष्ण की बानी ।
सुनो मालती मधुकर कहै । तपसी एक बन खंडै रहै ।

लोभ मोह जाके नहीं नहीं काम को धाम ।
भूष प्यास जानै नहीं निसि दिन हरि को ध्यान ॥

दुरबासा रुषि जाको नाम । कृष्ण को गुरु रहै उद्यान ।
सब इंद्री मिलि मतो उपायो । आनि रुषी कर कहे सुनायो ॥ॐ

नयन नासिका करन मुख हाथ औ पाव सरीर ।
सब मिलि करि यूं उच्चरै हम न रहैं तुम तीर ॥ॐ

नयन रूप देखै नहीं स्रवन सुनै ना राग।
ना सुगंध ले नासिका रसना रस ना लाग ॥❀
सबको परबोधन कियो कृष्ण लिए गुहकारि।
जेती तुम ग्रह गोपिका सो आयो सब झारि ॥❀
अज्ञा ले गुरनाथ पै कृष्ण चले सुपधाय।
मंदिर माहीं आय करि कीन्हो सब विश्राम ॥❀

कृष्ण अनंत देही विस्तारी। सबसों क्रीड़ा करी मुरारी।
काहू को मुख सों मुख लावै। कहि गोपी वे प्रेम हित लावै ॥❀
केहि सों हेत करै अति भारी। ऐसी हरि माया विस्तारी।
सब सेती फिर बात सुनावै। सुनत बैन गोपी सुख पावै ॥❀
बहु पकवान करो तुम नारी। दुर्वासा रुपि तुम्है हंकारी।
भोर भए तुम सब मिलि जावो। गुरुराज को जाय जिमावो ॥❀
भोर भयो गोपी सब जागी। आभूषण सब पहिर सभागी।
घर घर ते मिलि के सब आई। प्रभु वाक्य ते सभी सिधाई ॥❀
बहु पकवान औ पान मिठाई। ले ले सब जमुना तट आई।
जमुना देखि भई सब ठाढी। करें कहा अब जमुना चाढी ॥❀
गोपी सकल स्याम पै आई। जमुना अधिक दूर प्रभु छाई।
कहै यदुनाथ सुनो ब्रजनारी। जमुना तें यूं कहो पुकारी ॥
कृष्ण बाल ब्रह्मचारी होई। तो जमुना मारग दे मोई।
गोपी सब हरि आज्ञा मांगी। लाज सो हंस हंस मुसकानी ॥
केल करत जमुना पै आई। बोली सब मुख सोर मचाई।
जमुना कृष्ण बाल सुनि पाई। भई पनार वार ना लाई ॥
सब उतरीं जमुना के पारा। अचरज बहु मन माहिं विचारा।
हर्षित हो तपसी पहं आई। चरण भेंटि पुनि विनै सुनाई।
तपसी कहे सुनहु ब्रजबाला। तुम कूं भेजी नद के लाला।
सीस धरे तुम जो कछु लाई। सो मुख सकल देहु पधराई ॥❀
नाना विधि के भोजन जेते। तपसी मुख में डारे तेते।
वायो मुख कूप की नाई। सब पदारथ मुखहि समाई ॥❀
गोपी सब चरणन लपटाई। दे आज्ञा रुपिराज गोसाई।
हर्षित हो रुपि अज्ञा दीन्ही। गोपी सभी कृष्ण रस भीनी ॥❀

गावत हंसत बजावत तारी । अकार ले निज धाम सिधारी ।
जमुनापूर देव अजनारी । रुषीराज पें आय पुकारी ॥
तपसी कौ मैं बुद्धि बताऊँ । जमुना सो यह बात सुनाऊ ।
दुर्वासा अल्पाहारी जे होय । तो जमुना मारग दे मोय ॥
गोपी फिरी हरप बहु बाढ़ी । संगल कर जमुना जल ठाढ़ी ।
इतनौ भोजन हम ले आई । भोजन में रुचि बार न लाई ॥&
धन यह गुरु धन यह चेला । विधि ने भलो मिलायो मेला ।
गुरु भोजन कर अल्पाहारी । रास लिस बाल ब्रह्मचारी ॥&
गोपी सब हंसि हंस मुसकाई । जमुना सो यह बात सुनाई ।
जमुना सुनि मो मारग दीनो । गोपी सब कोतूहल कीनो ॥
उतरि गई जमुना ते पारा । नाचत गावत मंगलाचारा ।
सब ही निज निज मंदिर धाई । धाई प्रभु चरण न लपटाई ॥

तुम्र गत अगम अगोचरा कछु बरणी ना जाय ।
तुम व्यापक जगदीस हो जग तुम नाहिं समाय ॥&
हर्त्ता कर्त्ता जगत के कियो सकल संसार ।
सुनहु मालती मधु कहै उन गत अगम अपार ॥&

सोलह सहस एक सौ नारी । ब्याही सकल तौहु ब्रह्मचारी ।
दस दस पुत्र सबन कूं दीने । छप्पन कोट जादव सब कीने ॥
प्रभु चरित्र कहा कोऊ जाने । मलिन चित्ततो कहा बखाने ।
सुनि मन बचन ग्यान मन धरिए । यह अज्ञान सकल परिहरिये ॥

उनकी तो उनते गई सुन मधुकर तूं बैन ।
मो मन माहीं तू बसै का बासर का रैन ॥&
लगे काम के बान नाहि निकारे निकसिहै ।
चित से नाहीं धीर बचन मालती यूं कहै ॥&

द्वि० १ मे यह पूरा प्रसग कुछ संक्षिप्त है : उसमें & चिह्नित छंद नहीं हैं, और शेष छंदों की शब्दावली भी किंचित् भिन्न है ।

[१५७ अ]

च० १ :

सुनत मालति बैण मधू कहा सोही सही ।
धन धन वाही रैण ज्या देषे तुम अवतरे ॥

[१५७ आ]

च० १ :

नैना केरी प्रीतड़ी जो कर जाणै सोय ।
जो रस नैना ऊपजै सो रस सहज न होय ॥

[१६२ अ]

तृ० १ :

कहो मधू कैसी करूं करनराय गत होय ।
इन व्रत लीनो पदमावती एह सूझत हे मोहि ॥

[१८२ अ]

द्वि० १ :

कोटि सयानप सहस बुधि किया करो सभ कोइ ।
अनहोनी होवे नहीं होनी होइ सु होइ ॥
मैं जु ठटी कछु और ठाठेरे औरैं ठटी ।
बाको ठट लगि ठौर मेरो ठाट ठर्यो रह्यौ ॥
अहिरी मटकी संचरे जन तिह रंग नये ।
मानस चेते और कछु दैव और करेय ॥
जो कछु लिष्यो ललाट तामे घट बढ़ को करे ।
मिटे न पूरब अंक करता कलम जु कर गहै ॥

[१८४ अ]

तृ० १, च० १ :

सपना संपत काच जल बाज जिया अभवास ।
कर्म लिष्यो सो पाइए करो भरोसो तास ॥

[१८७. १ अ]

द्वि० १ :

कन्या उदर परो जनि कोई । द्रव्य हानि जग सेसी होई ।

[१६५ अ]

द्वि० १ :

कर छूटी कूंए परी काढ न सक्कै कोइ ।
ज्यों ज्यों भीगै कामरी त्यों त्यों भारी होइ ॥

(तुलना० छ० १६०)

[१९८ ग]

तृ० १, च० १ : (पजाबनी बाबत)

छाड़ल नेह लगाय कै गहि पकराई बाँह ।
मूरख बेद न जानहीं करक करेजे माहिं ॥
(तुलना० मीरां)

कहा कहे तूं आरसी कहा गूंगे से बात ।
मूरख कहा समझाइये लखना होय संताप ॥
हंसू तो दंत पराइये रोऊँ तो काजर जाय ।
आपने जिये से यूं कहूं ज्यूं लाकड़ी घुन खाय ॥
कोण सुने कासूं कहूं मेरे जीव उपजे बात ।
मेरे उर अंतर मांही करवत आवत जात ॥
गिरितें परिये धाय जाय समुंदर बूड़िये ।
सांपये माहुर खाय मूरख प्रीत न कीजिये ॥
अब इत्याछुत देपके जिव मो ल्यावै रोस ।
कारन लिलाटी आपणी दई न दीजे दोस ॥

[१९९ ग]

तृ० १ च० १ :

नवसत सजि ठाढी भई अरु दिवलो धर्यो उतार ।
अवर सपी कछु यूं कहूं कि आव बैल मोहि मार ॥
सपी काजर देखो चंद लो मैं सबी सजे सिणगार ।
अवर सपी मैं यूं कहूं कि आव बैल मोहि मार ॥

[२०२ अ]

तृ० १ च १ :

क्या खूबीहै नैन की अरु तैसे मीहे बोल ।
तीन लोक मो लाहियो लो बजे प्रेम का ढोल ॥
मैं बैठी रंग महेल में अरु और नहीं कछु कार ।
मै सूं से कछूं कर कहूं कि अब बैल मोहि मार ॥
करणा होय सो कीजिये येह जोवन देह नेह ।
सदा न सावण पाइये सदा न बरसे मेह ॥
सदा न सावण पाइये सदा न बाली बेस ।
सदा न जोबन थिर रहे सदा न स्यामर केस ॥

[२०७ अ]

द्वि० १ :

भयो अधिक सनेह पद्मावति पिय सो मिली ।
ज्यों घन भाद्रौ मेह प्रीत हेत मधु मालती ॥

[२१० अ]

तृ० १, च० १ :

प्रीत परेवा की सुनो छूटत चल्यो अकास ।
त्रिया नैन देषी नहीं सो गिर उपज्यो त्रास ॥
प्रीतम प्रीत विनाश अवगुण आठे पहर का ।
लोही चढ़े न मास मूल सनेह न कीजिये ॥
[जिहं जिहं अधिक सनेह तिहं तिहं दुप दूनो भयो ।
ताको ओषदु येक भूल सनेह न कीजिये ॥]
सुष से कियो सनेह सुप सूं दुप दूनो भयो ।
ताको ओषदु यहे भूल सनेह न कीजिये ॥

उपर्युक्त तीसरा छंद केवल च० १ में है और वह चौथे का लगभग रूपांतर है ।

[२१२ अ]

द्वि० १ :

वहनी तृपत न वनचर जम तृपत नहिं संग्राम ।
सरिता भरे न उदधि तृपत काम तृपत नहिं वाम ॥

[२१५ अ]

तृ० १ च । १ :

सत सूं साहस ऊपजे सत्ते वैकुंठ राम ।
सत्त संभारो आपणो ताको सीके काम ॥

[२१७ अ]

च० १ :

सपि सज्जन नहिं वीसरे लोक कहे भूप जाय ।
ज्याके उदसार न वेह लो क्यूं मातो थाय ॥

तृ० १ :

मधु सोचे सुर ग्यान अवी मालती सूरष होय ।
सत छंडे रे बावरी ना पति पावे कोय ॥

[२१८ अ]

तृ० १ च० १ :

चित थे उतरी नार तेह चाहे नित चढ़न कूं ।
अब मन समझ गँवार चित उतरी फिर ना चढे ॥

(मालती वाक्य)

तन की तो मटकी कछं मन की कछं जो डोर ।
चित उतरी फिर चित चढ़ ज्यों चकरी की डोर ॥

[२२० अ]

प्र० ४, द्वि० १ तृ० १ च० १ :

रवि गृह गए चंद हुइ मंदा । हरि बावन बलि के गृह बंदा ।
संकर जटा सुरसरी आई । अैसे बर लघुता तिण पाई ॥

[२२१ अ]

तृ० १, च० १ :

तजिये फल बिन तरवर ताही । तजिये सरोवर नीर जो नाहीं ।
तजिये सज्जन तिरा सुख नाहीं । तजिये ब्रच्छ बबूल की छाहीं ॥
तजिये गज सिर नावत नाहीं । तजिये नरपति तारे नाहीं ।
तजिये बालक धनवान को सोई । ताको मित्र करो मति कोई ॥
तजिये ठाकुर बाचा चूके । तजिये देवल बिसरा ठूके ।
तजिये नार तिहां दिल फीको । ये ता तजि दूर सु नीको ॥
येता तजि दूर जो रहिये । पिता जो ओछा नारी दहये ।
सूम पड़ोसी निहचै छंडो । येता तजि और सो मंडो ॥

येता की संगत करे बिन मार्यो मर जाये ।
जे जैसी संगत करै ते तैसो फल पायो ॥
देवल सांप कराल घर और चल चीती नार ।
ठाकुर वाचा चूकणो येता परा निवार ॥
प्रथम दिवस चंद्रः सर्व लोकैक वंद्यः ।
सच सकल कलाभिः पूर्ण चंद्रो न वंद्यः ॥
न करोति मतिगवनं मित्र वादे मित्र गृह ।
अति प्रच्छंति अति दोषो भावहीन ते नितं ॥

[२३१ अ]

तृ० १ च० १ :

बहु भोजन काया दहे चिंता दहे सरीर।
अंतरंग के उटटे कोउ न जाने पीर॥

[२३१ अ]

द्वि० १ :

कौन सुनै कासों कहो जो जिय उपजत बात।
मेरे उर अंतर सषी करवत आवत जात।

[२५२ अ]

द्वि० १ :

किं करो कुत्र गच्छामि रामो नास्ति महीतले।
दम्पत्यो वियोग दुःखं एको जानामि राघवः॥

[२५२ आ]

प्र० ४, च० १ ;

सुषमे ही दुष ऊपज्यौ भयो न दुख को कूप।
दुज मैं ही सुख ऊपज्यौ बिध सुं बिधक अनूप॥

[२५७ अ]

प्र० १, प्र० २, प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

नव नछत्र बरसाय झरत बूंद झंपै नहीं।
स्वात सुणत उठि ध्याय सीप सैन कौने दई॥

[२६६ अ]

द्वि० १ :

वेद सकल बस व्यास के व्यास विश्व के हेत।
मंत्र यंत्र सब संयुते याते ब्राह्मण देव॥

[२८१ अ]

प्र० ४, द्वि० १ :

आरत मीठी आपणी ले घर मादा पूत।
श्रावण छाछ न पावती जठे जे पावै दूध॥

म० वार्ता ८ (११००–६२)

[२८२ अ]

तृ० १, च. १ :

आन आपने काज कूं वे होत बड़ाई देत।
काम सरे सुख वीसरे फिर कोउ नाम न लेह॥

[२८२ आ]

च० १ :

आन आपने काज कूं वोहोत करी मनुहार।
काम सर्‌यो दुःख वीसर्‌यो फिर कोउ न बूझे सार॥

[२८६ अ]

च० १ :

आपन कूं जो दुष दहे औरन कूं सुष देह।
ऐसे विरला कोइ नर सो जुग मों जस लेह॥

[२८६ आ]

तृ० १, च० १ :

पर उपकारी कोइ येक होई। जीवन फल जाको जस सोही।
पर उपकार काज के सूरे। पृथमी देव सत सोही पूरे॥
वाको नाम प्रात उठि लहै। सो भौसागर दूला रहै।
औसी वात बेद मों भाषी। और संत जन बोले साषी॥

तरवर कबहूं फल न भषै नदी न अचवै नीर।
परमारथ के कारने साधो धर्‌यो सरीर॥
दाता तरवर देय फल पर उपकारी जीवंत।
पंछी चले देसावरां अच्छा सुफल फलंत॥

(अंतिम छंद 'कबीर ग्रंथावली' की साषी ७३२ है, और गुरु ग्रंथ साहब में भी कबीर के सलोकों मे है : दे० 'संत कबीर')।

[२८६ आ]

च० १ :

तन मन धन सब आरप्यो सब धन दीनो षवाय।
वाणी या सत बरषियो हंसा दियो चुगाय॥
अष्टादश पुराणानि व्यासस्य वचन द्वयं।
परोपकाराय पुण्याय पापाय पर पीड़नम्॥

पर उपकार पुरष हे सत राषे करतार ।
जे उपगार विचारहीं सो कबहुं न आवै हार ॥

[२६६ अ]

द्वि० १, तृ० १ च० १ :

आदौ भंजनं चीरं हारं तिलकं नेत्र अंजनं ।
कुंडलं नासा मुक्ताहारं पुष्पं झणकारत नूपुरं ॥
अंग चंदणं कंचुकि छबिमणी छुद्रावली घंटिका ।
तांबूलं कर कंकणं चतुरया श्रृंगार षोडसां ॥

[३२० अ]

द्वि० १, तृ० १, च० १ :

वैडूर्यं मणिमाणिक्यं हेमाश्रयं उपलभ्यते ।
निराधार न शोभंति पंडिता वनिता लता ॥

[३२६ अ]

तृ० १, च० १ :

पाटल ते मालति भई भंवर भयो मधु मैन ।
जैत सेवंत्री निकट हे निरषै देष हो नैन ॥

[३३८ अ]

तृ० १, च० १ :

जरी मालती संग मधुकर कूं भावे नहीं ।
दिन द्वै रह्यो न सोग लोक लाज सो ही तजी ॥
बड़ नहीं वेली नही नहिं काहू को संग ।
कोन कारन भंवरा रहे सो भसम चढ़ावत अंग ॥
जा दिन पाडलि फूलती रहे तो वाही संग ।
प्रीत पुराने कारने अब भसम चढ़ावत अंग ॥
प्रीत होत तब क्यों रह्यो जर्यौ न वाही संग ।
प्रीत पुराने कारने अब भसम चढ़ावत अंग ॥
ता दिन भवंरा वर नहीं अरबन मों लागी दंग ।
हाड़ भयो टूटत फिर्यो सोले जा ताहूं गंग ॥

गयो न पाछे सावरी अर कोयला बरन सरीर ।
गई प्रीत कहां पाइये सो ढूंढत फिरे करीर ॥

२३८ का प्रथम दोहा प्रायः शब्दशः छंद २४० है।

[२४१ अ]

तृ० १, च० १ :

सिघन बड़ी येह मालती फूलहि फूल प्रसंग ।
सो क्यों भवंरा छाड़ के भसम चढ़ावत अंग ॥
दौ लागी मालति जरी अर भवंरा जरयो तेहि संग ।
छार उड़ावन कूं रह्यो सो ले तारन कूं गंग ॥

[२६२. १ अ]

द्वि० १ :

याको और वचन सुनि लेउं । तब याको कछु उत्तर देउं ।

[२६३. १ अ]

द्वि० १ :

मेरी प्रीत मान निरधारी । हित हित हौं निस वासर सारी ।

[२६३ अ]

तृ० १, च० १ :

जो चित राखै एक सौं तोही निरभे जाय ।
दोय सुख बादल वाजणे न्याय थपेड़ा खाय ॥
(तुल० 'कबीर ग्रंथावली' साखी १६४)

करता जरस न देह जो जनमै तो ने दहे ।
कै मधुकर रसलेह कै दल दाघी मालती ॥
*उत्पति एक समान प्रीत हेत मन दोउ धरै ।
पुहुमि न उगे सूर जो अंतर मालाति करै ॥
*जो कहू जीव में ओर तो साषी संकर देव ने ।
केतन रहै अघोट कै मधुकर परसै मालती ॥
जिहां दई को डर नहीं अरु नहिं पंचन की लाज ।
तासूं बोल बिगूचियै सो मौन भली पछिराज ॥

निस दिन आठू पोहेर मां नेक न बिसरूं तोहि ।
जिहां तिहां नैना फिरै तिहां तिहां देषूं तोहि ॥
बात कहूं तो पीवकी कहूं तो पिव की बात ।
और बात सब बात है बात बात में बात ॥
अली सबै तन पीर है बिना पीर कोउ नाहिं ।
बिना पीर नारी कही धृग जीवन जग माहिं ॥
प्रीत तो ऐसी कीजिये जैसी चंद चकोर ।
साँचि निरखि हारे नहीं धृग जीवन जग माहिं ॥
※ प्रीत जु ऐसी कीजिये जैसे आक औ दूध ।
औगुण ऊपर गुण करै ते उत्तम कुल शुद्ध ॥
रेणा (राम–च० १) तलाई बड फल कायर हाथ षडग्ग ।
गहिली जोबन कृपण धन कारज किण नहिं लग्ग ॥

※ चिह्नित छंद च० १ में नहीं हैं, उनके स्थान पर निम्नलिखित हैं:

मित्र सबीकूं कीजिए जात छांड़ ए चार ।
अहीर नाकेदार नृप चौथी जात सुनार ॥
लेन देन की और है कहन सुनन की और ।
अब मन की मन जानही सो अपने जिवकी दौर ॥
तुम मानो हम बीछरे आ हम मिलवे की आस ।
नैना में परखो भयो सो जीव तुमारे पास ॥

[३७८ अ]

द्वि० १ :

महि लुंठति पादाग्रे कांचन शिरसियार्यते ।
क्रय विक्रय वेलायां काचो काच. मणिः मणिः ॥

[३८४ अ]

तृ० १, च० १ :

जुग बेवहार जानिके डरिये । नहीं तो एक सुनि सत रहिये ।
येह सब बात रामके हाथे । सरवर कौन करै तिन साथे ॥

[३८४ आ]

तृ० १ :

साप सिंह सगाह कटीर चलावै । दाव परैं दोऊ रुख धावै ॥
लिखे लेख सो कबहू न भावै । तीन लोक तजि जाय कहुं आगे ॥

[३८५ अ]

द्वि० १ :

कपिना केन कुर्वन्ति केन कुर्वन्ति योषिताः ।
मद्यपानान जल्पंति किन भण्यंति वायसाः ॥

[३८९ आ]

च० १ :

सत्त सील त्रिया साधक रहई । यह वात तुहूं साची कहई ।

सत्त सील येह प्रीत के जानत येह विचार ।
प्रीत रीत वह कर सकी सो काम कंदला नार ॥

वहुर जैत वूझै अैसी । कुंदला प्रीत केहि विसे कैसी ।
कैसे प्रीत प्रसंग सुनावो । मेरे मन को संदेह मिटावो ॥
कहां को देस कौन सी नार । कैसे प्रीत भई कौन विचार ।
कैसे ब्राह्मण तज्यो हो देसा । कौने कारण गयो परदेसा ॥
मधु वूझे हूं किति येक गाऊं । जो वूझे तो कहे सुनाऊं ॥
पोहपावती पुरी अभिराम । नृप गोविंद चंद तिह नाम ।
धरम धवल हे राजा गुनी । देस देस जिहा कीरति सुनी ।
हय गय संपत वड़ी अपार । जि कैइयेक जुग भुज भार ।
ताकी रानी प्रेम अनूप । निस दिन वदन विलोकै भूप ॥
रुद्रमती जो मनोहर गात । सुंदरि और एक सो सात ।
मानूं सकल काम की कूटी । सोहे रुचि अंग छबि छूटी ॥
अबला बाला मुगधा बाल । प्रौढा कइयक नैन बिसाल ।
रची चित्र विचित्र सरूप । कैयक पदमिनि बस कीन्हो भूप ॥
सद गरु रह सत्त निउदार । गिनत नहीं मद केतन भार ।
ज़ोबन छक्यो छबीली अंग । बाढी नृप सूं प्रीत अभंग ॥
मृग सावक भूले दृग देष । भूले हिम कर ससि बहु लेख ।

बेनी देखत दुरे भुजंग। अलक देखि अलि कूं भयो पंग ॥
भौहैं मांनूं जुगल कि चाप। जिते जगत मनमथ धरे आप।
नासा देखत कीर कुठीर। तजि तत छुन भए अधीर ॥
दसन देखि दारिम दुरि गयो। दूर बज्र सो भाव न हेर्‍यो।
विद्रुम विंब जो अधिक सुरंग। अधर देखि तिन भयो त्रिभंग ॥
कनक पात्र से जुगल कपोल। दस के दरपन सी द्युति लोल।
मधु थे मधुर बचन अभिराम। भूले पिक सुनि स्रवन सुकाम ॥
चिबुक चाह तिल तेजक झोलसे। कुंज कोस जनु अलिकुल बसे।
कंठ कपोत कंबु छबि लही। भुजा मृनाल सम सोभा गही ॥
कुच कठोर श्रीफल सम द्यूत। कमल कली सूं भयो विरोध।
कर पल्लव कामनी उदार। निरजल दल नीके जु कुवार ॥
त्रिवल त्रिबेनी की ढिग लंक। भागि सिंह दूर धरी संक।
कुच नितंव दोउ भारज जान। बेनी बीच धरी त्रिया आनि ॥
मदन सिंघासन से ओ लसे। नृप मनि मानुं कसौटी कसे।
आलस युक्त त्रिया की चाल। मद करद भूले तकि आल ॥
चरन सरोज पंग दल दीप। नख चंद्रिका देषे नग छीप।
नेपुर अरु मंजरी सुवंस। बींबा सावक बोले खग हंस ॥

बिन गेहने छबि गेह रहि न कूं छबि देत।
गोबिंद चंद नरेस को सो पलपल चित हरि लेत ॥

गोबिंद चंद नरेस कि बाम। गुन सरूप कहे जीत्यो काम ॥
घेरि रही छबि विपिन कुरंग। बागुर सो कर राष्यो अंग ॥
बारह अभरन सोलह कला। अरु सिंगार षोडस निर्मला।
बांधे चरन से हिए तासु। बत्तिस लच्छन अंग बिलास ॥
येहि बिधि रुद्रमति पढ़ पाठ। औरनि तुम बिरूप अचाट।
मदसूदन प्रोहित मकरंद। तेहि कुल प्रगटि भयो दुतियो चंद ॥
माधवनल तन धर्‍यो मनोज। मानूं हो फूल्यौ चैन सरोज।
कोट कला जाके गुन अंग। जाने संगीत सुधा सुखधंग ॥
जनम होत जननो अरु तात। पायो परो कुलच्छन गात।
पसु पंखी नर बसे अनुराने। रूपरासि मोहे पग नाग ॥

माधवानल जब जनमियो सबन कियो राग थाल ।
सुर समूह सब पसुपति सुनत भये बेहाल ॥
राग दुर्लभो जानै एक सदन के माहिं ।
सुनत राग त्रिया सबै विरह उपजो मन माहिं ॥

सुनत सदन सबही चलि आईं । विरह विकल कछु कहि नहिं जाई ।
ऐसी कामिनी कुल मिलानी । काम बरत सब सखी रोकानी ॥
ऐसे भए बरस होय चार । सबही मोहे नगर निकार ।
पांच बरस को राग सुनावैं । सुर नर मुनि सुनिके सुख पावैं ॥
यंत्र बनावै परी सुजान । बरस पंचदस रूप निधान ।
राजा पुत्र जानि पोषियो । रानी अपनो सरबस दियो ॥
राजा कहै सुनि माधो नला । तो मुख हरीचंद की कला ।
रूप देखि सकुचे नृप बेन । रति पति भूलि दुराये नैन ॥
बन की रच्छा करो कुवार । जैसे परिबल चढ़े अपार ।
कस्तूरी केसर अरगजा । सींचहु द्रुमबेली मनरजा ॥
जासे बास चढ़ै चौगनी । फूलि फूलि बेल बढ़े पुनि ।
नृप आयस तें गयो अराम । जनु बसंत रित फूल्यो काम ॥
माली के बालक नव बेस । ते दिन हेतु स संग नरेस ।
निस दिन जतन करावे सोय । जैसे फूल नवेला होय ॥
चढ़ै चौगनी बास सुवास । मधुपति न छंडे तिहपास ।
राजा रीझ देत बहु दान । गिने पुत्र थे अधिक सयान ॥
बैठो रहे सरोवर तीर । सुंदरि भरन गई तिहां नीर ।
रूप देखि मोह्यो सुंदरी । सीस लिये जल गागर भरी ॥
कैयेक मुरछ परी दग लाजे । मानहु हरी काम मृगराजे ।
मधूमाख ज्यो रहि लिपटाए । दिवस अस्त भये मंदिर जावै ॥
पति सूं कथा कहे आपनि । नैनन की सुधि भूली तेह तनि ।
मिलि सब सूं दोही सोऐ नार । मारी सकल मैन रस भार ॥
अति बेहाल तन कीन्हो दावे । राख्यो माधवानल पर भावे ।
सुत पति गृह छाड़ी यह आने । लिखै चित्रणी चित्र समाने ॥
दिवस चरित्र ये तो सब करे । राति आपने पति पर रहे ।
डारी सर मोहिनी सनेहे । ताते त्रिया संभार न देहे ॥

माधव बिप्र प्रवीन छरी निस के धरा।
पुर प्रमदा भई लीन सुत छाड़े पै नेह न तजे ॥
आकुल व्याकुल सुंदरी रति नहिं छोड़ै क्लेम।
लाज कूं चिक डारके चली जो द्रुज के प्रेम ॥

चढ़ि सतषंड बजाई बीन। तजो नेम सुंदरी कुलीन।
पतिबरता परकीया चली। कुलटा औरते कपनी बली ॥
भूषन उलटेउ उलटेउ चीर। उलटे कंचुकि थूल सरीर।
कंठहार पावन सूं बंधे। नूपुर माल कंठ सूं संधे ॥
येक नयन कूं अंजन दियो। बिरले येक नेन मधु पियो।
जे असनान समै सुंदरि। ते चलि नगन रूप गुन भरी।
तिनो का करी पति नाज अनूप। पय पावत सूतत जो सरूप।
साह गयो थो येक विदेस। आयो ग्रह तिह नाव महेस ॥
भूये पर भोजन परसन लागी। भूली थार बिप्र गुन आगी।
ज्यों मृग मोहि रह्यो सुनि राग। त्यो मोही पिया रूप सोभाग ॥
डगर चली मृग सालक माल। चे आनसे गुन नैन बिसाल।
येक अलंग न दई सो वाम। येक न द्रुज परसे अभिराम ॥
येक रही कर संपुट जोरे। येक न मान कियो मुख मोरे।
येक जो बैठी चरन पसार। येक दई हित आपन पगार ॥
अधर पानि येक बनिता दियो। लोचन चपे छुपम पियो।
च्यार जाम निसि जाग ज मीहाये। कोट कूदमा धायै जाये ॥
उनरै पैर कारी बिन डोरे। पति सूं आनि मिली भये भोरे।
खुनमारी सब पूरी जने हे। कबहुं न द्रुजकी बातें कहै ॥
काहां लों रहैं आय सब बाजे। नूप सूं कहन लगे तजि लाजे।
अंतर कथा कही अभिराम। वन क्रीड़ा कूं चली वर बाम ॥

।

रुद्रमती बनकेलि कूं चली साजि सुषपाल।
संग सहेली पांच दस मृगनैनी जु बिसाल ॥
द्रुज माधव भरि गोद फूल दियै चौसर क्रिये।
बढ्यो त्रिया कूं मोह मदन बान लागौ हिये ॥

(कवि वचन)

करि माधव अंगीकृत मोहि । तन मन प्रान समरपूं तोहि ।
देखत तेरो रूप अनूप । भो मन में भूलै निज भूप ॥

(माधव वाक्य)

माधव कहै माता सुनि बात । वैप्र पुत्र सम मेरो गात ।
पश्चिम सूर उदै जब करिहै । तब माता मेरो व्रत टरिहै ॥
गुर पतनी अरु नृप की नार । मित्र गुनी करो करो विचार ।
सासू जननी पांचो मात । ताते करो धरम की बात ॥
मेरो धरम न ऐसो होय । माता मोहि हंसै सब कोय ।

(रानी उवाच)

सुन रे विप्र मूढ़ अकुलीन । पसू पषान ग्यान रस हीन ॥
क्रूर कृपन कायर मत चोर । नेक न भीजो प्रेम कठोर ।
सुर की नार चंदा ले गयो । ताको कबहुं न अपजस भयो ॥
सुग्रीव की तारा सुंदरी । जो वालि निग्रहनी करी ।
तिण कछु ये नहि जान्यो दोष । राम बाण से पायो मोख ॥
तोकूं कहा लगे अपराध । करे अंगीकृत मेरो साध ।

(माधव वाक्य)

जननी ते पय प्यायो मोहि । और बात क्यूं देषूं तोहि ॥
मेरो कारज क्यों कर होई । माता मोहि हंसे सब कोई ।
काज अकाज कीन्हे करतार । तेहि न चीन्ही मूढ़ गंवार ॥
ते सुक तकि तकि मुगध न लहै । नर्क कठोर यह माधव कहै ।
अंगीकृत माधव नहिं कियो । राणी मनूं हलाहल पियो ॥
रिस करि चली नृपति सुंदरी । मानूं रूई अगन सो परी ।
वेगि चेन रति नीच गंवार । तू कहा जाने केलि बिहार ॥
जो कबहूं फिर देषूं नैना । सूलि देवाउं ता दिन ऐना ।
माधवनल व्रत राख्यो स्याम । गई रुद्रमति अपने धाम ॥
नगर लोक सब लिये बुलाय । सकल पुकारो नृप सूं जाय ।
राणी मतो कियो अति गूढ । की हम राखो की दुज मूढ ॥

जाय पुकार्यो नृप सूं लोग। बनिता पियासूं रच्यो संजोग।
रात दिवस माधव पै रहै। लाज छाड़ि सब पुरजन कहै॥
तेरो धरम राज नृप बली। ताथे कीरत बसुधा चली।
माधवनल द्रुप दीन्हीं देव। करत न बने तास को भेव॥

(राजा उवाच)

राजा कहे सुनु मेरे मीता। अब जनि करो ग्रह की चिंता।
देसहि थे द्रुज देउँ निकाल। क्यों मोही सठ पुरि की नार॥
पठये लोक सकल समझाय। माजवनल कूं लियो बुलाय।
कुसम भेंट नृप आगे धरी। केइ येक फूल निछावर करी॥
सनमुख ठाढ़ो भयो कुंवार। भूलि गयो भूपति के बहार।
गद्गद् कंठ सजल भये नैना। ताके कहत बने नहिं वैना॥

(राजा उवाच)

माधवनल निज औगुन तोही। पुरिजन आनि सुनायो मोही।
कैयक दिवस पुरी छाड़ो देस। जावो द्रो द्रुज कह्यो नरेस॥
षिन येक मीत बजावो बीन। ताथे मोहि होय उर चैन।
येतना कहि धरी बीन रसाल। सुनत राग मोह्यो महिपाल॥

नरपति तीय सुनी सबे षग मृग नगहि समान।
रचे राग मो गुन लिये सो कोउ न पावे जान॥

सुषि जन कूं सुष बढ्यो अनेक। दुषित बिनोद कियो छिन येक।
स्रवन सुनत हिरदे सुष भयो। मनमथ द्रुजहि रंग अति ठयो॥
कामनि कूं अति वल वे राग। अलि कूं वल भयो पंच वे राग।
मोहि रह्यो नृप गोविंदचंद। मोहनि राग कह्यो मकरंद॥

कहे राजा माधव सुनो कौन राग गुन तोहि।
के से विध मोहे सबे कहि सुनावो मोहि॥

करो राय सुर नर मुनि मोहूं। कहो पताल से सेष बुलाऊं।
कहो तो काम रस बिरह बुलाऊं। बाल त्रिया कूं काम जगाऊं॥
काम बिरह रस कहो मेरे मीता। सुनत राग भागे मेरी चिंता।
तेही राग मोही वर बाम। वोहि मोहि सुनावो अभिराम॥

कमल पत्र मंदिर में बिछाय । बाल त्रिया कूं लिपि बुलाय ।
कह्यो राग कछु कहत न आवे । बिरह राग काम रस गावै ॥

बिरह बिथा तन सों भई कहत न आवे सोय ।
पीउ पीउ पुकारहि झरत काम रस होय ॥

झरे काम कछु कहत न आवे । जब राये मन षोषो पाये ।
गुन अथाह बिप्र बाली बेस । जावो हो दुज कह्यो नरेस ॥
नाय सीस माधवनल चल्यो । राये नृपति राग उर सल्यो ।
प्रजा सकल कीन्ही अति द्रोह । ताते दुज सूं भयो बिछोह ॥

बिप्र सुनायो राग भयो नृपति के दाग उर ।
तब कहिये बड़े भाग जब प्रीतम फिर के मिले ॥
गुनी दरद गुन जानहीं मूढ़ न जाने कोय ।
मिलि बिछुरे की चोट येह दरस सजीवन होय ॥

तीरथ सकल किये दुजराज । कीनो सब पुरिषन को काज ।
फिरत फिरत पायो बिसराम । दच्छिण देस त्रिया अभिराम ॥
बिद्या नगर नगर कामिणी । तेहि पुर नार चित्रणी घणी ।
मोहि रहीं दुज माधो देषि । लुब्धावहिं जित्रव फल लेष ॥
घेरि रही ललिता मकरंद । ज्यों चकोर चाहे मधुचंद ।
दिवस सात दिन रह्यो बरबीर । विंध्या नगर मांझ धरि धीर ॥
औगुन प्रगट होत तहां जान्यो । चल्यो बिप्र मन संका आन्यो ।
कामापुरी नगर एक नाम । कामसैन नृप मूरति काम ॥
ताके पातर काम कुंदला । छबि की सीमा इंदु की कला ।
प्रेम भाव ते नृप की आय । कल न पड़ै छिन देषे ताहि ॥
द्वादस बरस समै सुंदरी । अबला अलोल काम रस भरी ।
पढ़ै छंद सब संगीत कला । पायो नाम काम कुंदला ॥
बाजा सकल बजावै आप । ताथें गुन न सहे प्रताप ॥
कंस बंसि तंत अरु चरम । च्यार सबद ये च्यार सुकरम ॥
आदि निषाद रिषभ गंधार । षड्ज सूधि संगीत बिचार ।
जीव पांच श्रुत्र लिये तास । गावे कि फिर उमगे गात ॥
आलत नतिन येक मूर्छना । ग्राम च्यार जाना कबि जना ॥
कला बहत्तर जाने , सोय । सो नटनी नट नायक होय ॥

काम कुंदला ये सब पढ़ी । तापें कला अंग अति वढ़ी ।
तिहां दुआदस मौज मृदंग । आवे छबिन रवाब सुरंग ॥
घटै न ताल जाइ नहिं मान । उघटै सबद करै बहु ज्ञान ।
पुष्प अंजलि भरि सुंदरि लई । जामे भाग डार गति कई ॥
जितहि दृष्टि तितही सत क भाये । जितही रास त चित समाये ।
जितही चित तित ज्ञान प्रकास । जितही ज्ञान तित नृप पे वास ॥
जितेत बड़े दुरमई अनूप । उरप तिरप रीझे गुन भूप ।
चौसठ कला अध चक्रावलि । लागे दांत जाने गति भलि ॥

सुंदरि कला निधान मूरख नृपति जान नहिं ।
देवन रीझे के दान ताथे रुचि घटि जाय मनि ॥
कामसेन नृप काम किम जानहिं इंद्र समान ।
काम कुंदला उर वसी रंभा रूप निधान ॥

जीती सभा काम कुंदला । ता समैय गयो माधवनला ।
ठाढ़ो भयो पौर मे जाय । विप्र बोलिया लियो बुलाय ॥
अरे प्रतिहार कहे दुज देव । नृप सूं जाय कहो यह भेव ।
सकल सभा नृप मूरख आद । सुंदरि तनी कला सब बाद ॥
ये तो सुनत दरबारी गयो । मध्य अषाड़ा ठाढ़ो भयो ।
सुंदर कुंवर नवल मकरंद । कंद्रप आहि किधूं आहि चंद ॥
सकल सभा सूं मूरष कह्यो । वाको भेद कौन नृप लियो ।
ठाढ़ो हतो सातई पौर । मोसूं कह्यो जाय कहि दौर ॥

रे प्रतिहार गंवार सुनि यहु कहु दुज सो जाय ।
मुगध सभा क्यूं जान भनि यूं पूंछत नृपराय ॥
उलटि गयो प्रतिहार जिहां ठाढ़ो थो सुबुध गुनि ।
कहि दुज एह विचार मुगध सभा क्योंकर भनी ॥

कहे विप्र सुनि रे प्रतिहार । मूरख तनो जो बुधि विचार ।
द्वादस बजे मृदंग की धुनि । कहहिं विचित्र आहे सबगुनि ॥
पूरब मुख मृदंग प्रवीन । दछिण दिसा कर अंगूठो हीन ।
ताथे कला जाय घटि येक । पंडित विना कूण करे बिबेक ॥
कहिये नृपति सूं जाये धीर । देवतहि सूप्यो बड़ो सरीर ।
दरबारी नृप सूं कही जाये । वोहि मृदंगी रायलियो बुलाय ॥

देख्यो दिन अंगुठो नृपराज । सब तेरो भयो पूरन काज ।
कहाँ गुनी आयो इह ठौर । देखे कवि पंडित सब ओर ॥
रीझ्यो नृपती बिसर्यो भर्यो । तुरत बुलाय बिप्र कूं लियो ।
आयो माधवनल मकरंद । ज्यों नखत्र मों दुतियो चंद ॥
उठि आदर कीन्हो नृप ईस । अरपंन्न तिह नायो सीस ।
आयो आसन दीन्हो डार । पुनि भूपति कीन्हो जुहार ॥
पंच प्रसाद रीझ नृप दियो । माधवनल आदर करि लियो ।
कामकुंदला हरषित भई । मोहन कला केलि अति ठई ॥
मेरे गुन को ग्राहक आयो । बैठो दुजमनि राजा पायो ।
अब सब कला सुफल भई मोहिं । देख्यो दुज माधवनल तोहिं ॥
पूरब जे तो नृप मैं कियो । सो तो वृथा भयो रुचि लियो ।
बिन पंडित को जानै कला । सुने बिप्र दुज माधवनला ।
गुनी देखि गुन खुले कपाट । नृत्त करन कूं लागी चाट ।
अंतरिष्य मंद्धर गति लई । उलटी भावरि सुंदरि ठई ॥
कैयक लगे दाव बहु भेद । देखत दुज कूं भयो प्रसेद ।
रोचन मांगि सखी पै लियो । बहुर त्रिया येक कौतिक कियो ॥
धर्यो नृपति आगे आगे आन । माधव बिप्र येह गत जान ।
तिर पेलत सुई चरनन लागे । ऊपर फिरे चक्र ज्यों जागे ॥
चरन अंगूठो रोचन ल्याइ । त्रिया तिलक बहु कियो बनाइ ।
नेक न कला भई कछु मंद । बढ़ी अति कला दुतियो चंद ॥
कलस ढंढ पर अद्भुत वात । नेक न नारि सकोर्यो गात ।
गुनी फुनि भई कामकुंदला । मुरछि गयो दुज माधवनला ॥

काल डस्यो जु प्रान तजे जतन की जीवती ।
गुन के डसे निदान जीवे तो फिरि नर न मर ॥
गुनी दोउ गुन थे मिले कोउ अंग नहीं हीन ।
दुज बिन सूके सुंदरी बस करि राख्यो नैन ॥

चंद नखोरग दरस जानि । कुच के आइ अग्र बैठ्यो आनि ।
डसे भमर बिन सुमरे अनंग । वृथा होय तहां बढ्यो तुरंग ॥
सोच कियो सुंदरि मन बीच । बैठो भमर जानु रसकीच ।
जो करके अलि देउं उड़ाय । माधव हसे कला सब जाय ॥

सकल अंग को अचयो पौन । छिन थके रही त्रिया धरि मौन ।
कुच के छिद्र हो काढ्यो तास । भमर उड्यो फिरि भयोविलास ॥
धिन येक नृपति बदन तन चाहि । पंच प्रसाद रीझि दिये ताहि ।
सीस चढाय लिये सुंदरी । मुख थे कीरति गुन विस्तरी ॥
दई न भूप कला पर दान । राषी रुचि ते विप्र सुजान ।
राजा कोप कियो मन बीच । विप्र न आहे होय कोई नीच ॥
पंच प्रसाद मुग्ध क्यूं लियो । कारन कौन पात्री कूं दियो ।
ब्रह्मजोनि की चिंता मोहि । नातर सुंदरी देवउं तोहि ॥

(विप्र उवाच)

ऐसे गुन पर विप्र सुजान । पंड पंडकर डारूं प्रान ।
तेरी झूठ न दई नरेस । कित्त दुष पाव[क ?]करूं प्रवेस ॥
रीझ पचावे सो नृप मूढ़ । रीझ देत सो जगत अरूढ़ ।
मृग सो दाता और न होय । डारे गुन पर प्राण विगोय ॥
लम कुसुवास मास नर लेइ । सींगी जोग नाद चित देइ ।
ब्रह्मचारि कूं तुचा अनूप । इह विधि तन बाट्यो मृगभूप ॥
गिर उपमा सुंदरी कूं दई । रंभा कला छीन सब लई ।
मोहें काइ दियो कला पर दान । मेरी जूठन दई सुजान ॥
दीन्ही सैन काम कुंदला । चल्यो बिरचि दुज माधवनला ।
सुंदरि येक संग करि दई । सो दुज कूं ले मंदिर गई ॥
जिन येक कला देषाई भूप । लइ प्रसाद गृह गई अनूप ।
माधव के देषत भयो चैन । रोम रोम के उमग्यो मैन ॥
गंगा तल कर धोये पाय । दई सुंदरि सेज बिछाय ।
केसर मृगमद और सुगंध । पूजे माधवनल मकरंद ॥
लौंग सुपारी लायची पान । बीरा करि धरी त्रिया सुजान ।
भोत भाव करि आदर कियो । पलक मांझ दुज कूं बस कियो ॥

को जाने गुन षोज ढिग मूरख मेढक बसे ।
धन अलि धन सरोज निसरी मिल गुन कू गसे ॥
तो गुन कह जाने नृपति जो न भली मति होय ।
षोटे नग के पारखी षरो न पायो सोय ॥

भूषन सकल उतारे दास । केसर तन उबटो अभिराम ।
न्हाय सीस थें ठाढ़ी भई । घन थें मानूं बिजुरी लई ॥
बिन भूषन भूषन सी लसे । दूषन थें भूषन तन कसे ।
षोडस कीना अंग सिंगार । चली नैन मद जोबन भार ॥
दरपन ले दमके दुजराज । देष्यो अपनो सकल समाज ।
अस उपज्यो जान्यो सुंदरी । तब त्रिया हँसि बीरी सुगधरी ॥
छुटे गान रहे मिलि दोय । सुन मिलाय सुष लहे न कोय ।
गाढ़े आलिंगन चुंबन हास । पाय बस कीन्हो मैन बिलास ॥
नष ते लागे दोउ कुच सीस । भाल चंद मानूं रवि ईस ।
पल सम रजनी गई बिहाय । सुरत बिब दोउ उठे जमहाय ॥
येह बिधि दिवस तीन सुष लियो । काम कुंदला दुज सूं कह्यो ।
मैं तन मन धन दीन्हो तोहि । आपहु बिप्र दया करि मोहि ॥
रह्यो कछूक दिन सेऊं पावं । प्राणनाथ करि सुमरूं नावं ।
बिरह साल उपजो मोहिं अंग । जनि दुज करो प्रीत रुचि भंग ॥

माधव कहे बिरंचि जो फिरि रचि रचना करे ।
काम कुंदला बीच और त्रिया सो उर न धरे ।
जागत सोवत सपन मों देषूं सूरत येक ।
सो लोचन लोचन नही सो लोचन बिन देष ॥

माधव कहे काम कुंदला । तो मुष हरिचंद की कला ।
मो द्रग चितवन रहे चिकोर । जो द्रग ये देषे निस भोर ॥
रह्यो न जाय नृपति के संक । नृप बिरोध बहु सुंदरि बंक ।

(कामकुंदला वाक)

आवे छाज महल केहि काज । तामे रह्यो मीत दुजराज ॥
नृप कहा करे हमारो देवे । जो राषू जो लहे न भेवे ।
चल्यो चित्त थो निधर मीता । त्रिया कूं बाढी बिरहकी चिंता ॥
दीजे उदक हमारे नाम । जनम जनम के छूटे पाव ।
चढ़ी सतषंड धरि के मन छोहा । मुष माधव माधव को मोहा ॥
जब लगि दुज देष्यो भरि नैना । तब लगि भयो त्रिया को चैना ।
मुरछि परी भू अरही न प्रान । जतन कियो सहचरी सुजान ॥
सभ्रम काम पूछा रति बाल । उमा समारी सिव ततकाल ।

अरु चित भ्रम सुरपति कूं भयो । अगिन जुवाल कुं ढुंढन गयो ॥
चंद कहे मरी निजु कला । विद्युत पात भयो महिपाल ।
की कोउ मुरछी अपछरा । की रवि किरण टूट्यो धरा ॥
की सुरपति की सुंदरि परी । की उडुगन मुरछी सहचरी ।
कांम कुंदला मुरछी ये तो । भ्रम भयो सकल लोक कूं जेतो ॥
बिरह कुठाहर हई मानु बेल । टूट परी सोभा उत मेल ।
माधव नाम सुधा रस पियो । ताथे प्रान बिधाता दियो ॥
पहर एक लो मुरछी रही । जागी पीर सखी सूं कही ।
गयो नगर से छुटि बाम । कित ढुंढुं पाउं अभिराम ॥

ठाढ़े कुंवर नरेस केतेक सूं हित कर त्रिया ।
बिप्र दलदी दीन मुष व्रत तैं ताको लियो ॥
लघु दुतिमा को चंद जाकूं नमे नरेस सबै ।
पूरन ससि गुन मंद गुनहि उदित जग पूजही ॥

तनक अगन बारे सब ढंग । तनक सिंघ जो हते मतंग ।
तनक चंद कूं नमे नरेस । तनक बुद्धि जीते कई देस ॥
तनक नगन को होत बहु मोल । धरा दीजिये तिनके तोल ।
तनक बिप्र सोही माधवनल । गुन द्रिग लघु मति निर्मल ॥
इम उपमा दुज कूं त्रिया दई । सुनत सषी सब चितभ्रम भई ।
माधव निकरि गयो बन मांह । बैठो येक तरवर की छांह ॥
धरी कंध पर बीन सुरंग । सुनत राग षग मृग भये पंग ।
घेरि रहे गज सिंघ अनेक । ठौर बैठि मिल रहे जु येक ॥
हंस येक आगे हुइ चल्यो । ताहि देष माधो दुष सल्यो ।
ते हरी कामकुंदला की चाल । अरे चोर पग राज मराल ॥
पर दुष काटण विक्रमसेन । सुन्यो दूर से पुरी उजैण ।
तासूं माधव करन पुकार । चल्यो अंग वाढ्यो दुपभार ॥
जोजन सात पुरी परमान । चहुं दिसि ताल अनूप निमान ।
सिप्रा नदी ता संग में बहिये । न्हाये चार पदारथ लहिये ॥
महल सात खंड छजे विसाल । ताको पति विक्रम महिपाल ।
चहुंदिस बने बगीचा बाग । ते मधि पतीसु गंध्रपगाराजान ॥

जानि मन धरयो रिपु ईस । महाकाल कूं नमायो सीस ।
तेहीं मदन राषि सूलपानि । तुम हो सिद्ध सुधा अतिदानि ॥
पायो रात कामकुंदला । सुमिरि विप्र सोई माधवनला ।
लिषा सिला पर दूहा दोय । वाचे दुष जाने सब कोय ॥
लिष दूहा माधवनल गयो । तेहि ठाम प्रगट महीपति भयो ।
लिष दूहा दोय माधवानले । काम कुंदला उर मों सले ॥

नाहिंन रघुपति नृपति नल जे दुष वाटें येह ।
काम कुंदला तो विना कियो काम तन षेह ॥
विरला नर गुन जानहीं विरला निरधन नेह ।
विरला रन मों जूझहीं विरला तन दुष देह ॥
विरलाः जानंति गुणान् विरलाः कुर्वन्ति निर्धने स्नेहं ।
विरलाः रणेषु धीराः परदुःखेनापि दुःखिताः विरलाः ॥

दूहा लिष माधवनल गयो । तेहि ठाम प्रगट महीपति भयो ।
नित प्रति विक्रमसेन नरेस । पूजे विधि सूं आनि महेस ॥
देषे दूहा जुगल अनूप । अति दुष जानी विक्रम भूप ।
अंन निरत वत जो निरींद । सो यो रात न आई नींद ॥
जब लग दुष ताको नहिं कटे । तब लग उर मेरो अति फटे ।
पठये ढूंढन दूत अनेक । ढूंढ्यो माधव बचो नहिं येक ॥
गली कूचा चौहटा बजार । ढूंढत थाके दूत हजार ।
पायो विप्र न वाढी चिंता । आई बिसवा बाहन चढ़ी तुरता ॥
क्यों चिंता करो नृपराज । तो कूं दुषी देषाउं आज ।
बन मों सोवत पायो सोय । लियो उठाय सुंदरी दोय ॥
मनि मानिक हरि लीन्हा मोरे । नृप लै सूली देवाउं तोरे ।
मुख मो कामकुंदला जाप । दमकत उर में काम प्रताप ॥
आनि नृपति पै ठाढो कियो । तिनकूं रात्र उदे बहु दियो ।
पूछे राव बात कहि तोहे । कंत दुष दुषी सुनावो मोहि ॥

जहां लगि महि अरु चंद रबि पवन वहे जल गंग ।
तहं लगि जीवो भूपमनि विक्रमदेव अनंग ॥

पर दुष काटण भूप छावे तोहि किरत महिं।
जीवन तोहि अनूप असो जीवन जे जीवे॥

राजा कहे विप्र सुनि वैनं। तेरे अति दुष दायेक नैण।
कौन दिसा थे आयो देव। रहो तो करूं तुहारी सेव॥
कहा की विरह उदासी भयो। दुष में मगन भयो सुष गयो।
मोसूं विप्र सुनावो वैण। ताथे तो उर उपजे चैन॥

(माधव उवाच)

कामापुरी नगरी येक नाम। कामसेन नृप मूरत काम।
ताके पातर काम कुंदला। तिन मोह्यो दुज माधवनला॥
जो वह त्रिया मिले नृप बीर। तो जिव माधव धारे धीर।
मो जीवन नृप तबही होय। काम कुंदला मिलावे सोय॥

(राजा उवाच)

दुज कन्या मेरे पुर मांझ। करूं व्याह दस होय न सांझ।
रूप नहेली षरी नवोड़ा। बड़ी चातुरी चातुर प्रौढ़ा॥

(माधव उवाच)

जेहि के हरि षायो मृग मांस। सो अब सिंह चरे क्यों घास।
जेहि अलि सेयो पंच वेराग। सो क्यों बसे आक बन बाग॥
जेहि चकोर अचयो रस चंद। सो क्यों अन रस पिवे जो मंद।
जेहि चात्रिक स्वात जल पियो। सो चात्रिक नहिं अन रस लियो॥
जेहि चाष्यो अमृत मधुराये। ताहि और रस मन न सुहाये।
काम कुंदला मिले नरेस। नहिं तो येह सीस चढे महेस॥
उद्दिम किये सकल सिध होय। उद्दिम बिना न जीवे कोय।
उद्दिम थे पाई येति ध्यान। उद्दिम सो गुर और नआन॥
तेज बिना न विराजे भूप। बुद्धि बिना दीजे दीन विरूप।
रूप विना सुंदरी विराट। वानी विना कवेसर भाट॥
दुज हठ देषि सजो दल भूप। राना राव जो सुभट अनूप।
चहुँदिस फिरी देस महं आन। करू बीर सब पेजे प्रमान॥

जेहि केहरी गजराज के हने कुंभ निज माथ।
ते परकारज सूरमा टेक बज्र की माथ॥

आपनो सुभ दग देदई आगम सुनैं न गान ।
जागे भन खिलसई सो नर देव समान ॥

साजी विक्रम सेन रामुई । पूजे सुभट बदन पर रुई ।
काहू देन नर रहे न मौन । विक्रम सुकम गैर सो कौन ॥

(छाटक)

गुंजत भौंर कमल रुचिर मति भटारो मेघा रूप अनूप ।
भूपति धन झुकार भूरी रह सोहे फेजाम पीठ ॥
विषम दाल झूलें घंटा घुंघर लाल मंडी तगर ।
हाथी सब सज लाये जड़ित नरा सब सिर पर ॥

(घोड़ा बरनन)

काले काल कुरंगा रंग रुचिर धाये तुरंगातुरा ।
छुति छत लगाये ते चपल लुवे पूरा भूधरा ॥
सजे पाषर जिनके जमावर गौड पूछा आछे बरा ।
कंडानगबूर पेसल पगानि देदि भोडेपठा सजी सेन अनूप ।
गज हय सुभटवर भूतल विक्रम भूप ऐसो कोइ न भूमपर ॥

(दोहरा)

बरनूं रजा रजपूत की रस लिये अंग अंग ।
दुरजन दल देपत गिरे दीपक माहे पतंग ॥

चहुवान वैस गोतम पंवार । गेहलौत खींची संधार जूझार ।
कछवाहे धीर तुवर प्रचंड । आब गढे गौड़ गोयल अपंड ॥
रण रीझत रीत राठोड़ महा । पती सूपवैया लड़े छत्र कि छांहे ।
परियार भार सेंगर सपूत । करचुलि हन हाड़ा अभूत ॥
मरदाने सौरी गोहल सुजान । सूने राठोड़ आडेल अमान ।
जदुवंस अंस जादव अभंग । गिरनारे कैईल सूर किसू घंट ॥
जे वारे जोधा दीसे अक्रोध । जल बढ़े जुद्ध बंछ बिरोध ।
बलिवंत संत दोले बगेल । सीसोदिया सूर बिकट चंदेल ॥
नरनाह मीत नरभो निकुंभ । बड़ गूजर ढीग रहन सूम ।
छुरि जंग रावन बैरि अंस । बहुबाने छिपागरी पयान ॥
किये पुंज दागी अमान । घेरे बुंदेले अर गहरवार ।

तजि वंक संक अरु सीकरवार। येती जात और को गने बीर ॥
भई भीर आनि दरबार भूप। अस्व चढ्यो बल विक्रम अनूप।

तिनके सिर तनु काजरे सेह न उतरे आन।
मर जात रज लाज के वजत न रहे निसान ॥
सजे सहस दस बीर जे विजई बहुजंग के।
बंधे सीलहे सरीर जातक पंच पुरी अंग के ॥

सुदिन देषि नृप कियो पयान। उड़ी हेज रज छायो भान।
धरा धसि गई आड़े सेन। नै जैं अमर उच्चरे वैन ॥
चंचल भए [सकल ?] दिक्पाल। दो गाज कि गति भई वेहाल।
भूपति मिले और करि साज। कापर कोप कियो नृपराज ॥
जोगनि भूत भयो मन छोह। जंबुक ग्रद्ध असासे लोह।
माधवनल्ल कूं लीन्हो संगा। चल्यो कूंच करि नृपति अभंग ॥
दीरघ घन से मधुर निसान। सुभट हाक को सुन नहि कान।
नदी नद मांझि उड़ी धूर। सायर लीयो चरन सुपूर ॥
दिन दस बीस मांझ वेही देसा। गयो कोप करि विकट नरेसा।
जोजन आध कामापुरी रही। विक्रम तवे बसीठ सूं कही ॥
जावो सुमति कहियो यहे बात। जो बल होय तुमारे गात।
कै सजि सैन अंत्रि करि लेहु। कै त्रिया काम कुंदला देहु ॥
गयो वसीठ काम नृप सभा। तेज पुंज दिनकर सम प्रभा।
उठि कै राव कियो सनमान। आदर कियो दिये कर पान ॥

(वसिष्ठ उवाच)

जो अपनो भलपन जानो। कामसेन [तो ?] मो मत मानो।
आयो कामकुंदला हेत। विक्रम भूपति सेन समेत ॥
दीजे काम कुंदला नार। विक्रम सूं करिके मनुहार।
करि मनुहार कुंदला देहु। जैसे तुम सूं जुरे सनेहु ॥

(राजा उवाच)

अरे बसीठ कुरस मति चले। देत न बने काम कुंदला।
हम तुम मिले जढग की अनी। लै आवो सेना आपनी ॥
बस्यो वसीठ सत वेही ठौर। विक्रम मतो प्रकास्यो और।
भांट भेष करि आपन रूप। आपुन वलि करि गयो तहां भूप ॥

भैला दगाद पैहर लिया रंगा । संदक कोउ न ताके संगा ।
औन परिच्छा देन नरेस । कामापुरी मों कियो प्रवेस ॥
देखि लियो चहूं दिस पुरी । ठैरे गज धूम बहु तुरी ।
धायो काम कुंदला गेह । पैंडी द्विज को लिये सनेह ॥
विक्रम जानि लियो दरबान । तासूं कह्यो सो भेद सुजान ।
दाता जानि काम कुंदला । हूं आयो याही मति बला ॥
जाके कह्यो त्रिया सूं ततकाल । उचित देवो धन सौज विसाल ।
तब दरबारी त्रिया सूं कह्यो । श्रवण सुनत कछु सुध न रह्यो ॥
देख्यो पर दुख काटण भूप । चत न चातुरी चाल अनूप ।
ऊंचो कर करि दई असीस । तू नर नाथ अवंती ईस ॥
नाहिन भांट के लछन येह । दुखिजन सों नित नयो सनेह ।
सो कारन आयो नृपराज । तुमकूं आपने बिरद कि लाज ॥
वीणा हाथ और झारी कसी । भांट भेष की सोभा लसी ।
बिहसि भूप तब ठाढ़ो भयो । कामकुंदला तेहि लपि लयो ॥

दिव्य दृष्टि वहि बाम की लप्यो भूप बिन काज ।
छिपे न जतन अनेक सूं भनि ढाके उदराज ॥

(राजा उवाच)

मोहि तोहि कितकी पहिचान । हूं जाचक दे सुंदरि दान ।

(कामकुंदला उवाच)

जाचक केइक किसे धनपाल । तू बिक्रम नृप दीनदयाल ॥

(राजा उवाच)

नैन सजन सुप माधव जाप । को सुंदरी तिह सहे प्रताप ।
दीननि तुच्छ तु अबला बाल । बिधु बदनी मृगनैनी रसाल ॥
माधव कौन कहा वे बाम । जाको जपे निरंतर नाम ।
रही मलिन होय सोभा डार । येहि समय सुप कीजे नार ॥

(कामकुंदला उवाच)

आयो द्विज अभिराम माधवनल निजु नाम तिह ।
ताबिन व्यापै काम जुग सम जा मनि नाम बस ॥
दुष थो निसूं धरि गयो सुख लीन्हो हरि मोहि ।
फिरि मिलाप बिधना रच्यो ताथे पठायो तोहि ॥

(राजा उवाच)

माधवनल येक बिप्र सुजान । रहतो महाकाल के थान ।
रूप अनूप गुन सील समेत । मर्‍यो बिप्र सोइ त्रिय के हेत ॥
येह सुनि मरी काम कुंदला । सुमर्‍यो बिप्र सोइ माधवनला ।
उठि भागो भूपति ततकाल । आयो जिह ठाय विप्र रसाल ॥
सुत माधव हूं जिय पे गयो । तेरो नाम लेत सुष भयो ।
लई परिष्या लघु मति करी । मरयो तोहि सुनि त्रिया सो मरी ॥
बार तीन सुमर्‍यो यूं बाम । मर्‍यो बिप्र पल मों अभिराम ।
राजा षडग कंठ पर धार्‌यो । सुंदरी मरी बिप्र मोहि मार्‌यो ॥
संकट जानि बिप्र बेताल । नृप को हाथ ग्रहो ततकाल ।
काहे मरै महीपति मूढ़ । कर संकट अपनो सब गूढ़ ॥

(राजा उवाच)

जो जीवे दुज माधवनला । अर त्रिया जीवे काम कुंदला ।
तब मेरो जीवन फल मीता । तो बिन कौन निवारय चिंता ॥
गयो पताल बीर फुनि धाम । लायो अमृत दुज के काम ।
माधव के सुख दीन्हो सोय । जेजै कार बिस्व में होय ॥
उचर्‍यो नाम काम कुंदला । जियो बिप्र सोइ माधवनला ।
दोई गये त्रिया के पास । मुष मों अमृत मेल्यो तास ॥
माधवनल करि उठी सचेत । मुये न छाड्यो दुज सूं हेत ।
प्रात भई बसीठ तहां आन । कही भूप सूं कथा बिष्यान ॥
समझै बुद्धि बिना नहिं सोय । भय बिना प्रीत न कबहूं होय ।
सुनि बसीठ के बचन उदास । जनु बन गाज्यो सावण मास ॥

कोप कियो महिपाल विक्रम विक्रम पंथ समे ।
मूछ मरोरत बाल डसत काल होय तास तन ॥

उत थे काम सेन दल मारा । इत थे भीड्यो नरेस उदारा ।
खेत जुरे दोउ बाजी लागे । दोउ दिस बाजे मारू रागे ॥
जेठे वरिक छुटे लोहे । मार मार बक्यो अति छोहे ।
कूं तादाद किति तरवारे । तीर तुबक छूटे घन सारे ॥
छूटी जबड़ जंग हथ नाल । पल मो भयो काम नृप चाल ।
पूरी बिग्रहि बिक्रम भूप । लीन्हो सब दल लूटि अनूप ॥

मंत्री कहै सुनो नृपराज । सुंदरि गिरे रही पतलाज ।
कठिन परै नृप सरबस देई । मदन भये फिर याहूं लेई ॥
कहनी लगि विप्रहु कीजिये । कौन मतो जो दुख छीजिये ।
मंत्री वचन सुनत महिपाल । मुकाय लिनी सुंदरि तत्काल ॥
गज अनेक अरु मोतिन लाल । दयानी विप्रहूं भूप रसाल ।
मिले आनि विक्रम सूं पेग । काम सेन दल सार सवेग ॥
मिले परस्पर वाढ्यो प्रेम । दोउ नृपति न छाड्यो नेम ।
काम कुंदला सौंपी आनि । माधव रसिक विप्र के प्रान ॥
दोउ मुरछ परे धरा मांहि । उठ्यो विप्र गहि सुंदरि बांह ।
काम कुंदला कहै सुबंस । तेरे गुन कित भूलूं हंस ॥
ऐसी प्रीत निबाहै और । तू दुजराज गुनी सिर मोर ।
माधव कहै प्रीत कि येता । जो जाने कर जाने प्रीता ॥
सूकी प्रीत चरी सुंदरी । पीछे सोच जिव सूरत न धरी ।
ऐसी प्रीत निबाहै सोय । ते कुल मो नर बिरला होय ॥
विक्रम प्रीत दोउ की देषि । अपनी करनी सुफल करि लेषि ।
काम सेन नृप कीन्हो सेवा । मोहि सनाथ कियो नर देवा ॥
मेरे गृह चलो नर नाथ । नृपति दीन होय जोड़े हाथ ।
काम सेन कहि विक्रम सेन । दुज हित छाड़ी पुरी उजेण ॥
मिलाई तास काम कुदला । वो समान नृप कोइ न वला ।
माधव काम कुंदला नार । मोहि देवो मांगूं मनुहार ॥
उगि रह्यो जस तेरो चंद । भेट्यो दुज सुंदरि को दंद ।
सोंपो काम सेन के हाथ । गज चढ़ाय विक्रम नरनाथ ॥
तीन दिवस रहि विक्रम भूप । जल्यो आपन गृह आय अनूप ।
जाके हेत येतो श्रम कियो । सो दुज मांग यक में लियो ॥
चल्यो कूच करि अति उदार । जाके जस को अंत न पार ।
ऐसी प्रीत करे नर कोइ । ताको सुजस चहूं जुग होइ ॥

प्रीव रीव जो कीजिये तन मन अरपे देह ।
प्रान गए भूले नहीं अंतर वोही सनेह ॥

छं० १ : [३८७ अ]

राजा योगी मित्र न मीता । नारि वेश्या धन की चिंता ।
सर्प सिंघ कीआ यारी । जेत माल तुम समझि गमारी ॥

मधु कहे सुनो जेत विप्र सर्प जैसी भई।
सत्य बचन सुणीजै यह बचन सुन जाणो सही ॥

जेवै जेत मधुकर सुणीजै। सर्प विप्र की मोहि कहीजे।
यह कथा तुम मोहि सुनावो। वाहूं चरण वैर जन लावौ ॥

(मधु वाक्य)

सुनो तेत मोहि सुनाऊं। जो बूझै तो तनक लषाऊं।
विप्र एक तीरथ कूं चाल्यौ। दया धर्म नित चितमो पाल्यौ ॥
चल्यो जाय सु बन षंढ माहिं। अति उद्यान कमारि वहू छांहि।
बनचर बाघ रोज अति तिहांइ। विप्र जात मन चिंता आइ ॥

विप्र सोच मन मां करै आरन विषम उझार।
सब पंछी भागे फिरे याकौ कौन विचार ॥

विप्र सोच मन माहिं विचारी। चिहूं दिसा वन षंढ निहारी।
विप्र देष आगे दौ लागी। या पंछी कारन वन पंछी भागी ॥

दौ लागी पंछी झले वहुतक जीव अपार।
ब्राह्मण जीव चिंता करे जीवहि दया बिचारि ॥

चिहूं तरफ जब लागी आग। विप्रचलै वन पंढ सौं भाग।
आगे सर्प बलतो बिललावै। विप्र देषि कै विनती लावै ॥

(सर्प वाक्य)

मोहि बिनति सुन विप्र सुजान। जरत अगन में मोरा प्रान।
जीव दया अब मोरी लीजै। जात प्रान अब ढीलना कीजे ॥

(विप्र वाक्य)

बोलै सर्प अब द्विज सुन तो मो किसो सनेह।
काल रूप नैना निरष कै तजै अपनि देह ॥
सुण ब्राह्मण पंनग कहै चंद सूर देऊं साप।
वचन बोल पाछै टरै दग जनम तोह राप ॥

अब तुम मेरो जीव उधारो। एह अवसर दुष मेट हमारो।
मरत जीवन [जो ?] राषो कोइ। तास समान पुन्न नहिं होइ ॥

बिप्र कहे सो कौन विध कीजै । जीवन दान सर्प को दीजै ।
बाहिर निकारि कहे हाथ पछार्यो । बहुतक कष्ट सु साप निकार्यौ ॥

बिप्र निकारि सर्प कूं धर्म दया जीय जान ।
आगे जो विग्रह भयो सुनियो सब्द दे कान ॥

बाहिर निकरि सर्प जो आयो । जाय बिप्र के उर लपटायो ।
बंच्यो जीव सुप भयो भुजंगम । ले चलो बिप्र उर अपने संगम ॥
सीतल जल अरु आछी छाही । ... ... ।
बिप्र कहै सुनो सर्प सुजाना । एह बार तुम करो बिस्रामा ॥

(सर्प वाक्य)

सुनो पन्नग एक बात ऐसी मन कुं धरे ।
में दुरवल आधीन कहा बिस्वास दे मारिये ॥
सर्प कहे पांडे सुणो सत्य जीव की बात ।
मैं मेरे मन की कहूं तो फिरि करहूं घात ॥

(विप्र वाक्य)

तुम अजान जान्यौ नहीं कोउ कर ग्रह भुयंग ।
विश्वानर अरु सर्प विहां इनको एकत अंग ॥
वाचा तुम मोकूं देई अब कहा डसत हौ मोहिं ।
तुम ग्यानी अैसे पुरुष समझि देषि मोहि सोउ ॥

(विप्र वाक्य)

में तो सूं भलपन कियो जरत उधार्यो तोहि ।
अैसी मन मां धारिये हानि धर्म की होय ॥
आसा दे के मनहरे मन दे तोरे आस ।
बिप्र कहे पन्नग सुनो सो तिनको नरक निवास ॥
बिप्र कहै पन्नग सुन लीजे । सत छोड़े केते दिन जीजै ।
अब मैं कहूं सुन लीजे कोउ । बूजे साष कहै सोउ ॥
जो कहूं कोय डसियो मोहि । एह बात मन मारे होहि ।
तीन जने जो बोलैं साषी । डसियो विप्र सर्प इम भाषी ॥

(सर्प वाक्य)

सुनो विप्र तुम सत्य कही मे मानी निरधार ।
मनुष कौं देखे नहीं प्रथम पुछ एह -कार ॥

ब्राह्मण वूछै ब्रष कूं सुनो सघन वनराय ।
धरम करत संसार में कोउ नरक में जाय ॥

(ब्रछ वाक्य)

ब्रछ कहैं ब्राह्मण सुनो सत्य कहे जो बात ।
धरम करत हम देषियो सो क्युं होत संताप ॥

(ब्राह्मण वाक्य)

पूछै ब्राह्मण ब्रछकूं केसे भयो संताप ।
निज मुष तुम अपनो कह्यौ मो सूं सबही बात ॥

(ब्रछ वाक्य)

सुनो ब्राह्मण सत्य यह बानी । अब मैं तुम सूं कहूं निदानी ।
मेरी बात चित्त धरि लीजै । ता पाछे कछु उत्तर दीजै ॥
एह बन खंड विषम उभारा । नहीं कहूं नीर नहीं कहूं झारा ।
अति व्याकुल होइ कोई आवै । मो तरे बेठ वहुत सुष पावै ॥
छाया बेठ के आचवै नीरा । सीतल गात तबहूं होत सरीरा ।
होय संतोष जब होय सांसा । मो तन देष भुलावै आसा ॥
देषे डरपात अरु पीड़ा । मन मे वहुत उडावे होड़ा ।
मेरी बात मान ले लोइ । भली करत दुप या विधि होइ ॥
सुनि के ब्राह्मण अति सोच होइ । कहे सर्प अब डसिहूं तोहि ।
कहे विप्र सुन सर्प सुजान । दोय की बात और सुन कान ॥
बिप्र सर्प दोउ वन मैं जाये । गउ एक चरित वन में गये ।

(विप्र वाक्य)

विप्र दोउ कर जोर के कहै गऊ छै बात ।
एह तुम दोऊ एक हो अबन्यासी की जात ॥

(गऊ वाक्य)

कहै गऊ द्विजराज सुनि तुम आयो किह काज ।
मनसा वाचा कर्मना सत्य कहो महाराज ॥

(विप्र वाक्य)

सुन ब्राह्मण गउ बोलै बानी । सर्प कहै सु सत्य में जानी ।
अब में क्रहूं सोइ सुनी लीजै । पाछै विचार कछु जीव मां कीजै ॥

सो गति भई सो तोहि सुनाऊं । सुनले बिनती मै तुम गाऊं ।
ब्राह्मण एक हुतो कंगाल । ब्राह्मण बहु छिन में हाल ॥
कर्म लाग में कुष्ट आए । ब्राह्मण एक हुतो तिण लछमी पाइ ।
मै चाहूं जाय सदा निरधारी । हल मे जगोता आपु हारी ॥
दूध दही पिय बहु पायो । अब तो मोहि लखपन आयो ।
अब मे गये घर कोइ मारे । जो घर आऊं तो बाहिर निकारे ॥

मेरे तन की संपदा बछरी गऊ अपार ।
ब्राह्मण के धन बहु भयो तो मोहि दीन्ही निकार ॥

अब मोहि घर सूं बाहर निकारी । केहां जाय मैं करूं पुकारी ।
दूध दही सब तूज पचायो । मोहि सरि आरन बिदायो ॥
सर्प कहेते सत्य मे मानी । करो बिप्र तुम आपनि जानी ।
धर्म कर्म की मैं ना जानूं । मैं बीती सो तोहि बपानूं ॥
मैं तुम सेती सर्प सुनायो । जो तुम कहो सोइ मन भायो ॥
एहि बिधि पूँछी देपि सब लोइ । भलपन करत बुरी हम होइ ॥

(सर्प वाक्य)

सर्प कहे पांडे सुणो गऊ बचन धर धीर ।
डिगा टकरि छांडदे मे डसिहूं तोहि सरीर ॥

(विप्र वाक्य)

बिप्र मन मां सोच बिचारी । सर्प दुष्ट मोहि निहचै मारी ।
एह बुध मोकुं कहा आई । बाल बृद्ध मैं मुंड कमाई ॥

ब्रछ गऊ दो जन भए एक कहे कोउ ओर ।
ता पीछे मोकुं डसियो हूं कहूं दोय कर जोर ॥

पांड़े सुणो ब्रछ इम भाषै । तु अपने जिव में जिव राषै ।
जासू वे तेरो पति पावै । पूछै बेग ढील जिन लावै ॥
बनचर एक रहै बन मांहिं । पन्नग पांडे तापै जाहि ।
सुनो जजमान बात एक मेरी । मो शिर बिपत बिधाता बेरी ॥

(बनचर वाक्य)

कोंन बिप्र कौन सर्प है मे चीनी नहि तोहि ।
नैना सुनि रण्यां नहीं बात न मोपै होय ॥

मैं वनचर थोरी बुद्ध मोरी । बात न मानौ एकों तेरी ।
मैं तो तोकुं झूठो जान्यौ । सर्प देव कूं सांचौ मान्यों ॥

(ब्राह्मण वाक्य)

रोवे पांड़े शिर धुने मेरो आयो काल ।
धर्म करे जो जगत मैं ताको एह हवाल ॥

ब्राह्मण चिंतै निहचै मरणा । भागो जाय कौन के चरणा ।
वनचर पंथी मेरी आसा । सो तो सब भइ घासमा फासा ॥
काल रूप तै सब कोउ डरहै । मो गरीब कूं झूठो करिहै ॥
वनचर सुनी ब्राह्मण की बानी । सांच झूठ मनमाहि पिछानी ॥

(वनचर वाक्य)

बिन देषो कोउ ब्रह्मना करे कौन बिधि नाय ।
जैसी विध तुम मे भई सो मोहि नैन दिषाय ॥

(विप्र वाक्य)

आज बातही जीव की मरन्यो बन्यो निधान ।
वनचर कहै सो कीजिये सर्प सुनों दे कान ॥

(सर्प वाक्य)

जंपे सर्प सुनो द्विज बानी । वनचर कहे सोही मन मानी ।
करो व्याल बार जनि लावौ । बनचर कौ सब द्रिष्ट देषावौ ॥
काठ लाय बन षंड कूं चिहूं दिस दियो लगाय ।
तामें मेल्यौ सर्प कूं वनचर देख्यौ आय ॥

(बनचर वाक्य)

सुन ब्राह्मन बनचर कहे देख्यौ नैन न भाय ।
जे जेह बोवे व्रछ कूं सो तेसो फल माय ॥
सर्प जर्‌यौ दुरमत भर्‌यौ विप्र के उगरे प्रान ।
अंत काल जिय धर्म की सुनो सबद दे कान ॥

(मधु वाक्य)

मधु जंपे सुनों द्विज बारी । राज काज की गत है न्यारी ।
इन सों प्रीत नहीं थिर होइ । बूझ्यौ जाय कहे जो कोइ ॥

राजा जोगी अग्नि जल बेस्या संग भुजंग।
इन सों प्रीत न कीजिये डरता रहिये अंग॥

इसके अनंतर संपादित छंद १८७ की पुनरावृत्ति है।

[१८७ आ]

नं० १ :

सुन जेत मधुकर यूं कहई। सो बात तेरी निहचै होई।
इब तेलन जो भई मुगलानी। तो कहा अलसींके काज भुलानी॥
सुन मधुकर यूं जेठ कहई। तेलन मुगलानी कैसी भई।
येह भेद मोहि के कहि सुनावो। मेरे मन को संदेह मिटावो॥

(मधु वाक्य)

आप त्रिया संतान न कोई। तेलन दूति देष के आई।
मिरजा कूं सुध जाय सुनाई। मिरजा बात तुरत मन भाई॥

(दूती वाक्य)

तेलन की वषान बहुत का करही। बहुर येक इहां सुंदरि रहई।
तुमारे घर महि जोरू नाहीं। तुम मुगलानि करो यही ठाई॥

(मुगल वाक्य)

तेलन कूं घर मेरे ल्याउ। बहुत रूपैया तुमही पाउ।
येहि बात तुम दिलमों धरो। अब तेलन की मुगलानी करो॥
दूती बात येह सुन पाई। तेलन मुगलानी करन कूं आई।
तेलन कूं बहुत समझाई। मुगल के घर तुम वेग ही जाई॥

(तेलन वाक्य)

सुन सषी ऐसी बात जनि करे। पुरुष सुम तो जीय थे मरे।
पुरुष सूं जो प्रीत घनेरी। मुगल मरो तो येही बेरी॥
अब के ऐसी बात सुनूंगी। हूं तो जाये पुरष सूं कहूंगी।
पुरुष सुने तो तोहि मोहि मारे। मुगल कूं विपता बहुत कपारे॥

(दूती वाक्य)

दूती चली मुगल पे आई। तेलन की सब बात सुनाई।
आन के झूठी बोली बानी। तुमारी सूरत देष लोभानी॥

(मुगल वाक्य)

सुनत मुगल जो बात कहाई। चलि कुटनी वाके घर जाई।
चल मुगल तेलन घर आए। तेलन आदर भाव बैठाये॥

(तेलन वाक्य)

सुनो मुगल हूं कहो सो चित दीजे। मोकूं घर मों निहचे लीजे।
येह बात को बिलम न कीजे। तेली मारता पाप न गनीजे॥
धनी धन्यारी दोऊ राजी। कहा करैगो मुल्ला काजी।
तेरे मन मों जो असि धरे। तेली कूटण मारत मरे॥
मुगल सुनत वेगि घर आयो। मुगलन येक उपाव उठायो।
मुगलन सब चाकर बुलवायो। सीष दई चहुं ओर पठायो॥
सुन वे चाकर तूफान उठावो। बहुत रुपैया दंड भरावों।
चाकरन सब भौन जो लीन्हा। तेली सिर तूफान जों दीन्हा॥
बनिया के घर अलसि लेन कूं गयो। चाकरन तूफान जों दियो।
अब तेली बनिया जो घर नाई। साह कुं तम चाकरी जाई॥
साह नन दस वीसेक दीन्हा। तेली कूं बांध कर लीन्हा।
तेली कूं बांध मुगल घर लाये। मुगलन कोरडा फुरमाये॥
द्वादस कोरडा तबही पड़ही। पड़त कोरड़ा तबही मरही।
मूये की सुध तेलन पाई। कर सजि गेम मुगल घर आई॥
तेलन तो तब भई मुगलानि। तेली कियो भूत की ठानि।
अति रसभोग मुगल सूं कियो। करता की गत को उन लियो॥

तेलन मुगल बागमो चले बाट मो बोयो खेत।
मुगल तेलन वोहि मारग आये देषो जग की देत॥

मुगल मुगलानी चलि करि जाय। अलसी खेत वा बाट मो आई।
देषि तेलन मुगल सूं कह्यो। देपो मिरजा पेत काये को बोयो॥

(मुगल वाक्य)

मैं क्या जानू खेति न जेति। तुम जानो तुमारे करम की षेती।
तुम जानो तुमारी बात। हम कहा जाने झाड़ की जात॥

(प्रेमचंद भूत वाक्य)

अब तू तेलन भई मुगलानी। तूतो अलसी के झाड भुलानी।
जिन झाड़न के हाड़ निरमाये। तिनकूं कहत हो झाड़ काये के भये॥

तेलन सुनत नित सों चौंकि रही । पिय तोको खोल्यो रे दई ।
सुनत बात मनयो हरषानी । भूली देह होग गइ पानी ॥
मुगलन देखि ता ऊपर देई । हो साहब कौन बात भई ।
मुगल मुसकानी मुष मोई । बादन फुं कोउ उहां जो होई ॥
देखि सून ले गयो उठाई । कछु के खोगा माहिं धराई ।
धर खोगा माहें जो कीना । लेकर पावक फूक जो दीना ॥
ते पुरुष त्रिया भेद न जानें । ते नर मूरष मूरख सगाने ।
त्रिया बिसवास करे संसारे । ते नर मूरष निहचें हारे ॥

दंपति विस्वासेन कर्तव्यं जे हार ने पुरुषा ।
ते कर्नं यात्रा ते जीव जुगे जुगे ॥

जे नर त्रिया बिसवास जो करहीं । ते नर निहचै हार कर मरहीं ।
येह बचन सत्त करि जानो । त्रिया बचन कोऊ मत मानो ॥
सुनो जेत मधु कहे सो सांची । तेलन मुगल की थैंसी बांचि ।
सो बात तेरी निहचे जाने । येह बचन सत्त करि माने ॥
राजा मित्र सुन्यो नहिं कोई । जेतमाल सषी मधु जोई ।
जैसी लता करेली करही । तौर तूं बहुर बकाइन चरही ॥

[४०३ अ]

च० १ :

कवित्त– गयंद हंस चढि चलेउ गयंद पर सिंघ विराजे ।
ता सिंघन पर उदधि उदधि पर गिरबर छाजे ।
गिरवर पर इक कमल कमल पर कोयल बोले ।
कोयल पर इक कीर कीर पर मृग येक ढोले ।
जिन मृगन सखी में रह्यो सो सेस नाग सिर पर रहे ।
कवि येन कहे अचरज अस्यो हंस भार इतनो सहे ॥

[४०४ अ]

द्वि० १ :

जानै परै न रोस रस चष सूधे मुष मौन ।
निस दिन अैंठे ही रहै भौहैं धौहैं कौन ॥

जोरी जुरै है चंदमुखी स्याम रेष मनौ अहि सुत सुधा पान अब जोरी हैं ।
किधौं कोकनद पर मधुकर बांधी पांत किधौ काम तान कुटिल कोरी हैं ।

चषयो चाप तरुनी के बान मैन संग संग्राम को मन ठये मारन को मोरी हैं।
रसिक बिलोको दग मायल ह्वै रह्यो मन घायल भयो है चित्त चोरी है॥

भौंह भांत की पांत रचि जोरी जात जमात।
नैन कमल मधु मन रुकै मोह मान [इ ?]क रात॥

[४०७ अ]

तृ० १ :

अब केसों श्रवन वन्यो छबि श्रैसे। मानु लघु सीप स्वात को तेसो।
तामे करन फूल छबि पाये। कुंजर करन रबिकर पाये॥

[४०८ अ]

द्वि० १ :

ठोढी चिबुक की दुति कहौं धर धरि धनुष सरोष।
बूड़ी गयो सर भीतरे रही बाहरी फोक॥

[४१० अ]

द्वि० १ :

कंचुकि लाल सुढार अति रही कुचन लपटाय।
बैर सभार्यो संभु सो दई काम दलाय॥

[४१८ अ]

द्वि० १ :

पग जावक बिछुआ अति सोहे। अंगुरी चुटकी मन मोहे।
नखन नेक सोभा कहूं कैसी। तन सुढार कीन्ही छबि तैसी॥

[४१९ अ]

च० १ :

सुंदर रूप सारि सब केतनिक कहूं बषान।
उपमा दीजे कौन की बिधना करी न आन॥
सुर नर नाग न अपछरा गंध्रब तिया न कोय।
जसि बिद्याधर कुंवरी श्रैसी रूप न होय॥

करि सिंगार सषि साथे लई। मधु सनमुष होय बंधी खरी।
कोउ कर जोरि कहत कुंवरी। मन क्रम वचन तासु चित धरी॥

म० वार्ता १० (११००-६३)

[४१८ अ]

प्र० १ :

गहणौ और सरूप सब सुंदरि सुंदर लगै ।
बहु रमणी कौ रूप गहणौं कौ गहणौ भयौ ॥

त्रिया भूषन सजै तन सो मन सूं । सो गति उलटि भई लोचन कूं ।
अंग उपाह सोलह सिणगारा । पुनि सरसे नव अभरण धारा ॥

[४२० अ]

द्वि० १, तृ० १, च० १ :

मधु भूले छबि निरषि के उत्तर येक न होय ।
जेत वचन छम उच्चरें चित दे सुनियो सोय ॥

[४२२ अ]

प्र० ४, तृ० १, च० १ :

धूप चंदन मांगे ही मिलै अरु चोली को पान ।
ऐ दोउ मांगा ना मिलै इक मोती इक मान ॥
मोती झूठो पोवबा मन मांगा इक बोल ।
ऐ दोउ बांध्या यूं रहैं बहुर न चढ़ियों मोल ॥

[४२२ आ]

तृ० १, च० १ :

भांगा पाणप जोडिए कर कंकन नेउर नाउ ।
मुगताहल नेह दंत को न लहै देह्यो प्रेम ॥

[४२४ अ]

तृ० १, च० १ :

प्रेम पलट न नेह जनि कोई जाने करे ।
हिरदे बिसरे तेह जे मिले मोती षंड जनु ॥

[४२७ अ]

तृ० १, च० १ :

जीवत सत्त न छाड़िये नारि बिरानी पेषि ।
दूत वचन दूती कह्यो पण सत मेना कौं देषि ॥

(मालती वाक्य)

मालति मनहिं विचार मधु कारन बानी कही ।
सांची बात सुनाये सो मैना सत कैसी भई ॥

(मधु वाक्य)

सुनों मालती मधु कहै ऐसी करे न कोय ।
इन जुग सत्त न छडियो सो सत मैना को जोय ॥

(मालती वाक्य)

बहुर मालती बूझे ऐसी । मेना सत कि बात कहो कैसी ।
दूत वचन दूती के कह्यो । मेना को सत कैसे रह्यो ॥

(मधु वाक्य)

सुन मालती मेना की बात । अपणो सत आपणे हाथ ।
सत मेना की तोहे सुनाऊं । थोरी सी बात बोहोत गुन गाऊं ॥

नगर वसे बरनापुरी लोरक महाजन जात ।
कहे मधु सुनो मालती सत मेना की बात ॥

नगर बसे एक बरना पुरी । लोक महाजन जात अनसुरी ।
नगर लोक बरनूं कित लइहूं । थोरी सी मेना की कहिहूं ॥
महाजन जात भला तिहां बसे । मोटा मंदिर चित यूं लसे ।
साहा लोरक महाजन नाम । मान जेसा राजा उनमान ॥
उनके ग्रह में कहूं त्रिया सोही । तास रूप बरनूं नहिं कोही ।
पृथी देषी कोउ ऐसी नाहीं । देवपुरी बोहोत ऐसी नहीं कोई ॥
त्रिया रूप अनोपम रंभा नारी । जोबन रूप काम उनहारी ।
येक समे सब महाजन मिले । सायर रतन भरन कूं चले ॥
लोरक साह त्रिया सो कही । सब महाजन परदेस कूं चलहीं ।
हम पन कहो तो चला साथे । द्रव्य घनेरो लावां हाथे ॥
सायर से हीरा झलकंता । चे मोती जाचे झलकंता ।
सबहि महाजन चले जाजे । हम पन करा मलानो आजे ॥

पर दीपा महाजन चले हम पन चालनहार ।
तुम हम कूं सिप देवो इनको कोन विचार ॥

लोरक गाये महल में आय सिंगासन ठाम ।
तिहां बैठी सिनगार कर सो मैना वाको नाम ॥

साह जी येह मंदिर सालियाह । याही नंबंध पाच डोलिये ।
भर्यो भंडार अनंत अपार । घर मैंदा हूटो सुरार ॥
करो विलास महाराज कि चिंता । इन मंदिर कूं रखो न चिंता ।
याली येम आपनहिं होई । छोटो मोटो और न कोई ॥
तासूं घर्ना येक विलंब न कीजे । मेरे वचन येह सुनि लीजे ।
बैठो मंदिर करो विलास । परदेस गया मेरा घर आस ॥
हम तुम प्रान येक हैं दोउ । तामें अंतर करत न होइ ।
तुम सूं प्रीत हमारी देहा । ऐसो नेह न बंधो केहा ॥
प्रीत पुरानि न होय अरथो तन लोरक साह ।
जिहां लग तुम घर आवसो तिहां लग मोहें उदास ॥

(लोरक वाक्य)

मेना यह मंदिर करो विलास । तिहां तुम बैठी करो दिलांस ।
मास दिवस हम आगे आवे । येह वात मन ऐसी आवे ॥

सुन मेना हम आवहीं मास येक ये वास ।
मंदिर में मौजा करो सो वांधो मोटी आस ॥

मन में चिंता और मति करो । हर को नाम हिये उच्चरो ।
येह वचन करि साह जब चल्यो । येक सहस्र महाजन मिल्यो ॥
लोरक साह जो परदेस कूं गयो । मेना मन उदास ते भयो ।
काजर रो राता जो सरीर । नैना धार न षंडे नीर ॥
गीत नाद सब ही बिसार्यो । दिन दिन जोबन देह तन जार्यो ।
पर पुरुष कोउ नैन नहिं चीन्ही । मेरो तना लोरक कूं दीन्ही ॥
मन मों अडग उन येतनी कीन्ही । येह देह लोरक कूं दीन्ही ।
मेरा है लोरक भरतारे । दूजो देषुं नहीं संसारे ॥

येह तन जारूं इमि करूं रूप रेप सब कार ।
पुरुष न देषूं नैन सूं लोरक बिन संसार ॥
नैना न देषूं नाथ लोरक बिन दूजो कोई ।
हियरा भीतर धाय झूर झूर पंजर करूं ॥

यह तन राषूं येम साधन सत्त न छंडहूं ।
नैना न देपूं कोये प्रीत पुरुष सो बांधिहूं ॥

अैसे सत सूं मेना रहाई । पर पुरुष कोउ दृष्टि न देपाई ।
इन नैना ना दीजूं कोय । येह विध सत्त हूं राषूं सोय ॥
बैठी मंदिर माहं अकेलि । साथ नहीं कोउ सखी सहेलि ।
मेना कोउ सूं बात न कही । येह विधि सत सूं बैठी रही ॥

सजि साथे पेजे नहीं कर नहिं माया मोह ।
येह विधि से बैठी रहे नैना न देपे कोय ॥

नगर को राजा बड़ो नरेस । गंगा पार पुरब के देस ।
दल पायक कित लहूं विचार । वाको जाने सब संसार ॥
उनके पांच कुवर बलवीर । करे राज गंगा के तीर ।
धरम राज ते करे सधीर । पाप कपट कबहूं न सरीर ॥
च्यार कुमर राजनीति चाले । येक कुमर पाप पग घाले ।
कान मरजादा कहूं की नाहिं । चढ़े अहेड़ेन आज्ञा देई ॥
मेना मंदिर बैठी रही । कुमर नजर तिहां देपी सही ।
रूप सरूप देषि उजियारी । काम चरित्र देपी संसारी ॥
कुमर के मन मेना जो बसी । अवर न देपूं त्रिया अैसी ।
अैसो मीत न देपूं कोई । इन त्रिया सूं मेलो होई ॥
कोई साथी ने अैसी कही । या त्रिया कोउ दृष्टि न देपी ।
याको कंथ चल्यो परदेस । सत हीये हइ धर्‌यो नरेस ॥
जो कुमर अैसी चित होइ । दूती आनि बुलावो सोइ ।
दूती येह काम चित धरही । जेसे जल मों पावक जरही ॥
तब कूमर साथी सूं कही । दूती कोण नगर मों रही ।
अैसी दूती बोहोत अपारे । रतना मालन सो नहिं संसारे ॥
सुनत कुमर नगर को दूत । कपट रूप नारद को पूत ।
रतना मालन लई हंकारि । सत से मेना देहु डोलाइ ॥
दूति वचन जो तेरो प्रऊं । तोहि मालन सिरोपाव पेहराऊं ।
मालन पान दूती को लीन्हो । कपट रूप सब आभूषन कीन्हो ॥
जोहन मोहन लीन्हो संभारी । कामन टुमन परो सिनगारी ।
जासे मोहे वेग संभारी । मेना सत हरावने धारी ॥

कपट रूप चली मालणी गइ मेना के बार।
जेहि सत रापे साइयां ताकूं कौन डोलावनहार॥
कपट रूप कुटनी चली गइ मेना के बार।
जेहि विधि रापे सत्तकूं सो कौन डोलावन हार॥
जेहि रापे करतार तेहि सिर वाल न वंकही।
जो सिर जाये तो जाये साहधन सत्त न छंडही॥

मालन जाय मंदिर मो पैठी। मेना सती सिंघासन वैठी।
चंपक फूल चवसर हारे। दीन्ही भेट अर कीनि जुहारे॥

(मेना वाक्य)

हंस कर पूछे मेना नारी। ते कहा गवन कियो पिया प्यारी।
हूं तोहे पूंछू मालन रतना। अनचिंती कित बोलै वैना॥

(दूती वाक्य)

तेरे पिता मोहि धाय जो दीन्ही। मैं बालपणे तोहि चूची दीन्ही।
हूं धाय अब तेरी मैना। पोहाप हार आइ तोहि देना॥

मेना जिय मो गहभरी भाग जरे तन मांह।
स्यास रस मो तन ऊपजे सो मेटन आवै ताहि॥
मालन बचन सुनाये मेना सांची कर गही।
सत्त छुड़ावन तेहे दूती कुटणी मालनी॥

मेना बात सांच कर मानी। मालन के बोले मेना पतियानी॥
तबही नायन बेग बुलाई। कुंकम केसर उगटणो नाई॥
अति रस कूटणी अंग न माई। अब मो पै मेना कही न जाई।
मैलो चीर तेरो दुष मेना। सीस सिंदुर काजर नहिं नैना॥

बदन जोत तेरी धौहरी क्यों डरपत हो आप।
कुंकम मांग तेरी सीहरी सिरो हे छत्र तेरो बाप॥

(मेना वाक्य)

हैईडा काटो साठ सुख रोहे नैन असेस।
अब बैनि तोहे कहा कहूं दूति लछन तेरा भेस॥

मेरो पिया है सायर पार। ले गयो सब सिनगार उतार।
काकहं मालन करूं पुकार। मोहि परिहर गयो कंथ पीहार॥

× × × ×

वैरी करे पिया सोइ कीन्हो। बारी वेस मोहि दुष दीन्हो।
काजर रोरा कोनि पसारूं। पीया कारन हूँ जो वन गारूं॥

दुप परिहे दिन जैहै मीत क वैरी होय।
वनका कहि जे दीहड़ा आस करे नहिं कोय॥
जासूं कीजे नेह तासूं अवसि निवाहिये।
तासूं किस्यों सनेह टूटे काचा सूत ज्यूं॥
तासूं किस्यो सुरंग ज्याके दिल मो ओर ही।
तिनसूं कबहुंक भंग ओछी प्रीत न कीजिये॥

दूत वचन अति गेहे भारी। कपट रूप रोहे अधिकारी।
तेरो दुष देपत मरिहूं मैना। सायर गंग वहे मोहिं नैना॥
येह रित असाढ़ पसारा। सब कोई घर है आवत वारा।
ढिग रहे सो आवन नेहारा। कबहूं कंथ तेरो देपु न बारा॥
जो घर रहे सो करे बिलास। नार न छूंडे पिउ की आस।
दुष पावे अकेली नार। जिनको कंथ नहीं घर वार॥

तेरो दुप देखत हूं मरत बोल वचन दे मोहिं।
जैसो भंवर सो मिले सो आन मिलाऊं तोहि॥
येह मन औसी चाहे सपने सत्त न चूकहूं।
जो सिर जाये तो जाये पन साचन सत्त न छूंडही॥

(मेना वाक्य)

पुरुष परायो जोय अपने चित मों क्यों धरूं।
ज्यारूं जाकी देह येह दिन औसे ही भरूं॥
पर पूरुष सो नेम औसी तो मन मों रपूं।
यो सत छाडूं केम कानी काया का रमी॥

(दूति वाक्य)

वह तो जोबन जाय मालन मेना सूं कहे।
मनुष जन्म को लाड़ कहो टेक बंध कैसे रहे॥

यह रति जोवन लाड़लो अहेला गमाये काह ।
मालन मेना सूं कहे रसियो मौजा मांड ॥

दूत वचन मालन कहाई । मेना धाये रही सुध च्याई ।
तीपे नेन सरूपे येना । बोले सत्त महासति मेना ॥

(मेना वाक्य)

लाज काज तोहि मेरी आवे । असे बोल केसे पति पावे ।
फाटे तास नार को हियो । यक कूं छोड़ दूजे कूं कियो ॥
येक येक कर जिये जे दोउ । जुग दूसरे कित माने वेहु ।
असी वोकूं कहा सुनावे । यह मेरे मन येक न भावे ॥

मेरो भवर रस मालनि रूप बूझे सब कोय ।
अतिसम पुरष कउ सो भवर कि सरभर न होय ॥

(दूति वाक्य)

नार अकेली सेज रहे सावन बरसे मेह ।
पानी होय करजो रहूं साधन चमके बीजरी ॥
सावन चमके बीज सषि हरषे लेहिं हिंडोलना ।
सब कोई षेले तीज साधन सूती पिउ विना ॥

सावन मेना आन तुलानो । घर घर सषी हिंडोरा तानो ।
कंथ सुहागन झूले वारा । गावे गीत उठे झनकारा ॥
हरी भोम कुसुंभ रितनारी । नाह सरीसी कहे षुमारी ।
येह रित तोहे रैण दुहेली । काहे झुर झुर मरत अकेली ॥

जोवन जातो जानिये गये बार पछताय ।
आन भवंर तोकूं मिले लहे न जुग को लाभ ॥
ज्यासूं कीजे नेह तासूं दोइ जुग थिर रहे ।
वासूं किस्यो सनेह टूटे काचा सूत ज्यूं ॥

(मेना वाक्य)

सुन मालन सावन तेहि भावे । जिनको पीउ परदेस थे आवे ।
भोग भुगत संगीत उतारे । मो लेषे संसार उजारे ॥

रित मानूं लोरक घर आवे। नहिं तो मेना प्रान गमावे।
सुन मालन सब आगमै हारूं। यह तन लेइ अगन मे जारू॥
तू पापनी पाप सुनावे। इन बातन केसे पति पावे।
ये तो बात तास कूं कीजे। ज्याके जिव मों मान के लीजे॥

मधुर मौज घन गरजहीं झीनी परे फुहार।
प्रेम हिंडोरा झूलहीं सो गावे मंगलचार॥

(दूती वाक्य)

सरस कसूमल पेहरना सषी कियो सिनगार।
सुष सूं गावत नीसरीं सो तीज बड़ो तेवहार॥

येह रित मेना जान न दीजे। मान न किये सरस रस पीजे।
इन रित नारी सेज सिधारे। पिया सूं प्रीत करत नहीं हारे॥

(मेना वाक्य)

सुन हो रतना मालन धाई। तेरे बात मेरे मन नहिं भाई।
सावन को रस जब ही आवे। लोरक साह परदेस थे आवे।

(दूती वाक्य)

भादव गहिर गंभीर नैना में बोरत रहे।
क्यों करि पावस तीर साधन साही बाहरी॥
बरसे मेघ घन घोर मेना इण रित येकली।
बोले चात्रिक मोर रैण पीउ बिन दोहली॥
सुख सहेज जिनकी कहें ताको कंथ घर होय।
बाहरी हूवो बालहो सो बयेबी मूरष सोय॥
भादव गहिरो धम धम रैण अंधेरी होय।
सेहेज अकेली सुंदरी येह दुख लागे मोहि॥
भादव रित सुहावणी किन सूं कीजे आल।
कंठ कोकिल बिलंभी रहे ज्यूं गल मोती माल॥

भादो मेना मेह झंकोरे। मोर कोयल करे चिकोरे।
दादुर पपैया कंहुकत मोरा। सूनी सेहेज हिया फूटो तोरा॥

रैण अंधेरी बीज चमके है ये समरिये पीउ ।
रस चाले न जुग रीत को क्यूं तरसावे जीउ ॥

सरदा सुता भावे चादर भागो । गेह फूटे हिया पुरष अभागो ।
सषी सहूं मन अैसी आवे । आनों ओर परायो लावे ॥
अंध कूप निस रैण दुहेली । क्यूं झुर मरत सेहेज अकेली ।
यह जोबन अकाज के गमावे । गये बाहर पाछे पछतावै ॥

येह जोवन अहेला गयो सरस न उपजे तोहिं ।
अब भुरंस तोहि मिलावहुं सो बोल वचन दे मोहिं ॥
जरके जोबन जायसे सो पिउ बिना ये मन होय ।
येह जोवन यूं जायसे फिरि बात न बूझे कोय ॥
येह व्रत अकाज तास बिसासे ना रहिय ।
फूल फूल और स्वाद प्रीत रीत किन देषही ॥

सुन भादौ सब उठे सहाई । अब हूं ओर वे सुध पाऊ ।
तो काहा कुवा मारे त षाई । अर तिन सूं बोल सुनावो जाई ॥
जो मरिये तो हाथ न आवे । तहां लग कोऊ अपढ़ कहावे ।
डेहेकी जाय फुनि बिध थाथी । तिन जोबन पर कोन परतीति ॥
सुष तो वहे जनम को आपु । ताकू कोन कहे के पापु ।
तेरो जोबन दिरग जुवानी । कुच उचके काचू थिरकानी ॥

(मेना वाक्य)

काजर केसी कोठरी धाय पाप जस लेह ।
दरसन लोरक साह को उत्तर आवही देह ॥
सरद ससी निवान सरहे धन विरहे कामनी ।
ज्यूं दुरजन को बान मदन सीर चूके नहीं ॥

(दूती वाक्य)

सुन मेना यो चल्यो कुवारा । सरद जान अैसो संसारा ।
बाजे संष किनि गत होई । पीउ भोग दिन रहे नहिं कोई ॥

नैना दोय भरी तोहे देषूं। दुष तेरो अति चिंता पेषुं।
सब कोई बोले प्रेम समारे। तेरो पीड न देषुं बारा॥
सारा धन जोवन होत न षायो। गये वार पाछे पछतायो।
इन रित तुरनि नार अकेलि। सुन हो वात मैं कहूं सहेलि॥

सुरत कही तोहि ऊपरे ते मोहि करी निदान।
जह लगि जोवन बिहरसि सो कह्यो हमारो मान॥

(मेना वाक्य)

प्रेम पियारा सोय जिन चोहोरी मो कर गह्यो।
अवर न दूजो कोय मालन सूं मेना कह्यो॥

सुन हो पाय सरद रित आई। तेरी बात मोहिं नहि भाई।
कुआर मास कैसे अनुसारे। मो लेषे संसार उजारे॥
भोग भुगत तो तास रित मानूं। जेह मालन अपनो करि जानूं।
कलंक फुन जे आप लगावे। लोरक कहं मुप कहा दिषावे॥
करवत चंद्र सीस जो लोरा। तोरी अंग डग नहीं मोरा।
कै या देह सराक भर डारूं। कै या देह अगन मों जारूं॥

जोवन लोरक साह विन ज्यार करूं तन छार।
प्रीत जाये इन बात सूं होय सरग सुषकार॥
कह्यो हमारो कंथ मालन बोले पावनी।
कोई कहो निचिंत मनछा राषो आपणी॥
जारयूं किस्यो सनेह पीड विना प्रेम न लहै।
येह पर जारूं देह मालन सूं मेना कह्यो॥

(दूती वाक्य)

दीजे हाथ उठाय ष्याजे पीजे विलसिये।
गई जे मूढ़ चढ़ाय साहधन कृपण संग चमुई॥

जोवन भोगत सब संसारू। प्रीतम पेल वहुत विचारू।
कासे कर लज्जा मोहि रहिये। प्रेम प्रीत मेना यूं कहिसे॥

यह जोवन तन धूर पिय विन प्रेमल कसो।
ज्यूं नदी भरपूर प्रीतम मेरे मन वसे॥

रेण अंधेरी बीज चमके है ये समरिंगे पीउ ।
रस चाखे न जुग रीत को क्यूं तरसावे जीउ ॥

सरदा सुता भावे बादर भागो । येह फूटे हिया पुरष अभागो ।
सपी सहूं मन असी आवे । आनों और परायो लावे ॥
अंध कूप निस रेण दुहेली । क्यूं भुर मरत सेहेज अकेली ।
यह जोबन अकाज के गमावे । गये बाहर पाछे पछतावे ॥

येह जोबन अहेला गयो मरस न उपजे तोहिं ।
अब भुरंम तोहि मिलावहु सो बोल बचन दे मोहिं ॥
जरके जोबन जायसे सो पिउ विना ये मन होय ।
येह जोबन यूं जायसे फिरि बात न बूझे कोय ॥
येह व्रत अकाज तास बिसासे ना रहिय ।
फूल फूल और स्वाद प्रीत रीत किन देपही ॥

सुन भादों सब उठे सहाई । अब हूं और वे सुध पाऊ ।
तो काहा कुवा मारे त पाई । अर तिन सूं बोल सुनावो जाई ॥
जो मरिये तो हाथ न आवे । तहां लग कोऊ अपढ़ कहावे ।
डेहेकी जाय फुनि विध थाथी । तिन जोवन पर कोन परतीति ॥
सुष तो वहे जनम को आपु । ताकूं कोन कहे के पापु ।
तेरो जोबन दिरग जुवानी । कुच उचके काचू थिरकानी ॥

(मेना वाक्य)

काजर केसी कोठरी धाय पाप जस लेह ।
दरसन लोरक साह को उत्तर आवही देह ॥
सरद ससी निवान सरहे धन विरहे कामनी ।
ज्यूं दुरजन को बान मदन सीर चूके नहीं ॥

(दूती वाक्य)

सुन मेना यो चल्यो कुवारा । सरद जान असो संसारा ।
बाजे संष किनि गत होई । पीउ भोग दिन रहे नहिं कोई ॥

नैना दोय भरी तोहे देपूं । दुष तेरो अति चिंता पेपुं ।
सब कोई बोले प्रेम समारे । तेरो पीउ न देपुं बारा ॥
सारा धन जोवन होत न षायो । गये बार पाछे पछतायो ।
इन रित तुरनि नार अकेलि । सुन हो बात मैं कहूं सहेलि ॥

सुरत कही तोहि ऊपरे ते मोहि करी निदान ।
जह लगि जोवन विहरसि सो कह्यो हमारो मान ॥

(मेना वाक्य)

प्रेम पियारा सोय जिन चोहोरी मो कर गह्यो ।
अवर न दूजो कोय मालन सूं मेना कह्यो ॥

सुन हो पाय सरद रित आई । तेरी वात मोहिं नहिं भाई ।
कुआर मास कैसे अलुसारे । मो लेषे संसार उजारे ॥
भोग भुगत तो तास रित मानूं । जेह मालन अपनो करि जानूं ।
कलंक फुन जे आप लगावे । लोरक कहं मुप कहा दिपावे ॥
करवत चंद्र सीस जो लोरा । तोरी अंग डग नहीं मोरा ।
कै या देह सराक भर डारूं । कै या देह अगन मों जारूं ॥

जोवन लोरक साह बिन ज्यार करूं तन छार ।
प्रीत जाये इन बात सूं होय सरग सुषकार ॥
कह्यो हमारो कंथ मालन बोले पावनी ।
कोई कहो निचिंत मनछा राषो आपणी ॥
जाण्यूं किस्यो सनेह पीउ विना प्रेम न लहै ।
येह पर जारूं देह मालन सूं मेना कह्यो ॥

(दूती वाक्य)

दीजे हाथ उठाय घ्याजे पीजे विलसिये ।
गई जे मूढ़ चढाय साहधन कृपण संग चमुई ॥

जोवन भोगत सब संसारू । प्रीतम पेल वहुत विचारू ।
कासे कर लज्जा मोहि रहिये । प्रेम प्रीत मेना यूं कहिसे ॥

यह जोवन तन धूर पिय विन प्रेमल कसो ।
ज्यूं नदी भरपूर प्रीतम मेरे मन वसे ॥

भंवरा रस गुंजत रहै धूप आरती होय।
सरद निसा सुख लेन कूं सो आस करे सब कोय॥

कुआर मास बरनी सुख पाई। गयो बरसात सरद रित आई।
घर घर गावत मंगल न्यार। तेरो कंथ नहीं घर बार॥

(दूती वाक्य)

सरद सुता मानुं बादर भागे। कर जोरि बचन कहूं तोहि आगे।
कातिग मास यह परभ दीवारी। बार रैन भई सरद सिहारी॥
पेलहिं परब छतीसू जाति। तू तो भई मानहु की माति।
छाड गयो तिहि कोन सनेहि। ताको कंथ लायेगी देही॥

जोबन रीत भोजंग मणि कहा बात विहां लाग।
सरद सरस विहां जातहि देषो कोन अभाग॥
जोबन तो जिय बास जो जिये तो कंचन किसो।
सोइ घट की कहा आस सोइ जान माटी भई॥

(मेना वाक्य)

कहा करूं कातिग परभ दीवारी। मो लेखे संसार उजारी।
दिन परब येह मानूं नहिं कोई। देह सरीर मालन जब होई॥
जियरा मेरो सायर पारे। बिना जिये रे माटी भुये डारी।
माटी भोगवै माटी पाये। माटी ऊपर जुग सोहाये॥
माटी लागे सो आप भी डारी। किनकूं कातिग परभ दीवारी।
सो वन फूल जुग माटी फूली। माटी देषि के माटी भूली॥
माटी ऊपर दिस्टि बंध मेले। प्रेम हंस माटी में षेले।
माटी बिरला जाने कोइ। हंस भी पेल फुनि माटी होइ॥
रित मानूं लोरक घर आवे। नहिं तर मेना प्रान गमावे।
इन जुग में पिउ लोरक मेरे। दूज्यो देखूं नहीं विचारे॥

काया बिडारे काय जुग जुग जातो जाणो सभे।
चरित्र षेलावे मोय झूठी आन तू भोखे॥

(दूती वाक्य)

अगहन अंत घन होय दिन घट रजनी बढ़े।
प्रीत करे सब कोय टूटो नेह बोरू सघे॥

(मेना वाक्य)

यह डर जो सत छुटे परायो । ताको मांस कुकुर नहिं पायो ।
वीरा नु ताड़े जो वरही भगावे । फिर लोरक कुं मुष कहा देपावे ॥
जो मालन सिर अपना हारूं । कोन माष सूं जीव विदारूं ।
अैसी कायर बुद्धि न दीजे । अैसे कुकरम कवहुं न कीजे ॥

पाप बचन येह धाय सुन मानस जनम न होय ।
जैसो होय इन बात सूं सो सरग जाय पति पोय ॥
साहव विना अेमल किसो सुंदरि किसो सनेह ।
येह वाते मन तलतले सो जारूं जिम वे नेह ॥

(दूती वाक्य)

मेना मास पौष रितु आई । झुर झुर कंपे तुसार जनाई ।
सौहोड़ सुरंग सो छाड़ न जाई । अदीक मदन तेरो साहव आई ॥

नवल नेह तन कामिनी विलसे सव संसार ।
आवे तोहे रसियो मिले सो रापो बोल हमार ॥
पोप अकेला रहत सक्ष को मेना केसे रहो ।
विहरै सीत तुसार मदन दुष्ट तू क्यूं सहे ॥

(मेना वाक्य)

सुण हो रतना मालन धाइ । ज्या कूं मोल जो मोल विकाई ।
पोष मास मोकूं सुष केसो । मेरो कंथ गयो परदेसो ॥
भोग भुगत के नियरे न जाउं । सीत घाम सूं नाहिं डराउं ।
पोप मास कहा करिहे मेरो । दूती लछन में देपउं तेरो ॥

(दूती वाक्य)

सूनी सेहेज सनेह दोय जन बिन केसे होय ।
प्रीत पुरानि सो होय नवा नेह देपुं नेन सूं ॥

साहाधन माहा तुरंगम वाजे । सुर नर देव मुनि जन राजे ।
माहा तुसार सेहेज न अकारा । तेरो कंथ न देपूं वारा ।

विरह पसारो सेज दुप मेना को यह संताप ।
पांच भूत तिरपत नहीं येह छांड ओर केसो पाप ॥

साहाधन चल्यो बसंत विरहन विरह्यौ गन्यो ।
पर नारि विलंभी कंथ सूं तो जीवना सूं मरनो भलो ॥

(दूती वाक्य)

चैत रित जो आन तुलायो । फूल सुगंध सबही आयो ।
मेना मूरष क्यूं समझाई । कामनी फूल सेहेज रस आई ॥
इन समे जो सेहेज सिधारे । पिउ सूं प्रीत करत नहिं हारे ।
चली जात हे बसत तुसारे । तुम सूं बचन सुनावत हारे ॥
कबहुं बात तुम सुनो हमारी । आन देहुं तोहि छैल पियारी ।
कहो सुनो यह बात जो माने । आन देहुं तोहि पुरुष सयान ॥

चैत बसंत प्रेम रस मेना मान यह भोग ।
प्रथी जाति जान के सो कह्यो करत हे लोक ॥

(मेना वाक्य)

मेना मालन धर अरगाई । बहुत बार पत राषी तोहि ।
दूती दूत बचन सब तेरो । जो नेक पाऊं प्रीतम मेरो ॥
जनम न चित्त डोलायो काहू । पर पिंजरे सिर जाय पराउ ।
आपते उत्तर अजित न नारी । नित कितो तोहि देत हूं गारी ॥
लोक कुटम की काणि न होति । मालन धाय नहीं तू दूती ।
चैत मास जे कंथ सनेहा । झुरझुर मरे पीउ बिन देहा ॥

रित अनरित रस अनरस सो सुझ वचन सुनाय ।
रित सब रस जब माहि तब लोरक घर आय ॥

(दूती वाक्य)

आवा दीजे धाम साहाधन जोबन पाउणो ।
मान बिहूणो जाय पाछे करे पछतावणो ॥
बैसाष बन गहरो भयो लग लग कूपल जाय ।
येह रित तरुणी येकली मूरष क्यूं समझाय ॥
कूपल लहरा जाय नार अकेली पिउ विना ।
इण रित क्यूं सुहावे जेती पियु विना सुंदरी ॥
मन झीनो तन दूबलो अलप वेस सुप लेह ।
बोल सुणो येह वचन दोहो काहे कूं होत गंवार ॥

तेरो कह्यो जो भेटहूँ सत राष्यो करतार ।
राषी प्रीत लोरक साह री सो दूती रही झखमार ॥
पाप पुन्न दुइ बीज जो बोये सो पावजे ।
साधन जैसा कीजिये तैसा आगे पावजे ॥
करनी करे सो क्यों डरे करे करि क्यों पछताय ।
बोवे बीज बबूल के सो अंब कहां से पाय ॥

मैना मालन डरी बुलाई । धरि झोटा कूटनी हराई ।
मूंड सीस ओर दुरा कीना । काला पीला टीका दीना ॥
गधे पर मालन कूं चढाई । हाटो हाट सब नग्र फेराई ।
जैसा करे सो तैसा पावे । ईणी बात न भलपने आवे ॥

सत मैना को थिर रह्यो बात रही संसार ।
दूती, मारि निकार दई सत राष्यो करतार ॥

ऐसो मन जो राषे कोई । ताकी बात चहूं जुग मो होई ।
भली बात भली बुध पावे । बुरी बात सब कुटम लजावे ॥

ऐसी करे न कोय मधु सुना यह सारो कही ।
मैना सत राषियो सो जुग जुग मों बातें रही ॥

[४३४ अ]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

प्रीत करी सुष लहन कूं सब सुख गयो हिंराइ ।
जैसे पन्नग छछुंदरी पकरि पकरि पछताय ॥
अहि ने ग्रही छछूदरी मन में उपजी दोय ।
ग्रास करों तो गल फंसे तजौं तौ अंधक होइ ।
[प्र० ४ कथा तृ० १ का पाठ कुछ भिन्न है]

[४३५ आ]

तृ० १, च० १ :

अहमद तजे अंगारज्यूं बोछे को संग साथ ।
सीरे ते कारो करे तातो दीजे हाथ ॥
(यही ऊपर तृ० १, च० १ में [१५५ अ] मे है)

मालति तू आपने जीय भावे। एह मेरे मन एक न आवे।
तू तो योही लोक सुनावे। इन बातन कैसे पति पावे॥

(मालती वाक्य)

मधु ते कही सोही मन मानी। ज्ञान विचार दोस सब ठानी।
बड़े वड़े सब बात विचारे। कुल बिवहार आपणा धारे॥

नरस्य आभरण रूपं रूपस्य आभरणं गुण।
गुणस्य आभरण ज्ञान ज्ञानस्य आभरण सभा॥
येहे जीव संसार ग्रहे मधुर किंन भक्षितां।
मधुरेव बंधवि कल्याणं मधुरे साधये धीये॥

(मधु वाक्य)

के स्त्री विना कंठ से के रूप गुण पूजंते।
के भली लजा हीनस्य मान हीनस्य भोजनं॥
अला सित्य कार्येषु उपजंती सने सने।
मधु बिंदु प्रसादेन प्रजलेति राजसंदिरो॥
* अलप बात मधु बुधु कि यह जीके काल।
मुष के स्वान मंजीरहे नृप की छारी भाल॥
(तृ० १ में * चिह्नित छंद नहीं है)

[४३७ अ]

तृ० १, च० १ :

(मालती वाक्य)

कोटि सयानप लहलबुधि कर देषो सब कोइ।
अणहोणी होणी नहीं होणी होय सो होय॥
होनी थी सोई भई अनहोनी नहिं एक।
अनहोनी के कारणे पचि पचि मरे अनेक॥
सुवटो एक सुलष्षणो सोहतो परवत ठास।
सब पंछी थे येकलो जेहि पत रापे राम॥

(मधु वाक्य)

मालति कूं मधु वूझै अैसी । सुवटो की पत राषी कैसी ।
पंछी सकल जूथ क्यूं छूटो । वनमो रहे कौन थे रूठो ॥

(मालती वाक्य)

कोयल रूठी कंथ सूं छाड़ चली घर बार ।
सुवटो तेसू संग कियो सो मन मों आणे गार ॥

(मधु वाक्य)

पंछि कोप कैसे कियो केहि गुण भई पुकार ।
सुवटो कौन गुनो कियो सो मोहि कहो विचार ॥

(मालती वाक्य)

पंछी उलटे कोप कर सुवटा ऊपर डार ।
सुवटे राम पुकारियो तव पत राषी करतार ॥

कोयल कंथ बिग्रह कियो मन मों क्रोध अनाय ।
तुम मेहरी हम पुरुष नहिं मन भावे तिहां जाय ॥

करी रीस कोयल से भारी । देस छाड़ि तुम जावो निग्रारी ।
बिग्रह वाढे न काहू सरिये । फूटो काल तव विग्रह करिये ॥
विग्रह रंक राव ते छीजे । विग्रह हाणि ग्रंथि की कीजे ।
बिग्रह जात जीये अपारे । बिग्रह बड़ो बड़ो संसारे ॥

कोयल मन मों सोच करि हिरदे कियो विचार ।
पिउ तजि के जो पति करूं सो करूं कौन भरतार ॥

नैना झरे औ मेले स्वासा । मन मों क्रोध अनंत उदासा ।
बेर बेर कोयल पछतावे । अव तो मोहे कौन मनावे ॥
अब हूं कौन सरोवर जाऊं । जल देषे मैं अति डरपाऊं ।
बाग में अब मैं कैसे रहिहूं । पुरुष बिना झाड़ में डरिहूं ॥

कोयल ताथे निसरी देषे व्रछ वनराय ।
सुवटो देष्यो बनपति दौर लगी उन पाय ॥
सुवटो एक जंगल मो रहे ताको हरिहर नाम ।
हूँ अबला तुझ आसरे तू राषे कै राम ॥

(सुवटा वाक्य)

तू आई केहि कारने मोसूं कहो बनाय ।
हूं मंगल को सूवटो राणूं कौन सुभाय ॥

(कोयल वाक्य)

मेरे कंथ रिसाई मोही । अब मैं सरन रहूंगी तोही ।
सुवटा मोहि करो वरवासो । मैं जंगल मों फिरूं उदासो ॥

(सुवटा वाक्य)

तू काली कुद्ररूपणी हूं सुवटो बनराय ।
तुझ सूं प्रीत कैसे मिले अर कैसे प्रेम बढ़ाय ॥

(कोयल वाक्य)

सरण सरण जो आवगे ताई देहि निवान ।
सीस देहि इण बात पर सो क्यूं दीजे जाण ॥
कंथ क्रोध ऐसे कियो तापर उपजी रीस ।
हूं अबला तुझ आसरे तू राखे के जगदीस ॥

सुवटा बात कोयल की मानी । दई दगासीस करी पटरानी ।
केलि करे मन मो कछु नाहीं । अब कोयल बिछुरे जिय जाई ॥

(सुवटो वाक्य)

जाकूं तके मारबो सो पर तन राचे अंग ।
तिन सूं ही राचो रहे तिनसे रंग न भंग ॥
कोयल कंथ मंदिर गयो जैकृपाल जेहि नाम ।
सुरत करे सोधत फिरे सो बूझत ठामहि ठाम ॥

जै कृपाल फिरे नगर मंझारी । सुध न पावे कोयल नारी ।
पावे नहीं कहूं परदेसा । जाय पाहोचो सुवटा के देसा ॥
सुवटो बैठो नग्रह मंझारी । करे केलि तिहां कोयल नारी ।
गावे गीत औ करे विलासो । जैकृपाल तिहां देष्यो तमासो ॥
कोयल कंथ तिहां चलि आयो । देखि त्रिया जिय रोस भरि आयो ।
अबहूं बोलूं तो मोहि मारे । कंथ परपंच तो सुवटो हारे ॥
मन मों रेस करे अति सांसो । सुवटा देषहि करत तमासो ।
सब पंछी दल लेहुं हुंकारी । तेरी पंष उड़ाऊं चारी ॥

नै कृपाल मन रीस करि उड़ियो पंष पसार ।
अंतर गत में आवरे सो कोउ न बूझै सार ॥

कोयल कंथ उड्यो ततकाले । सब पंछिन सूं करी पुकार ।
मेरी मेहरी सुवटे वर वाई । अब हूं कासी करवट लू जाई ॥
सब पंछी मिलि बोले बानी । तुम यह बुधि क्यूं करो अयानी ।
मेहरी तोहि मिलावां आजे । कासी तुम जावो कुल काजे ॥

सुवटे सुमरे राम कूं पंछी करी पुकार ।
यह पंछी मोहि मारिहैं अब 'तुम रापो करतार ॥
उनही सरि पंछी भई सोपे कोप चढ़ाय ।
अब के रापो सांवरे तुम विन कोन सहाय ॥
येह करुणा करता सुणी मने मो उपजी लाज ।
अब के सुवटो रापिहू ऐसी भई अवाज ॥

(जैकृपाल वाक्य)

सब पंछी सूं मैं कहूँ कौन देहि येह दाद ।
कै मोहि कासी जाण दो कै सुवटा ल्यायो बांध ॥
सब पंछी सु परबत चले मेघ वटा उलटाय ।
सुवटो ल्यायो बांध के सो बोलत मारहि मार ॥
बग सारस पंछी मिले कोयल काग अपार ।
हंस मोर चात्रिक सबे सो पंछी पंच हजार ॥
पंछी उलटे पुकार सुनि ल्यायो कोयल नारि ।
सुवटो पकरो पेच करि मोहकरा दो हो मार ॥
पंछी कोप कहा करे करता करे सो होय ।
आउ कथा आगे भई सो चित दे सुणियो सोइ ॥
हिरदे बुद्धि विचार के मनसों सुमरे राम ।
सुवटे मन सुमरन कियो तब पत रापी राम ॥

पारधि येक नगर सो रहे । ताको कुटंम सब भूपन मरे ।
उदर कारज जिहां जिय कूं मारे । पाप करता कवहू न हारे ॥

परी भूप जब पारधी लीन्हो वन जीव जाल ।
करम लिप्यो सो न मिटे सब पंछी को काल ॥

भरी भाखरी रैर कै लीन्हो बाण सुपंग ।
उदर कारज बन फिरे सो चले तिहि प्रसंग ॥

येक दिवस फंद जाय के रोप्यो । उन पंछिन पर करता कोप्यो ।
हजार च्यार को जूथ चलि आयो । देपि पारधी अति सुप पायो ॥
करता आज फंद मोकूं दीजे । पूरन कृपा अनुग्रह कीजे ।
हिरदे सोच करि यह बिचारे । पंछी चले पंच हजारे ॥
यूं करता जिव फंद मे आवे । के मूये के जीवते सारे ।
के मेरे घर होत बधाई । आवते होती ते नवनिधि पाई ॥

केई मारे केई पकरिये केई मरोडि गात ।
केई जाल लपेटिये निसंक हाय बांधी गाठ ॥
व्याध चलि ग्रेह आइ अर सब पंछी साको कियो ।
जिन उन चितयो तेह सुवटो सुप मंदिर रख्यो ॥
समरे मृग कप जीउ आदये यटी जात ।
हिरदा मधे समरिये तव पति रापे करतार ॥
पंडव, होता पांच कौरव सुभट घणा ।
करुन भिरे जिन साथ याल न वंका तेहि तणा ॥

सुवटो सुमर यूं सुष पायो । पंछी सकल दाम नहीं आयो ।
अैसे कर सुवटा पत रापी । मालति कथा मधू सूं भाषी ॥

और सोच अब जनि करो कही जैत सुनि लेह ।
पूरव नेह निभाइए यहै जानि चित देह ॥
नैना सूं फुनि गिर बहे असतुत वचन तुप कीच ।
मन कोढ़न कूं चालियो लो उरकू रह्यो कुच बीच ॥

[४४६ अ]

तृ० १ :

एते कहत नीर भरि आयो । कन्या जनम कौन सुष पायो ॥
नृपती कनक माल सूं बोले । रोय रोय पलक ना खोले ।
रन में नाहिं कहूं मे हार्यो । कन्या को सुष कीनो कारो ॥
अब कहा जग में सुष देखराउं । लाय विभूति दिसांतर जाउं ।
राय बहुत चिंता मन लाइ । ए मोहि कन्या देइ बढ़ाइ ॥

(कनक माल वाक्य)

तुम काहे चिंता करो एमकबांधी राइ।
जो जाके कर्म्म में लय्यौ सो कबहूं ना मीटाइ॥

(चंद्रसेन वाक्य)

सुन रानी मैं तोहि सुनाऊं। मधुमालती दोउ मराऊं।
इन तो मोहि कलंक लगायो। कन्या जनम कौन फल पायो॥

(तुल० ४४६ अ १)

[४४७ अ]

तृ० १ :

कनकमाल चिंता करे भूरे, मालती आज।
पुत्री हम ते बीछुरे जग जीवत केहि काज॥

[४४८ अ]

च० १ :

तजो देस यहि ठौर न रहिये। याहि ठौर रहि नीर नहि पिये।
जाय बेगि तुम ऐसी कहिये। वचन सुनत मन धीर न रहिये॥

(तुल० ४४८)

[४४८ आ]

तृ० १, च० १ :

चलि सपि राम सरोवर जाई। मधुमालति कूं वात सुनाई।
चंद्रसेन नृप रोस भराई। कहियो पायक वेगि चलाई॥

[४५७ अ]

तृ० १, च० १ :

नैन तपत तुव दरस कूं श्रवण तपत तुव वैन।
करह तपत कुच गहन कूं अधर तपत रस लेण॥

[४६०. १ अं]

द्वि० १, तृ० १ :

अपने कुंज गई ले सपी। मालन कुंवरी आवत लपी।
उत ते चंद कुंवर ते आयो। बोली मालन सहज सुनाये॥

[४६० ख]

द्वि० १ :

राय देखि चकि तापाईं ध्यायो । चंद कुंवर की सुधि न पायो ।

[४६१ ग]

तृ० १ :

रानी मंगला सों इन बूझी । मालन के मन ऐसी सूझी ।

द्वि० १ :

कुंवर मालन आगें लगाई । इन चरित जाने सब पाई ॥

[४६४ घ]

तृ० १, च० १ :

नैन पदारथ नैन रस नैनै नैन मिलंत ।
अनजान्यो सु प्रीतड़ी पेखत प्रीत करंत ॥
हियरा राखूं दुःख कर मन राखूं समझाय ।
नैन रसीले ना रहें मिलैं अगाऊ जाय ॥

[४६५ ङा]

तृ० १ :

नैना दोउ मिलाउ दोऊ । अरस परस ना चूके कोउ ।
सोच कियो कछु बात न करही । अब इहां कौन बसीठ करही ॥

च० १ :

दोउ दैठे मन ऐसी चाहे । प्रीत प्रान मन माह जनाहे ।
देपो धूं करता की करनी । निरपत वदन गिरे दोउ धरनी ॥

[४६९ इ]

तृ० १, च० १ :

ज्यासूं जाको नेह त्या विन पड़े वसीठिया ।
आप आप में राचही जैसे रंग संजीठिया ॥
येतनो काजर मैं दियो पट घूँघट की ओट ।
जित देखूं जित गिर पड़े सो नैन बान की चोट ॥

रूपरेष मन प्रीत जनावें। चंद कुंवर सूं बोल सुनावे।
बिरह बान लागत ही मोहि। सांचो नेह जनावत सोही॥

बिरह बान तन बेधहीं कौन करे बसीठ।
नेह बंध्यो नैना मिल्या आपने आप ही डीठ॥

(केवल च० १ में)

[ज्यासूं जाको नेह कू जा विच पड़े बसीठ।
आप आप रंग राचही जैसे रंग मजीठ॥]
नैना बांधी प्रीतडी नैन मिलावे सनेह।
नैन ही रंग रांचही सो नैन मिलावो देह॥

(केवल च० १ मे)

[नैन पदारथ नैन धन नैना नैन मिलंत।
अनजान्या सूं प्रीतडी सोय हेला न करंत॥]
रूप रेष तन येह चंद कुवर तन चित्तयो।
प्रीत पहेली नेह बंधी प्रीत सरीर वहे॥

चंद कुवर गहि उर सूं लीनी। दे बगसीस अलिंगन कीन्ही।
प्रीतम दोनूं नेह जनावे। रूपरेषा बोहोत सुष पावे॥

नैन बार सिर सांधि कै मार चल्यौ मन लाय।
धावन दे बिरहे सपी छिन सिर मार्‌यो जाय॥

सुन हो बात मोरी मृगनैनी। नैन कमल तुम रूप लोभानी।
अब मैं तुम सूं अरज सुनाऊं। चलो सुप सेज बहु भांति रिझाऊं॥
गही भुजा अंक मानु परसी। लज्जा छुटिगा काम जु सरसी।
तन मन प्रान येक भये दोउ। कहिये कौन बात सूं सोउ॥

(च० १ मे इस प्रक्षेप के आरंभ मे भी ४६५ है और अत मे जैसा होना चाहिए है ही, जिससे यह प्रकट है कि यह अश बीच मे बाद में रक्खा गया है।)

मन मिलवे की रीत कंद्रप कोट न पाइये।
प्रथम समागम जीत डर भागो तन दोउ जन॥
रंग राच्यो वेह पान काथो सुपारी तन रच्यो।
ज्यूं चोली के पास पंजर मन मिलवा करे॥

मनमथ उपजे अंग ओषद वैद न जानही।
जिउ जुग मिले अनंत छुटे आपने सहेल मो ॥
कोल बचन परमान के बोले बोल सुभाव।
यह मरवो यह मोगरो येह सुगंधी जाय ॥

[४६६ अ]

तृ० १ च० १ :

नैना माती सैन बुलावे। उतर्ते चंद कुंवर तिहां आवे।
करै केलि तिहां बाग में दोउ। तीजो भेद न जाणै कोउ ॥
जोबन रूप दोइ मैमंता। अति प्रवीन रंग रूप सुरंता।
हीचें हंसे और रें बिलास। जब बिछुरे तब मन उदास ॥

[४६९ अ]

तृ० १, च० १ :

आसन एक दोऊ जु रहे आयो सिंध समाय।
चंद कुंवर चित दिष्टि करि सुषते लियो कित जाय ॥
चंद कुंवर मन चेतियो आयुध लियो संभारि।
करक बान कर वर लियो सिंह स्वान ज्यूं मार ॥

[४७१ अ]

तृ० १, च० १ :

आसन त्रिया जो दृढ़ रही कर लीयो वर बान।
चंद कुंवर मन में निरषियो ये सिंघ स्वान समान ॥
चित में धरी न और हिसत यह करवा दई।
सिंह मार दियो डर त्रिया आसन सूं रही ॥

(तुल० छंद ४७०-४७१)

[४७२ अ]

द्वि० १ :

उधम ज साहस प्रबल अधिक धीर नर चित्त।
ताके बल की मत कहो यम की करक संकित्त ॥

[४७३ आ]

च० १ :

बाल बुद्धि हीमत बस जाणे येह विबेक।
देव डरै दाणौ डरे येह पटंतर देष ॥

[४७३ इ]

तृ० १, च० १ :

सुनै न देषै नैन सूं बिन देषे विप षाय।
आये बिन मुष भीर थे सो जैसी बात बनाय॥

[४७७ अ]

च १ :

पूरव जनम कि प्रीत येह करता बिजोग ही देष।
कौन बियोग मैं कियो कौन करम के लेप॥

[४७७ आ]

तृ० १, च० १ :

बिधिके अंक न चूकहीं सुष दुख लिप्यो सरीर।
मनकी मनही जानहीं सो अपने जिये की पीर॥
बिप्र सूलि रे बाटमों कछु कोरि सरोवर पार।
गऊ बिछोहो मैं कियो सो कोन भयो जंजाल॥
किन सूं पीर सुनाइये किन सूं करूं पुकार।
अब संकर तुम रापियो अवर नहीं संसार॥
संकर सेवा मैं कीनी ओर नहीं कछु कार।
समरथ संकट भाजहीं बात कहूं सत सार॥

[४७८ अ]

तृ० १, च० १ :

गौरी संकर सूं कहे इनकी सुनो पुकार।
अंत रेष रच्छा करो मधू कुंवर की सार॥

[४८० अ]

तृ० १, च० १ :

आयुध येक न तो पै होइ। बिन आयुध कैसे कै लरिही।
नृप के दूत बहुत इहां आये। मधु तुम मनमें क्यूं न डराये॥

आयुध एक न मोहिं गहि गिलोल कर ले धरूं।
कहा सुनाऊं तोहि सारा को संग्रह करूं॥
ताको जीव डराय जाके बिन पस्यो नहीं।
केतियक कहूं बनाय असे गिलोल सुन मालती॥

[४८२ ग]

हि० १ :

[illegible] न पत्र तूं मालती [illegible] करै सु होइ ।
कटक [illegible] मन एक सो के, मधुकर कहियो मोहि ॥

[४८३ अ]

तृ० १, च० १ :

लीन्हो [illegible] [illegible] [illegible] लागी है मिलान ।
ऐक बिलोकि [illegible] [illegible] मैं भो जाई पात ही पात ॥

[४८३ आ]

च० १ :

मानो तरवर सूखो भयो मंगर अच्छ यह होय ।
कहै मधु सुनो मालती येह पराक्रम जोय ॥

[४८४ अ]

तृ० १, च० १ :

देय तमासो मालती येह कहा अचरज होय ।
पत्र पत्र पर उड़ गई अच्छ जु सूको होय ॥
मन सच पायो मालती नेक विरद यह बाल ।
पायक पठाये नृपति कोइ होत जंजाल ॥

[४८७ अ]

तृ० १ :

लरिका येक कहा करे सो पायक के जोर ।
राजा चित माने नहीं उहां लरे कोउ ओर ॥

[४८७ आ]

तृ० १, च १ :

तुरी सहस येक सज करो गैवर पाखर डार ।
बनिया तुमसो कहा लरे लखेगहि डारे मार ॥
गैवर तुरी बनाय के राजा दियो बहु मान ।
चले छत्रि सब साजि के सो प्रथम कूक मंडाण ॥

[४९० अ]

तृ० १, च १ :

जैसे नर अति कूमही अब लो देषि डराय ।
मालति जिय बिसमौ करै हांक सुनत अरि जाय ॥

[४९२ अ]

तृ० १, च० १ :

कहे जैत सुन हो मधु मालति वन बिस्तार ।
अली संभर यहे पूरब जनम कुल कुटंब संभार ॥

(तुल० छंद ४९२)

[४९२ आ]

च० १ :

प्रथम मालती बन बिस्तारौ । पाछे आनि भंवर टंकारो ।
असे बिना कारज नहिं होइ । तेरो दोस न मानै कोई ॥

(तुल० ४९२.३, ४ तथा ४९३. १. २)

[४९२ इ]

तृ० १, च० १ :

असे बिन कारज सब होय नहीं कुल कार ।
सरित समर न कोउ तरे कछु अब सेष हजार ॥

[४९३ अ]

तृ० १, च० १ :

अली अनंत संभारिये तोरी सब दल खाये ।
तेरो दोष कोउ ना कहे बिन मारे सर जाये ॥

[४९७ अ]

तृ० १, च० १ :

बेगि बुलायो आनि कर सहस्र येक के दोय ।
सब कूं मारै षोज कर सो पटक पछारों तोहि ॥
सुनत बचन गुन यहे मधु चला र आगे गयो ।
ज्यूं भादों को मेह कर गिलोल ठाढो भयो ॥

[५०३ अ]

तृ० १, च० १ :

कोउ मुए कोउ मारिए कोउ परे बेकरार।
मधू कुंवर हो एकलो सावंत एक हजार॥

[५०३ आ]

तृ० १ :

चंद्रसेन नृप ने सुन पाई। इतने बहुत कुमक पठाई।
सिगरे सूर सिमट कर आए। मधु को देखत बहुत रिसवाये॥
उठे मधू बहु तरी सभारी। कर गिलोल लीनी संभारी।
मारे मधू सकल दल भागे। फूटे अरब परब तिहां लागे॥

केइ मारे केइ मरे केइ परे रन बीच।
गज फूटे वोरा परे मचे रकत रन कीच॥

सो भागे सो चले पराइ। को इक मारे बिना सूत आइ॥
एक एक बिन सीस धड़ डोले। को इक नीर नीर बोले॥

[५०४ अ]

तृ० १ :

घायल नृप सूं करे पुकारा। मधु को वे सबही दल मारे।
सब ही मुए गिलोल न लागे। हम तो नृपति षेत तजि भागे॥

[५०४ आ]

द्वि० १ :

कटक कुटक किये येक छिन सूर बीर के षेत।
मधु मारे हारे सबै रही नहीं तन चेत॥

[५०४ इ]

च० १ :

नृपति गये घायल कने कौन लरे नर आए।
ताको भेद जो पाइये तैसी कुमष पठाये॥

[५०७ अ]

च० १ :

लरिका येक कैसे लरै और बनिया की जात।
परचक्री आयो सबी ओर नहीं कछु बात॥

[५०७ आ]

तृ० १, च० १ :

सुनतहिं वेग बुलाइये छत्री दल भूपाल ।
सजे सैन सब उलटे राम सरोवर पाल ॥

[५१२. १ अ]

तृ० १ :

ऐसे कर कर इनकूं मारे । इस विध काज आपनो सारे ।

च० १ :

ऐसे कर इनकूं समझाऊं । मन मेरे मे मते उपाऊं ॥

[५१२ अ]

तृ० १ :

सिव प्रताप मे कर सूं नहिं हारूं । पति मधुकर पे जब यह कारूं ।

च० १ :

विन जूझे सगरो दल मार्यो । येह विधि कारज अपनो सारो ॥

[५१३ अ]

तृ० १, च० १ :

जैतमाल मालवि कूं बूझे । भार अठारे वोहे कहा सूझे ।
फल औ पत्र भये है केते । याकी बात कहो तुम सोथे ॥

[५१३ आ]

च० १ :

आपे हो पोहोप दोहोपत्ता च्यार चत्रवारो अष्टकुलि ।
पोहोपत्ता । वेला ते षट भार निवासो देव निर्मिता ॥

[५१३ इ]

तृ० १, च० १ :

च्यार भार वन फल की वाड़े । आठ भार फल फूल से ठाड़े ।
वेली भार षट ते साहीं । येहि निधि भार अठारे ताईं ॥

[५१४ अ]

तृ० १, च० १ :

पोहोप सुगंधहि महमहे बोहोत बाग विस्तार ।
भोर भार गुंजार के आवे भंवर अपार ॥

अति सुधार दीसे गई तेग पवन निमतार ।
पवन वेग सम नृप के सो धाई करतार ॥

[२१८ ग]

च० १ :

धाई सेन चली तेग के नाक पचारी होय ।
चली चढे अति वीर करि कैसे बरनों सोय ॥

[२१६ आ]

तृ० १, च० १ :

पकर झोंकरे ब्यार हूं भमर पहुचे आन ।
करो कोप तन तोरही सो लेन लागे प्रान ॥

[२२२ अ]

तृ० १, च० १ :

कारे जैसे काग से नर तुरंग सब येह ।
भंवर विरंचे सेन पर सो तोरन लागे देह ॥

[२२८ अ]

तृ० १, च० १ :

आयुध डारि सबै गिरे बिन सारं सब संग ।
छुर्यो सबै अधे भये सो भंवर डसे यह अंग ॥

[५३१ अ]

तृ० १ च० १ :

घड़ी पैर के तुम चडे मोपे आयो क्यौ न ।
कहा वनिय सुत वावरे ज्यू आटा में लूंन ॥
दियो दमामा देग से आनो वखतर टोप ।
चढी सेन नृप चंद की घटाटोप मन कोप ॥

[२१६ अ]

तृ० १ :

नृप देखे जो भमरन पाये । तुचा मांस कछु रहै न पाये ।
नृप इष्टा ये बहुत तब मान्यो । आहि देष सत्य करि मान्यो ॥

कछु सांची झूठी कछू नैन निरषि भरमाय ।
राजा मन चिंता करे इस भमरा कहा षाय ॥

कहे नृप सुनौ सकल दल छिन इक इहां बिलमाय।
दूत पठाउ हेरबा मधु केतेक दल आय ॥
राय वैठ उहां बात कही दये दूत मोकलाय।
मधू दल वेह ठीक कर वेग सुध देयो आय ॥

[५३६ आ]

च० १ :

नृप दल आये ठाढ़ो भयो सुनही सबद पुकार।
नर जो आये हायल भये परसे पंच हजार ॥

[५३८ अ]

द्वि० १ :

अनेक दूषणं यस्य कदापि ग्राह्यते स्वयं।
आभूपणं न कुर्याच हार पान पृथक् पृथक् ॥

[५३८ आ]

च० १ :

अरे अयान अलप बुधि ओर गुन्यो त्रिया रूप।
नगर उजेणीं माझ रहि समझि चलो प्रति भूप ॥

[५३८ इ]

तृ० १ :

अरे अयानी अलप बुधि तोहि रान डर नाहिं।
नृप कन्या संग राप कर वैठे बारी माहिं ॥
तुम तो मधु मुरष भये नृप भय कियो न अंग।
संक्या ज कछु मन मा धरी लीयं मालती संग ॥
ते कछु संक नहीं मन कीनी। वनिया कुंवर मालती दीनी।
होय अज्ञान तैं ज्ञान भुलायो। नृप को कटल मूड पर आयो ॥

[५३९ अ]

तृ० १, च० १ :

कहा कहूं बुध तोहि कूं बंदी छोर कहाय।
नृप दल आय घेरो भयो ढिग बारी के आय ॥

[५४१ अ]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

ऊठवा साध भण्‌ ज्यों पुव्वा । सींहा पास चढै गहि दुव्वा ।
चींटी पंख लगी सच पाई । तोकुं यह बुद्धि कित आई ॥

(द्वि० १ में उद्‌धृत प्रथम अर्द्धाली के स्थान पर है :
स्वान सदा सवाद जु पावे । माला कंठ मंजारी नावैं ।)

[५४२ अ]

द्वि० १ :

विष भार सहस्त्रेपु गर्वनायति पन्नगः ।
वृश्चिको विन्दु मात्रेण ऊर्ध्वं वहति कटकः ॥
छोने घूने कुराज ये इनको एक सुभाउ ।
जिहं जिहं मारो संचरैं कोउ विनासे ठाउं ॥

[५४५ अ]

तृ० १, च० १ :

नृप कोपे जिय रोस करि कै तुम जाणे ओर ।
झूझ किये जीते नहीं वेग छंड यह ठौर ॥
मधु समावो येहो वेग सूं आज नृप है दूर ।
तो तन पटकि पछाडहूं सो पंजर करिहूं चूर ॥

[५४७ अ]

द्वि० १, च० १ :

अलप बुद्धि नर होय अयानो । तासो रोस न करै सियानो ।
कूकुर कोटि गयंदम भौंके । इन बातन कछु सरै न सीझै ॥

[५५० अ]

तृ० १, च० १ :

छोटे बड़े न जानिये करे सियानप सोय ।
दीनो दूत बिदा करि होनी होय सो होय ॥

[५५१ अ]

तृ० १, च० १ :

आयो इत ठाढ़ो भयो नृप कुं बात सुनाय ।
जैसी विध निरषी सबै सो कही बनाय बनाय ॥

[५५२ अ]

तृ० १, च० १ :

राम सरोवर पाल थे बोले गारि अपार।
सेन सबै चहुं ओर से बोलत मारहि मार ॥
सोइ करो सुहावणा बाजत येह रण जीत।
हांकहि हाक प्रचारहीं मधु सो बहे न चित्त ॥

[५६२ अ]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

जबरजंग गोला बर जैये। मदमाते मतवारे जैये।
गज गीवाय गरजै घन मानो। सुनत रोल चिहुं दिसि भगानो ॥

[५६५ अ]

तृ० १, च० १ :

सषी हमारे कंथ कूं अचरज बड़ो बिबेक।
एक ताकण लाष कूं लाख न कण एक ॥
बिलख बदन भइ मालती मधू न देषै पास।
जीय धीरज धारे नहीं चितवत भई उदास ॥

[५६६ अ]

तृ० १, च० १ :

पांडव नारी द्रौपदी कीचक हरण के काज।
भीमसेन देवल सरग सो हूं कहूं सुन आन ॥

[५६६ आ]

च० १ :

ध्यान लगाये जो रहे अतोष मन देक।
जुग भ्रमत सब कूं कियो बच्यो न काऊ एक ॥

[५७० अ]

तृ०, १ च० १ :

गोतम नार सिला भई इंद्र भये मंझार।
ससि सराप माथे भयो सुन ले वेरा परकार ॥

(तुल० छंद ५७०)

तब बीती भीतन भई दास दिखावै धाइ।
रान अलापै प्यान के संकर ध्यान लुकाय ॥

(मृगा० छंद ५०१)

काम अंस सपु प्रगटै ताको लगे न कोय।
धीरज धर जिन राव दृढ़ जैसे बहुलक होय ॥

[५०४ अ]

च० १ :

प्रद्युम्न (काम) अंस अवतारी। याकी कला सब हूं गे न्यारी।

[५८४ अ]

च० १ :

मृग कपोत संकट उबार्यो। उन मुख सूं जय राम पुकार्यो।
व्याधहि हारै विसकर पायो। सरनी जाय सिचानु लगायो ॥

[५८६ अ]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १ च० १ :

बड़े उदूखी हमन नहा है। पंथ प्रवाह मिला सीमता है।
जाड़े पात्र वृच्छ ने धर। अंगुली मानुं दहे द्रुग कीजर ॥

(द्वि० १ का पाठ किंचित् भिन्न है)

[५९०, १ अ]

द्वि० १ :

नर बाजी कुंजर असत न हारे। गज को कोर करत इक बारे।
शंकर शक्ति कुमक पठाई। अधिक ऊपर केहरी आई ॥

[५९२ अ]

तृ० १, च० १ :

केसरी एक महाबली गिर समान भारंड।
दल लरजो नृप चंद को भयो सोइ षंड षंड ॥
चीड़ी चुगै ज्यु ईलरी चंच भरी गटकाय।
जैसे दोय भारंड वहे कुंजर कूं ले जाय ॥
चंद्रसेन चिंता भई कौन आचरज येह।
भारंड सिंह गिलोल यह सो आन तुलाने तेह ॥

[५९५ अ]

तृ० १, च० १ :

देव चरित्र जाणे नहीं सब भागे नर बाम ।
चंदसेन मन सोच कर सो राजा छाड़ी ग्राम ॥

(तुल० छंद ५९५)

[५९६ अ]

तृ० १ :

अब कछु मोकूं भलो बतायो । प्रान जात है मोहि छुटायो ।
मे तो राज काज सत चूक्यो । विन बूझे रन महिं ढुक्यो ॥

में तो कछु बूझो नहीं में जान्यो रन होइ ।
लरिका को कहा मारिबो सुनो सयाने लोइ ॥
लरिका तो देवत भयो हम ना जान्यो मरम ।
जो ताकी थी ओर पर सो परी हमारे करम ॥

अब तुम कहो सोइ में करिहूं । आज्ञा तोरि नाहि परिहरहूं ।
तुम कछु मोकूं बुद्धि बतावो । काचो मतो कवहुं जनि भावो ॥

[५९६ आ]

तृ० १, च० १ :

अब कहा राजा हमकूं बूझौ । सादो कटक तो रन महिं झूझो ।
कुमत करी भीम पछतानो । कौरव ग्रह गयो विष षानो ॥
तैसी कुमत तुमको आई । तब चेते जब मूंड मां खाई ।
तब कहे राय कैसे विष पायो । सो समयौ मोहिं नाहि बतायो ॥

(मंत्री वाक्य)

सुन राजा मंत्री हम कहे । आदि पांडव हथिनापुर रहे ।
कारव पांडव विग्रह लागी । राजा मोह की उपजी आगी ॥

(केवल तृ० १ में)

[पांडव तो पांचे जने कौरव हते अपार ।
वे पांडव को माने नहीं नित उपजावे रार ॥

उनमां भीमसेन बलकारी । ताके त्रास डरे गंधारी ।
कौरव सबही मंत्र विचारे । भीमसेन को कौन विधि मारे ॥]
देष्यो भीम महा विख्यात । तापर कौरव रच्यो उतपात ।

तब पांडव मां भीम अति जोधा । कौउ नाम धरै ताको क्रोधा ॥
कह्यो मंत्र अब कैसी कीजे । सोई कह्यो भीम अब छीजे ।
सुकनि कहै सुनो मोहि बात । याहूं कीजै विष को घात ॥
विष को भोजन करो सब साजे । याहू नेवति जिमावो आजे ।
बहोत हेत करि पेटा लेवो । ता पाछे तुम मेवला देवो ॥
कौरव तो ऐसी मन ठानी । भीमसेन सौं भेंटे आनि ।

(केवल तृ० १ में)

[दइ भेट बहु हेत बधायो । भीम मां कपट जान्यों न पायो ।
कौरव कहै भीम सुन लीजे । हम पे कबहूं दया करीजे ।]
हम तुम भाई बंधु कुटंबी । कहा रापो तुम छोटी लंबी ॥
हम तुम काका बाबा के भाई । तामें तुम राख्यो हू जाई ।
एक ठोर मिलिजे सो आनी । कीजे प्रीत अधिक पहिचानि ॥

(भीम वाक्य)

अरे भाई तुम बंधु विरोधी । हम तो बात जानत हैं सूधी ।
तुम आगे लाप के महल बनाये । परपंच करी तुम तामो लायो ॥

(केवल तृ० १ मे)

[हमको महल मांझ बैठाये । तुम कपटी सब बाहर आये ।]
दरवाजे सों दीनी आगि । कही नहीं निकसन को लागि ॥

(केवल तृ० १ मे)

[हम तब ही पूछे सहदेव । उन कहियो जो ताको भेव ।]
सुनो पीर जो पूछो मोहिं । मारग में बतराऊं तोहि ॥
ये जो मोटी सिला मढाई । ताके नीचे मारग आई ।
एहि सिला ऊपर करि डारो । नीकस्यो वेग जीव उगारो ॥

(केवल तृ० १ मे)

[जब तो वे हम षंभ उपारो । अगिन जरत ते जीव उबारो ।]
अगिन हमारे पीछो कियो । जब हम कोल वचन तिहां दियो ॥

(केवल तृ० १ मे)

[एक दिना तोही भल उपाउ । सब कीचक तोंहि माहि जराउ ।]
ता मारग होइ बाहीर आए । टोडा राक्षस हम ते धाये ॥

राक्स कहे जान ना देहूं । इतने मां इक मानस लेहूं ।
जब में सबकी बिदा कराई । सिर अपने सब मृत ठहराई ॥
टोडे मुष पसार्‍यो बड़ो । ताके मुष में हूं कूदि पर्‍यो ।
टोड्यो जन सूं कियो विचारे । यो तो पड्यो पेट मंझारे ॥
अब जल पीए वोड़ येही मारूं । येह विध कारज अपनो सारूं ।
राकस पानी पीवन लागे । ताको पेट फाड़ हम भागे ॥
निकस तिहां थी बाहर आयो । भाई के कहुं षोज न पायो ।
ढूंढ़त फिरत परवत लौं आयौ । हिडंबा तिहां हिंडोलो लायो ॥
झूले तिहां दिवस अरु रात । इन मोसूं एक बोली बात ।
झूलो एक देहि मोहि जावो । नहिं तो में कछु करूं उपाव ॥
तिहां हिंडोलो ऐसो दियो । मानो प्रवेस सुरग कूं कियो ।
हिडंबा कहे थो बहुत्ती बार । में तुमकूं करिहु भरतार ॥
झूला तब में थंभ लीयो । चावो बैठी मतो मे कीयो ।
हमरे बंधु षात भुलाये । तुम तो कछू जान न पाये ॥
भाता तुमरो च्यारूं बीर । उनकौ लैगे पिता कबीर ।
पूजा करे भवानी मात । तिहां चढ़ावै मेरो तात ॥
सुनत बात मोहि धोषो होइ । में तो चल्यो नगर मा सोइ ।

(केवल तृ० १ में)

[उहां ते बात सबै सुन पाई । अति चिंता मेरे मन आई ॥
तब में ऐसो करियो बिचार । जाय बैठो देवल मंझार ।]
पूजा को पाथर मैं टारूं । इउहा जाइ आपो बिसतारूं ॥
पूजा पकवान ले आवे कोय । तेतो भूषा भोजन होय ।
पाछे पूजा राइ कराइ । हमरे बीर मात कूं लाइ ॥
जब देवल पै कीने ठाढ़े । माता कलाप करे अति गाढ़े ।
इहां नहीं को भीमडो बीर । तो मारे बांधि दानव कबीर ॥
सुनत झूझ मन मों अति लागी । पर्‍यो कूद देवल के आगी ।
पडतो सोर भयो अति भारी । मानूं गज गिरवर तें डारी ॥
सारी सेन भागि जब गई । कबीर दानव सूं भाथी भई ।
राकस मारि छुड़ाए बीरा । तब माता को भयो मन धीरा ॥
में तो नारि हिडबा व्याही । अरे भाई तुम हो दुपदाई ।
हम तुम बीच हेत ना होई । तुमरी बात न माने कोई ॥

(कैनल नं० १ से)

[गुन झूठे महा आगाजे । न दियो कछु बिस्वास काजे ।
हम तुमारो बिस्वास न करा । और मान नाहीं चित धरा ॥]

[५६३ छ]

दो० १ :

सुनो राय दुर्योधना तुम सौं छिप ना होइ ।
कपटी फंद बिनास को दाग न माने कोइ ॥

तुमारे डर हम बन पंथ लीनो । पुनि हम भेद और ही लीनो ।
संग द्रोपदी पांचे भाई । दुखी बहुत अपने मन माहीं ॥
बहुतक भूपो व्यापित होइ । [illegible] नाइ बहुत दिन [illegible] ।
तब हम भेद एक ठौ कीनो । बैराट देस को मारग लीनो ॥
कोउ भयो विप्र कोउ भयो नाइ । कोइ भयो ग्वाल कोइ रहे सुराइ ।
आयुध सबै बिरछ पर धारे । एइ बिधि सौं नव नगर सिधारे ॥
बैराट राय तिहां बडो नरेसा । उपमा कौन कहूं तिहां देसा ।
बैराट राइ सों भेटे जाइ । संग द्रोपदी पांचे भाइ ॥

सेवक होइ उनके रहे अपनो बरन छिपाइ ।
टेहल फरमाइ रावली सो हम लीनी उठाइ ॥

वाको सालो कीचक आहि । परम दुष्ट पापी अन्याई ।
देषी द्रोपादे सुंदर नारी । उन वामौं कीनी ठगचारी ॥
आनि द्रोपदी बस मां कीनो । रुदन करम तब होत मलीनो ।
सबही मिल ताको समझावै । भेद वात उन माहिं सुनावै ॥
जब में वात तात सो बोली । फिर के वो जब करे ठठोली ।
तुम वाको धीरज दे आवो । निज के ए असथान वतावो ॥

सुनी वात जब द्रोपदी मनमां लाई धीर ।
जा दिन दूनो रूप कर नौतन पेहरो चीर ॥

राजा निज मंदिर को आए । कर असनान सोइ पाए ।
कीचक ताके पासे आयो । देष द्रोपदी बहुत सुप पायो ॥
आस पास जब जाय निहारी । पकरी जाइ द्रोपदी नारी ।
आनि द्रोपदी पै कर डार्‌यौ । हम मुसकाइ अरु बदन निहार्‌यौ ॥

कहे द्रोपदी सुनो महिमंता । ताकौ नाहिं लाज अरु चिंता ।
तो कामी को लाज न आवे । मेरी कहा परतीत बटावे ॥
जो तोरे मन ऐसी होइ । मेरो बचन माने नर लोइ ।
बाहर नगर जो देवल आहि । आज रैनि उहि बैठे जाइ ॥
होइ रैन जब ही मैं आऊं । सब निस प्रीतम तोहि रिझाऊं ।
बात मान कीचक सो कीनो । देवल माहिं ,आश्रम लिनो ॥
तेल फुलेल अरु पान मिठाई । बहुतक फूल की सेज बिछाई ।
पिन भीतर पिन बाहर आवे । मन चिंता कब नाशी पावे ॥
इहां द्रोपदी भीम सुनायो । भीम सुनत श्रंगार बनायो ॥

सिर सिसफूल बेंदी दई नीथनी अधर अनूप ।
कर्नफूल गले माल है चढ्यो चौगुनो रूप ॥
छुरी चमकि अपार कर कंकन पौंचरी दई ।
नेउर को झनकार ले सुप चली सो कामनी ॥
गज मराल मोहे सकल ऐसी चलत है चाल ।
बने भई जब कामनी सबल भीत भइ बाल ॥

इह विध चली सो देवल आइ । कीचक देप महा सुप पाइ ।
मगन भयो कर सो कर लायो । भीमसेन जब अंग दिपायौ ॥
पटक पछार हाड सब तोरे । भीमसेन मैदा कौ मोरे ।
ज्यौ कुंभार माटी लत लावै । भीमसेन इम त्रास दिपावें ॥

कीचक मार पछारकर दियो भूमि में डार ।
वाके उर ऊपर चढे सू पाछे कियौ विचार ॥

कीचक पान मिठाई लायो । सो तो भीमसेन सब पायो ।
येह विपरीत भीम उहां कीनी । फिर के सुध नगर की लीनी ॥
कहे भीम अब केसी कीजे । माकू कहूं ठिकानो दीजे ।
सिंघ बाघ ले कोइ पावो । मो सिर अगिन भार रहावो ॥

अगिन भार मो सिर रहे कष्ट अकारथ जाय ।
हानि होय इम धर्म की वाचा को पतियाय ॥

इह विध धर्म हान की होइ । वाचा नहीं पतीजे कोइ ।
अगि न हम सो भलपन कीनो । लापाग्रह जारल जिव दीनो ॥

भीमसेन मन समझ के कीनो गूढ़ विचार ।
एक बात और करूं जाते चले हुसार ॥

जब देवल को थंभ उपाड्यो । कीचक की छाती पर धार्यो ।
कीचक ने मार्यो सुभ साजा । दोहरा एक लख्यो दरवाजा ॥

मैं मार्यो मैं नागियो कीचक पटक पछार ।
जो देहरा सुद्ध प्रमौ करै सो ताको भोर ही काल ॥

इतनी चर्चा नगर में आयो । अपने मंदिर बैठ सुनायो ।
भोर भये राजा कहा कीनो । पूजन देव काज चित दीनो ॥
राजा देव मंदिर मा आयो । कीचक तहां मृतक सो पायो ।
राजा कहे सुनो रे भाई । यह अचरज किन कीनो आई ॥

राजा मन चिंता करे कीचक मुयो निहार ।
ऐसा जोध्दो किन हत्यौ मैं नाही पाय पार ॥

ऐसे सोच राजा को होइ । हाहा करै नगर नो लोइ ।
जब राजा इत उत नीहारे । दिष्ट कहूं दोहरा पि पारे ॥

राजा दोहा बांचि मन मंत्री लियो बुलाय ।
मंत्री सो राजा कहे सो याको अर्थ बताय ॥

मंत्री मन मां सोच बिचारे । जो मैं पढ़ूं तो राजा मोहि मारे ।
एतो माकूं अचरज लागे । अब कहा करूं अक्ल न लागे ॥
मंत्री बात दई जो टारी । ए राजा अब कहा निहारी ।
अब तो याकी माटी छीजे । वेगहि राय दाग इह दीजे ॥
थंभे तरे सौ कौन निकारे । ये राजा मन माहि बिचारे ।
बडे बड़े जोधा पचि हारे । को बलवंत सो ताहि निकारे ॥
जब कहे भीम मेरी मत कीजे । ये देवल मां चना भरीजे ।
जाके ऊपर जल छिरकावे । फूले चना निकस एह आवे ॥
भीम कहे सो ही करवायो । राजा अपने मंदिर आयो ।
रात्रि समे भीम कहा कीनो । वा देवल को मारग लीनो ॥
सब ही चना पाय के डारे । पकर टांग कीचक निकारे ।
भोर भयो राजा कूं सुध पाई । कीचक की तब खबर मंगाई ॥
मानस एक देप के आयो । उन राजा कूं सब सुनायो ।
राजा कहे दाग तेहि दीजे । अब छिन भर ढील ना कीजे ॥

वाको कौन उठावन हारो। अब याको सब सोच विचारो।
भीमसेन बोले सिर नाईं। मोकुं हे आज्ञा दीजे राई॥
सुनत राय जब आग्या दीनी। कीचक मोट भीम सिर लीनी।
तब कीचक वाहि संग सिधारे। निकसे दूर नगर से न्यारे॥
सब ले काठ बहू ले आए। कीचक को वहां दाग दिवाये।
अग्नि प्रजाल दाग तिहां दीनो। सब कीचक तीमे ए कीनो॥
पंच काठ देके सब चाले। गही गही बाथ भीम सब डाले।
तीन में एक रहन सो दीनो। जीभ तान के गूंगो कीनो॥
तब हम सबे राय पे आये। राजा कछु मनमां पछताये।
बोल राजा ओर कहा याइ। जब मैं उन से बात जनाइ॥

ऐ मास यो गहे पूछयो याको राय।
जेथी उहां वाढी विथा यो कहे है समुझाय॥

जब राजा पूछौ उहां लागी। बिन जिभ्या कहा कहै अभागी॥
हाथ फिराय मोहि बहरावौ। राजा सुन के अचिरज लावो॥

राजा कछु समझै नहीं उनही कहे निज वैन।
मो तन कर बतराय के करी नैन की सैन॥

जब राजा मोकूं पूछौ आहि। याकी तो कछु जानी नाहिं।
ये तो सत कहत है बैना। तुम नासमझे याकी सैना॥
जब हम दाग कीचक कौ दीनो। सब बांधव मिल परहेज कीनो।
बारह मोहि इनको मन आयो। कुद परे सब प्रान गमायो॥

इत थांभु तो इत परे इत थाभूं इत जाय।
या विधि सौ सबही मुये राषौ एक समुझाय॥

सुन कौरव तुम अैसे भाई। तुम प्रताप हमको दुपदाई।
अब कह्यौ तुमसो कौन पतियावे। सो तो अपनो जीव गमावै॥

[२६१ ई]

तृ० १, च० १ :

(कौरव वाक्य)

अरे भीम बिनती सुन लीजे। मेरी वात चित्त मो दीजै।
हमारे मन माहि नही कछु दगो। तुम सूं दूजो नहिं कोइ सगो॥

(केवल तृ० १ में)

[एक कहे पिंजर में लेहुं। यामें होइ सो ताकूं देहुं।
पिंजर तब निकट चलि आयो। इन आपस में मंगल गायो॥]
पिंजर काढ़ि बाहिर सो लीनो। दोनूं मिल के बाटो कीनो।
पोलि पिंजर देखे जबही। मृतक रूप निकसे तबही॥

(केवल तृ० १ में)

[भलो बुरो कर्म में पठइ दियो करतार।
कर्म रेष नाहिं न टरे सो मेरो ये भरतार॥]

ये जोधा रन बहु बलधारी। सोच करे बासुक की वारी।
नारायेन मोहि काज पठायो। मृतक होय मेरे ग्रह आयो॥
अब तो याकुं मरे जीवाऊ। जबही आन पान लित लाऊ।
है अमृत हमरे घर माहिं। पिता वचन कैसे मैं पाउं॥
तब अपने मन बुद्धि उपाई। काढ कंचुकी गेंद बनाई।
अमृत कुंद पास चलि आई। तहा चौकी बहु नाग रहाई॥
पेलति गेंद दई तिहां डारी। परी जाइ वहे कुंड मझारी।
परत गेंद नाग सब धाए। कटकटाइ वहि ऊपर आइ॥
सकल नाग मन माहिं विचारी। यह कन्या बासुक की प्यारी।
कन्या रोय रोय पछितावे। सकल नाग याकूं समुझावे॥
अब मैं पेल आपनो पाउं। मैं मेरे मंदिर कूं जाऊं।
गेंद निचोइ नाग दइ डारी। लेइ उठाइ हरष भयो नारी॥
चली बेग भीम पै आई। अमृत नेक भीम मुष नाई।
कहे भीम निंद्रा मोहि आई। करो ग्रहे बहु भौजन पाई॥
कन्या कहे सुनो मम बानी। तुम तो आये अमृत पानी।
मैं तुमको अमृत प्यायो। ताते जीव पेट मां आयो।
पूछे भीम कहो तुम गामा। अरु तुम कहो आपनो नामा॥

मै पुत्री बासुक की यह षंड पाताल।
अमृत से जीवित भये कृपा करी गोपाल॥

कहै भीम सुन नाग कुमारी। अमृत मोहि बतावो प्यारी।
अमृत कुंड उन ताहि बतायो। ये तो भीमसेन मन भायो॥

नाग सकल सब मारिके अमृत पीयो अघाय ।
ऐसो हो सो भीम थे सो अब कहा कहूं बनाय ॥

सकल नाग तिहां भागे जाइ । बैठे तिहां बासुकि राइ ।
महाबली ऐसो कोइ आयो । हमें मारि अमृत सब पायौ ॥
जब बासुकि ऐसी सुन पाइ । जाइ गरुड सूं कहे सुनाइ ।
सुनतही गरुड उठे ततकाल । एही बात अचिरज करपाल ॥
महारुद्र यक मतो उपायो । तिहां गोरी कुं तुरत बुलायौ ;
गौरी अब कछु ऐसी कीजै । अहित भीमसेन को लीजे ॥
तुम गाय होय के उठ भागो । मैं सिंघ होय के पाछे लागौं ।
गौरी गऊ भीम पें आई ; सिंघ होइ सिव तास पर आई ॥
गऊ देषि भीम रिस पायो । गदा उठाइ सिंह पैं धायो ।
भीम पेट सिव पंजा छीनो । पेट फार सब अमृत लीनो ॥
भीमसेन जब गदा उठाई । सिव कहे भीम छाड़ दे भाई ।
कपट सरूप दूर उन कीनो । सिव गौरी होइ दरसन दीनो ॥
भीमसेन तब दरसन पायो । तब छिन हथिनापुर को धायो ।
बधु लरय मेरे उर लाई । कुंता भेद बहुत सुष पाई ।

[५६६ उ]

तृ० १ :

मंत्री बिना बात करे न कोइ । तो ताके सिर ऐसी होई ।
एतो हमकूं पूछग लागे । राजा मतो चुक गयो आगे ॥
जो तुम करो बात बिन बूझे । तो सब दल तुमारे झूझै ।
तुम अहंकार कटक का आया । दल झुझाय बहुरो पछताया ॥

[६०२ अ]

द्वि० १ :

एक रंग पीत कुसुंभ रंग नदी तीर द्रुम डारे ।
हेत नीत सुभ लीषिये को दृढ़ होए संसार ॥

[६०५ अ]

तृ० २, च० १ :

राजा मन ऐसी धरै केही सुनो नहिं कोय ।
मंत्री मतो न जानहीं सुनो नृप कैसी होय ॥

[६१० अ]

० १ :

अपने अपने लोभ मों सब कोई रह्यो लोभाये।
चारि पुत्र परदेस मों सात समुद्र जाय ॥

(राजा वाक्य]

कैसे सात समुद्र गयो कैसे गरब किवाये।
वैसे मन अति लोभ कर कैसे समुद्र बुढाय ॥

राजा मंत्री कूं बूझी औसी। लोभी साह भई सो कैसी।
कैसे कर उन पुत्र बिरोधे। कैसे कर उन सायर सोधे ॥
कोण सें देस कोण अस्थाने। कोण नग्र ओ कोण से गामे।
कोण सो धरम कोण सनान। कोण जात कोण वाको नाम ॥

(मंत्री वाक्य)

नगरी येक देस गुजरात। चंपावति नगरी विष्यात।
तामें सब बनिया को काम। माणक साह बणिया को नाम ॥
दरब अपार कमी कछु नाहिं। लोभ रहे वाके मन मांहिं।
लोभ करंता कबहुं न हार। नाहीं गिणे पुत्र परियार ॥

लोभ करत हारे नहीं लोभ करत है आप।
लोभे बंस बढ़ नहीं सो लोभे लागे पाप ॥

माणक साह घर पुत्र जो च्यार। त्रिया आप बढ़तो परवार।
जैन धरम सब ज्ञान बिचारे। लोभ करंता कबहुं न हारे ॥

(तुल० इससे चार ऊपर की पंक्ति)

भाइ बंध मिल सब समझाये। च्यारि पुत्र का लगन कराये।
ज्यात सबी मिल ब्याह न कूंआरी। संदया धरे सेठ मन माईं ॥
ज्या दिन से अब ब्याह मंडाणो। सो सब दाम कागद में लिषाणो।
कौड़ी पैसा और रुपैया। लेषा राष जो मेरे भैया ॥
सगा सजन सब पाहुंणा आये। साहा जो आदर भाव बेठाये।
वाना बेस और मंडप कियो। चीकसा मर्दन दूलहा कूं दियो ॥

म० वार्ता १२ (११००-६४)

दे चौकन्या सिरोपाव पहिराये । च्यारिहु दुलहे चौक मो आये ।
होतन लगो कुटुंब को भाग । माणक साह जलै मन गात ॥
मन कि काहू से कहन को नाहीं । अब कहो कैसी बणेगी भाई ।
परनाया सुत भयो कोइ नाठो । अब मेरो जनि नाम लेवायो ॥
सुनो साहु जी ये पुत्र तुमारे । हम सौं तुमारे काजा सारे ।
करौ लाग कछु होन देवहारे । सगली जो तुम ऊपर प्यारे ॥
च्यारि पुत्र परनाइ घर आवौ । सगरी नात कूं निवति जिमावौ ।
पहिर वस्त्र अरु सरूप आये । सगा सजन सब टीका ल्याये ॥
रोक रुपैया और अशर्फी । सरसा नाफक सब कोइ सेली ॥
टीका लेत भयो चढ़ी बरात । चलि निकस्यो बणिया के साथ ।
रथ बंगला और बेल न आती । सुखपाल दुलहा लियो हो बैसानी ॥
दूल्हे रूप ऐसे नहीं कोई । जाणो दूज के चंद्रमा होई ।
हरषत बदन सुख सहज सरीर । ऐसे बने है ये च्यारो बीर ॥
हासत खेलत सब दिन जाये । अपने साथ बिन पल न सुहाये ।
मजल मजल पर किया मुकाम । जाय पोहोचे सजनहु के गाम ॥
दिया मुकाम बगीच्या माह । खबर बेगि समधी को जाय ।
घोड़े पैठि बिनायकी आई । इत दुलहा ने करी सजाई ॥
च्यारु कुंवर सज्ये चढ़ि जागे । मानूं लहर इन्दी की आई ।
अनुकूल चलाहे बरात । साथ चल्यो बनिता को साथ ॥
चले बेग मंडप माहि आए । समक सास हरष वधाये ।
छीयो तोरन मंडप पैठा । पाणी ग्रहण हर्नी वाले पेठा ॥

सगा सजन हरषत भया खुसी भयो सब साथ ।
माणक साहा मन सोच कि अब कैसी बनेगी नाथ ॥
च्यारि पुत्र परना सही भली भई करतार ।
माया पोई गांठ की लेखा मन मंझार ॥

परन पट्ट कर चोरी सो आये । भोत सामग्री दायजो लाये ।
कीनो सकल आचार विचार । जैसो अपनो कुल वेवहार ॥
भाई बंध कुटुंब हू कुलाई । सब मिलि बरात विदा हो कराई ।
कीनी जुहार और सब सिधारे । माणक साहा को सब परवार ॥
सगा सोई कि विदा कराई । माणक साह मन लेषा पाई ।
च्यारि पुत्र कि बेउरा बुलाया । माणक साहा लेषा समझाया ॥

सुनो पुत्र कैसी अब कीजे। करो कमाई करजो दीजे।
हजार च्यार सादी मो उठाये। जावो परदेस तुम ल्यावो कमाये॥
च्यारि बहू जो रही मंदिर मायं। च्यारी पुत्र परदेस जो जायं।
माणक साय काहे उदास। गये पुत्र मन बंधी आस॥

पुत्र गये परदेस मो माणक मन आनंद।
लोभ धर्‌यो अति द्रव्य को सो मिटि गयो दुष दंद॥
मन मों सोच कछू नहीं नहीं पुत्र की आस।
सब दिन फिरतो लोभ में सो मन बड़ो उदास॥

समधी बहुड़ी लेन कुं आये। दुष्ट सेठ ने नाहीं पोहोचाये।
च्यारि बहू मिलि पीहर जाये। दरब मेरो अब कोण कमाये॥
च्यारि पुत्र परदेस थे आये। सबही कर ब्याह को चुकावे।
जब इनकूं हूं पीहर पोहोचाऊं। जब मेरे सिर को करज चुकाऊं॥
येतनो सुन मेहमान जो जाये। साहा जी रह्या महू कमाये।
आप सेठ ओर घर घराणी। च्यारी बहू वे रह अजाणी॥
षावें पीवें करें बिलास। मन सों कछु न राषे उदास।
सत संगत अपनो धर्म पाले। बड़ी च्यात्र सूं बुध मो चाले॥
नित प्रति हरि सुमरन करे। हरि को नाम हिरदे उच्चरे।
रंभा रूप अनोपम नारी। गोपन रूप कास उनहारी॥
च्यारी सरस कमी कोउ नाहीं। कलम हात सरसुती बनाई।
सक्ती रूप मानो गत अैसी। सीतल बोले मानूं गत तैसी॥
सासू ससरा भरम घर लाजे। अब याके सब नेगी महराजे॥
पुत्र गये दिन मोत लोभाने। आये नहीं सो कोन प्रमाने।
न देष्या देस जो कासद जाये। कोन षबर कहे पुत्र की आये॥
त्रिया सद मातो धिरग जुवाने। या कलजुग को मौन प्रमाने।
कैसे करूं कैसे समझाऊं। त्रिया जात कैसे विलमाऊं॥
माणकसाह मन कर्‌यो विचारे। वेग बुलाई घर की नारे।
कहो त्रिया अब कैसी करा। कैसो सोच हिये मन धरा॥

कहा बिस्वास है नार को ओछी बुद्धि कहाय।
येक जो बिगड़े देव से सो लइ बिगड़े वे च्यार॥

नार भरोसो जनि करो नार नवेली नेह ।
बिगरे तो कुल षोवहीं सुधरे संपत लेह ॥

सासू ने च्यारि बहू कूं बुलाई । सिष दीनी ओर पास बेठाई ।
सुनो बहू बात वचन मोहिं पालो । कुसंगत सूं धरम सों चालो ॥
साहा जी सेठाणी कूं समझाई । मे तो चार मंदिर हू के माहिं ।
पावे पीवे सुष संपत पाले । सत तूं कतहुं के मारग चाले ॥
दोय दासी नित रह हो हुजूरे । च्यारि वचन माने भरपूरे ।
च्यारि बहू की सेवा कीजो । दासी मेरो वचन सुन लीजो ॥

परपंच करी पेहेली बिच्यारी कूं समझाये ।
सासू की साथे गई सो मेली मंदिर माये ॥
दूजो मंदिर रहेण कूं सज घर अंद बीच ।
चौपडी च्यारूं दिसा महल च्यांदणी वीच ॥

च्यारि बहू कूं भीतर मेली । सेठाणी घर रही अकेली ।
भरे भंडार कमी कछु नाहीं । भीतर रहे कोउ सुप न देषाहीं ॥
भीतर मेलि ताला हो देवाया । मायक साहा हिरदे सुष पाया ।
भलो भयो हो मिलो हो संताप । बैठ रहेगी मंदिर हूं आप ॥
षाणे पीणे की कमी कछु नाहीं । बैठ रहेंगी ये मंदिर माहीं ।
कूप निवाण चौपडी जो माहीं । बाग वगीचा वणे सब ताहीं ॥

न बिश्वासे वंस वृद्धि शत्रु मित्र कदाचनं ।
मात से सन चिन्तानां पिता लोभं सुषं धनं ॥

वंस बिरोध कोउ हेत न करही । मित्र ऊपर मित्र जाय मरही ।
माता बिना कोउ भूप न जाने । पिता सो लालच लेस कूं जाने ॥
सुनो चातुर अप बुद्धि बिचारो । पुत्र बिना सूनो परिवारो ।
दीपक बिना मंदिर रहे सूनो । बिना मंत्री सब राज अलूनो ।
सूनो नग्र जहां जल नाहीं । झूठी वृच्छ बवूल की छाहीं ॥

येते की संगत करे बिन मार्यो मर जाये ।
जो जेसी संगत करे ते तैसे फल पाये ॥

बैठी मंदिर सों च्यारि उदास । दोय दासी हे उनके पास ।
कहे कयो सोचे दोउ करहीं । हर को नाम हिरदे सों उचरहीं ॥

करे असनान नेम धर्म पाले । सुसंगत सत मारग चाले ।
ऐसे सत्त च्यारूं को रहिये । सुध कुल की उनकूं कहा कहिये ।
ऐसे करत बहू दिन बीते । च्यारूं रहिये येक दे चिंते ।
येक कहे तो वे तीनो मानें । औ दूजाई चित मों नहिं आनें ॥
पूजे देव करें सब ध्याने । बंधो नेम सो येक ठिकाने ।
सोहे सेज जपे हर नाम । रात दिवस भजन सूं काम ॥
घड़ी येक मंदिर मों सुष पायो । पति बियोग हिरदे मों आयो ।
सुनो सषी आपनो बिच्यार । ध्रग जीवो अपनो हो संसार ॥
कौन दिवस हो जनम दियो नाथे । लिपे लेप अब कोन कि साथे ।
च्यारूं जनम दिवस येक पायो । येकी लेषण करम लिपायो ॥

किन से मुंह भर बोलिये किनसे करिये रोस ।
करम लिलाड़ी आपणी सो देव न दीजे दोस ॥
च्यार सषी सुज सेज मों रोवै नैन असेस ।
अब करता कैसी कीवि सो आपनि बारी वेस ॥
बालापण मों नीपजी पिता दीवि परनाये ।
सजन विना सुन हो सषी जोवन अहेला जाये ॥

दुचो दिवस हर सुमरन कीनो । फुनि महल चादणी चित दीनो ।
च्यारी मिलि बैठी येक ठामे । हर का सुमिरण सूं नित कामे ॥

च्यारी च्योबारां चढ़ी रोवै नैन असेष ।
संकर तुम किरपा करो सो उमिया नाथ हमेस ॥
च्यारी निल चरना पड़ा सदा तुमारी दास ।
सुष संपत देष्यो नहीं सो मन मों मोटी आस ॥

झुरे नैन जो मोती झर लागी । संकर ध्यान सूं सकती जागी ।
जागे सिव जब सकति यूं कहिये । चलो स्वामी जुग को सत लहिये ॥
सिव पारबति उठि के जा ध्याये । कैलास छाड़ करि जग महं आये ।
जुग महं सत रापे कोइ अपणो । झूठो जग दिन च्यार को सपनो ॥
च्यारूं रोवे घडी हू न सोहावे । आंसू पड़े छाति भरि आवे ।
ऐसे करत दिवस ब [illegible] । सिव पारवति तिहां निकसे आये ॥
सकती रूप सकल हू की राणी । उन च्यारूं की सनहू की जाणी ।
रंभा रूप सोहंनी नार । जोबन रूप काम उणहार ॥

रुती रूप दवाग्न जुगो भैसी । जोबन रूप नै काली वैसी ।
रोवत आंसू धरनि पर डारे । सकति देष ऊंच्यो नीहारे ॥
व्याकुल बरषन लागर कारन । बिना धर्म शो पानी परेत ।
देखो सकति त्रिया दुख दोसै । रोवति देषी रंभा रूप रोसै ॥
देषि त्रिया च्यारि रुदना ही चाई । सकती सिव कूं वचन सुनाई ।
सुन हो स्वामी वचन चित दीजे । इनहूं को दुष दूर करीजे ॥
सुन सकती तुम भये अंधारो । इनहूं भवन मत मान हमारो ।
अपने काम कारण जन रोवे । फेर बात माने ना जोवे ॥
जुग मों ऐसी सदा मिल होय । पारवती पाछे नहि जोय ।
चलो कबिलास अब बिलम न कीजे । मेरे वचन श्रवन सुनि लीजे ॥
सुनो इन को दुष दूर जो कीजे । पूरन कृपा अनुग्रह कीजे ।
येह च्यारी हैं आज्ञाकारी । इनकु दुष बहुत है भारी ॥
तुम इनको दुष दूर मिटावो । तब स्वामी कबिलास मों जावो ॥
ऐसो हठ पारवती ने कीनो । उनहू को दुष दूर करि दीनो ।

से [हि] जे सुष पायो सही सिव जी मिलिया आये ।
संकर सिर ऊपर भये सो दुष दालिद जाये ॥

सो वं उंधे सिव वचन सुनायो । पल मात्र मो प्याल दिपायो ।
लिखकर सिव सकति नहो दीना । सिवका बचन कंठ करि लीना ॥
नाव काट किम भव जल तारे । देष तमासा या जुग मंझारे ।
पै उपदेस गये कबिलास । च्यारुं मन को भयो हुलास ॥
पड़ी साम तब देषे जाई । अगर चंदन को लकड़ पड्यों ताहीं ।
ऊपर बैठि सिव सबद सुनायो । अगर चंदन पर दीप दिपायों ॥
रतनाकर सागर भरपूर । वसे नग्र हां चकनाचूर ।
पडी जहाज कछु गिणत न आवे । मोती सूंगा की कौन चलावे ॥
देवी देव वसे कबिलास । भरयो नग्र जाणे बैकुंठ वास ।
देषि त्रिया दुष भागो हो सवहीं । ऐसो नग्र है देषो न कवहीं ॥
देषि नग्र भई पुसियाल । रंभा रूप अनोपम चाल ।
च्यारी गहे नग्रहे संझारे । देष्यों भाव नग्रह मों सारे ॥
च्यारि त्रिया कूं देषी सहुनारे । की आरती ओर हरष अपारे ।
कुमकुम केसर उबट नहाई । माथे तिलक करी हो वदाई ॥

सारो दिन दरसन कूं लजाये । सहाज समें उनकूं पोहोचावे ।
असे करत दिवस दिन जाये । भोत पुसरे त्रिया मनहि के भाये ॥
नित उठि सेठ चौषंडी मो जाये । करे दुवारी गउ कि हो आय ।
छोडे गऊ गुवाल ले जाये । माणक साह पुसी मन भाये ॥
मैं निज देषूं चंदन की ठान । चित चौकानो मन कीनो ज्ञान ।
या चंदन कूं कोन उठावे । याको भेद अब कोन बतावे ॥

भेद छेद किनसे लहूं किनसे पूंछूं जाये ।
अब मन धीर बिच्यार के रहूं रैण या माये ॥

रह्यो रैण मन माय विचारी । सांझ समें वे आवे नारी ।
सिव सिव करके बचन उच्यारे । गयो अग्र समुद्र के पारे ॥
टापू माय उतारे जाई । पडी जहाज कछु गिणती नाई ।
हीरा जुवाहर पदारथ पाये । भर जीवा सब दरस भराये ॥
पड्यो है दरब कमी कछु नाई । भाग लिष्यो सो सबहू कूं पाई ।
देस देस के महाजन आये । होय लेषा कहा जहाज भराये ॥
वैठे ग्रहे सहुकार स धीर । पड्यो है दरब समुद्र के तीर ।
आपणी आपणी हद जो बणाई । मरजीवा वाहा धीर धरि जाई ॥

लाल पदारथ रतन बहु मरजीवा धरि जाये ।
अगर चंदन सूं निकति मूरष देषे जाय ॥
च्यारि गई हे नग्र मो कुल अपने अस्थान ।
मूरष रह्यो येकलो वा टापू के माये ॥

च्यारि आपने गही मुकाम । मूरष रह्यो उने मेदान ।
निकलि करि जब बाहेर आयो । रतन पदारथ भोत वाहा पायो ॥
लिया पदारथ हीरा औ लाल । बांध्या गांठ हुवो पुसिहाल ।
मोती मूंगा मोलका लायो । मन छाहती सो सब कछु पायो ॥
माल लियो अगार मो पैठो । मन हरष वा ढूंढ्यो वैठो ।
अब मन हरष भयो पुसिहाल । जनम जनम लग हूवो निहाल ॥
येतने सांझ पड़ी च्यारूं आई । मन आनंद इच्छा पाई ।
वैठ अगर पर सिव बचन सुनायो । पल मों वेगि मुकाल पर आयो ॥
कियो बसेरो मुकाम पर आई । निकस्यो गुवात वेगि घर जाई ।
मन आनंद कछु कहत न आवें । माता भोजन वेगि बनावें ॥

दियो भोजन सुष भयो रस धीरा । फेर जाइ गउ छाडे अहीरा ।
येक दिवस गउ चारन जाये । दूजे दिवस रह्यो घरहु के माये ॥

जिण घर माया पाउणी जिन सूं सब कुछ होय ।
नेन नजर उठी रहे येह पटंतर जोय ॥

घर में बैठो कमी हो कछु नाहीं । करम लिष्यो सो नव निधि पाई ।
बंधी गऊ सो सठे दुष पावे । दाम न षरचे गऊ भूष मारे ॥
अैसे करत दिवस येक आये । दूजे दिन सेठ वाके घर आये ।
क्यूं रे मस्त हुवो मद मातो । गऊ चरावन क्यूं नहि जातो ॥
अब मेरे मन माने सो करिहूं । अब मेरो मैं उहिम करिहूं ।
तेरो कह्यो अब मैं नहीं करिहूं । मन माने सो ही चित धरिहूं ॥
रह्यो अचकाये बोल्यो अब अैसो । जावो सेठ आपने घर बैसो ।
खुसी पड़े ताकूं देष गुवाली । मैं मेरो दीयो बचन जो पाली ॥
गयो सहुकार रोस भरि ताई । मन मो क्रोध कछु कही न जाई ।
अब मैं याका लछन पाऊं । तो याकूं हूं सीष लगाऊं ॥

कियो पसारो गुवाल ने माणक मनि भरमाये ।
रपे षजीन बीच से मूरष यो ले जाये ॥

साहूकार कमी कछु नाहीं । माणक साहा मन भ्रम भुलाई ।
सीतल बैन बोल मन दीजे । सुन मूरख अैसो काम न कीजे ॥
आव दुकान बचन चित दीजे । तेरी मेरी पाथी कीजे ।
लेवो दरब कमी कछु नाई । अब तू मेरी देष कमाई ॥

दगाबाज सब से बुरो कान लाग मत लेह ।
पहिले थाग बताय के सो पीछे गोता देय ॥

अैसे कर कर पेठे लियो । ले पेठे ओर घर माहे लियो ।
या हब्बको ते देहको पाठो । करड़ सरड़ कर बांध्यो काठो ॥
ले चाबुक और त्रास बताई । कह रे माया काहू से पाई ।
उलटी बोल न त्रास बताई । मेरे घर को ते दरब उडाई ॥
बचन सुनत तब मुष सूं बोल्यो । अरे भैया मोकूं राय ने दीयो ।
येह चंदन तेरे सुष आगे । या मोहे बैठन को लागे ॥

या सो बैठ पर दीप मो गयो । करता कस लिष्यो सो दियो ।
मोरी ठास कमी कछु नाईं । हीरा माणिक वाही के माहीं ॥
सुनत वचन जिव लालच पाये । थेला लेकर वाको भरायो ।
अरे भैया भली बात कही ही । सुनत वचन वाको छोड्यो तबही ॥
साहा जी आयके वासो कीनो । साज पड़ी त्रिया ने चित दीनो ।
सिव के वचन असे मन पाये । उडि चंदन परी दीप मो जाये ॥

माणक साहा मन लोभ भो गयो समुद्र पार ।
त्रिया च्यारि सुष मंदिर गई या मन हरप अपार ॥
लोभ पाप को मूल है बोवे जग संसार ।
धरम कीज अब पुन्न है गुरुगम ज्ञान बिचार ॥
करनी करे सो क्यूं डरे कर कर क्यूं पसताय ।
बोवे बीज बबूल का सो अंब कहां सूं षाय ।

च्यारि मंदिर गई वे नारे । साहा जी रह्यो टापू मंझारे ।
भर थेला भीतर हो दीना । ता पाछे साहाजी बैठन कीना ॥
हीरा मोति जवाहर नग सारा । भर्यो दरब आनंद अपारा ।
चुपको बैठ्यो रह्यो वा माहीं । सांझ पड़ी त्रिया चल्ल कर जाहीं ॥

भर्यो बीज अब पाप को लालच बुरी बलाय ।
बैठे ऊपर मंत्र कह्यो सो अब उड्यो नहिं जाय ॥

उड़े नहीं जब कलपि वे नारे । सिव को बचन कियो उच्चारे ।
अब सबी चिंता भई मन भारी । आप हाणि अरु कुल हू कूं गारी ॥
भीतर माणक साहा यूं बोले । सुनो बहू मेरो बचन अमोले ।
बचन सुने मन लज्जा पाई । लाज करी सो आ गुन आई ॥
सिव सकती तीनि बार संभारी । अहो देवि पत राष हमारी ।
सुनत वचन घड़ी ढील न कीनी । ततकाल सकती पवर जो लीनी ॥
उड्यो अगर सकती वचन सुनाये । ततकाल पड्यो समुद्र के मांये ।
साया सहित डुबे तेही बारी । च्यारू सकतिन लीनि उबारी ॥
गई मंदिर सो सोत सुप पाई । सकती गई कविलास के माहीं ।
दिना दोय में वे च्यारूं आये । नारी निरष सोत सुष पाये ॥

पाप पुन्न दोय बीज है बोवे जुग संसार ।
पापी बूड़े मध्य में सो धरमी पेले पार ॥

[६१२ ड]

द्वि० १, तृ० १, च० १ :

ये देवन को भाव बात बनाय केतिक कहूं ।
मानस को न सराह देव अंस बिन कोउ नहीं ॥
ना ऋषी कुरुते काव्यं ना रुद्रो हेम कारिकं ।
ना देवांश भवे शूरा ना विष्णुः पृथ्वीपतिः ॥

ऋषी बिना कोउ काव्य न करही । लक्ष्मी अंस रुद्र तिहां धरही ।
क्रसन अंस सोइ राजा जानू । देव अंस पड़े नहिं सूरा मानू ॥

(द्वि० १, तृ० १ में अंतिम दोनों चरणों की शब्दावली कुछ भिन्न है)

[६१४ अ]

तृ० १, च० १ :

सुन मंत्री में इतनो लहूं । विधना की बात कहां लूं कहूं ।
सकल कर्म दइ लिषे प्रमान । तामें कौन मिटावे आन ॥
जो मधु नीक करी कहु आले । तो सब दल को कीयो पैंकाले ।
ऐसे वचन राय समुझावे । तब तारन नृप को शिर नावैं ॥

[६१५. १ अ]

तृ० १, च० १ :

उन दल को सुमार बतायो । दूजो पाहरू देख्यो आयो ।

[६१५ अ]

च० १ :

कहा सुमार कछु कहूं अनेरी । दीसे से सब काली धोरी ॥

[६१८ अ]

तृ० १, च० १ :

सिंह ठाढो गरजे घणो दल घेर्यो सब आज ।
सूला पाले बिलाबड़ी ज्यूं परहा घेरे बाज ॥

[६२५ अ]

तृ० १, च० १ :

पुत्रं प्राप्त करी भवां दुपतरी सुबुध रार्थ पुरीं ।
पापस्तापहरी प्रबोच सचरी चक्रादि सो सुंदरी ॥

आनंदप्रद हरी यं धर्मधाम नगरी या पग चित्राधरी ।
चंचल शुभ मति विद्याधरी नेजस्वरी शंकरी ॥

[६२८ ग्र]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

कुंदन पुर भीमक सुता देवी रुकमिणि बाल ।
हरी हरत हारे असुर सेन सहित शिशुपाल ॥
सुर असुर पन्नग मिले सिंधु सुता के हेत ।
दधि बिलोय हरि लै गए तेरह रत्न समेत ॥

[६२८ ग्रा]

द्वि० १ :

बांभन गयो बलि टागे दधि बांध्यौ भव रास ।
धेन चुराई गोप संग ग्रैसे रूप मधु काम ॥

[६२८ इ]

तृ० १, च० १ :

ऊषा बाणासुर घरे प्रदुमन कृष्ण कुमार ।
सपने मिले संयोग से वाकी यह घर बार ॥
देव अंस मानुष मधू ईश्वर के अवतार ।
याके सरभर कौन है भूले मत संसार ॥

[६२८ ई]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

ऊषा धीय बाणासुर घरे । लै राखी सत खंड धौलहरे ।
जतन किए अति देवन के डर । पै जाकी ताकी ताके घर ॥

[६२९ ग्र]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

बग मैं हंस दुर्यो नहिं कबहूं । जाणैं नहीं पटंतर तबहूं ।
सुता जाणि हुय बिभ्रम दौरे । देखे दूध छाछ दोउ धौरे ॥

हंस स्वेतः वकः स्वेतः को भेदो वक हंसयो ।
क्षीर नीर परीक्षाया हंसो हंसो वको वकः ॥
हंस स्वेत बक स्वेत है तक्र स्वेत पय स्वेत ।
परै साम लै जाणियै सिंघ स्याल इक पेत ॥

वायस ग्रह पिक ग्रंड दुराऐ। बाढ़े तौ लुं भेद न पाए।
फुनि न्यारे न्यारे उड़ि चरें। अपनी अपनी ज्यात न दुरै॥

[६३१ अ]

प्र० ३, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

लोकाचार न कीजिइ तो लुं कुन पतिग्राइ।
लोक लाज ते सब करे कहा रंक कहा राव॥
मरबे तें कोउ न डरे जौ मूये जस होय।
अपजस जीतव जनम लगि बुरे कहें सब कोय॥

(तारन वाक्य)

तेरो कछु दूषण नही विध के खेल अक।
गाए सो फेरि न गाइए अब अप नीर न मत्थ॥
जल बाधे पंडवन बधे प्रबल गगन सुष दुद्ध।
जेसो जेसो करम बढे तेसी तेसी बुद्ध॥
बल पौरिष बोहत निरवहिये। लषे क्रम सोई फल वहिये।
मथे उदधि हरि तपमो लहे। हरेक कंठ हलाहल रहे॥

(राजा वाक्य)

सुनि तारन तें भली बताई। जो कछु लषे होत सो पाई।
जब अब हासी बुरी अब लागे। अनते ज कहुं मुंह आगे॥

(तारन वाक्य)

तैं सुप ते बनिया कहे अब बनिया क्युं होय।
अब बनिया ऐसे भइ बनी बनाई दोय॥
दोय बनरी एक बनरा बन्या। ता में एक ब्राह्मण की कन्या।
राजपूत द्विज बनिक विसेषी। त्रिकुट मिले तहां कहां कुल पेषी॥
देवन कोऊ भेद न पावै। तू तिहां बनिया बार बतावे।
बल पोरिष आ कारन बुझै। इतनी भई तोर काहा सूझै॥
कंकर पत्थर परषिए मन मानक नी जात।
हलत चलत गज परषिए यूं सूरन की बात॥

[द्वि० १ में अधिक :

दुष की नाटिका कहे देत बिन बैन।
प्रीत दुराई ना दुरै सुमन कि जारी मैन॥]

[तृ० १, च० १ में अधिक :

भूली गत बूझै सबी आठो पहर दिन रात ।
ऐसी सुघड़ी चित्रराइके गत अनवेगी बात ॥]
नटवर नर सूझै नहीं पंग पाग के भेत ।
मेघ अंक कि कारनें तुन मान जनदेव ॥

[६३३ ख]

प्र० १, २, ३, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

जो तुं जास साप लै मरी (परे) । अनवेगो अति चालें करे ।
तेरे तो तन पाग (पागें) बीनी । काहन सुजग सु रही न पेती ॥

(वेगा अनवेगा प्रसंग)

मंत्री कारन नृप कहै तुम जाणो सब भाव ।
वेगो अनवेगो कहो सो मोही भेद बताव ॥
तारन कारन नृप कहै चित दे सुनियो राव ।
जो बूझो तो सब कहुं होय पंनग किम भाव ॥

(प्र० १, २, में उपर्युक्त अंतिम)

पंथी एक उरगना सोई । उतरो आन बजार में सोई ।
मोची को घर ढूंढत आयो । बोड़ा को उरहा भूलायो ॥
मोची कहै अर्थ नीकै जाबो । डेरे जाइ उलास उपावो ।
चढ़े लकारे सारिग आदो (?) । उरहा वर में सेलु जोई (?) ॥
जेही भीत में उरहा डार्यो । जहां बेठो साप सीत सो मारो ।
भोर भयो तबही चढि आयो । बास भोर वाही बणावो ॥
पकडि सुदि चरण सुं दाबी । चपक मानुं चीपइ बांबी ।
बोकरि बेन सुर नाख्यो । चपटो भयो चाप सो पसरो ॥

[च० १ में अधिक :

ओड़ा डार्यो काट के चमर कुंड के भाय ।
फुलग मार्यो सीत को आन परे ते साय ॥

तृ० १, च० १ मे अधिक :

प्रात भइ पंथी चलाय के ओरगना मन भाव ।
मोची आन जगाइयो सो ओड़ा देव बनाय ॥

कछु जाग्यो कछु नींद में हडबड उठियो आप ।
ओड़ा बासन मों रह्यो कर सूं पकरो सांप ॥
तन तुसार से ठरहर्यो कैसे करे प्रकास ।
अपने पराक्रम जो करे सुषहि न बिगसे तास ॥
मोची निद्रा खुल रही कछु येक उघरे नैन ।
अंधकूप तिस प्रात की सो घरा पाछली रैन ॥
कंकर भाजे घोटके चमर लपेटे जाय ।
पंथी घोरो ल्याय के ओरा दियो लगाय ॥]

चमर करी वाके करि दीनो । वानपता बंध कै लीन्हौ ।
चलो पंथ कछु फहम न राग्यौ । वांबी के पन्नग देषौ ॥

[द्वि० १ में अधिक :

तहां एक सर्प बांबी सो निकर्यो । बांधे सर्प सो झगरन पकर्यो ।
वाद बिबाद करन वह लागे । सुनी बात उरगानो जागे ॥]

(बांबी के सरप वाइक)

फिट रे सरप लाज तोहि नाही । पंडर सु मुष परसत नाही ।
डसत नही सो कारणि कोन । सूरप मुंदि रहो मुप मोन ॥
जो तुं काम पर्यो नहीं कारे । तो तुं सबल तबल भारे ।
फुनि वे लीछन सबे बीसारे । बेगो पर जबै बांवी वारे ॥
मीलै न कोउ भेद बतावै । वांबी कूं तातो जल नावै ।
सगरो माल घोद घर ल्यावै । तब तेरे वल नहर आवै ॥
ए सभ बात सुनी उरगानै । को बोल चित्त त्रिहु कानै ।
वेग अनवेग दोउ सांपन । बाद बीवाद होत है आपन ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

मन संसो पंथी पर्यो चिहूं हिसि देषे धाय ।
दोपद चोपद और नहीं वन मां कौन वताय ॥]

जव चेतन यों पन्नग एक डरो । चूको कूद पर्यो वजि घोरो ।
हाए हाए पाए तैं वंच्यौ । करता आप संपूरन संच्यौ ॥

हूब ब्योपरी घोरो उलझी । जीस्वारथ चार बीच्यारही ।
काढी खडग धाय के मारुं । कैसी कार बंध काढि के डारुं ॥

(वेशा साप वाइक)

अब सूत्रो वेश्यो भन्यो फूली सती छोरे सोय ।
सुनि पंथी पंनग कहै चार (चारो) हते न कोइ ॥

(उरगना वाइक)

अहि नाहर गज सरप को वैन चित्त न धराए ।
जगन पतीजे तास कूं मूए देषि डराइ ॥
पंनग तणै पटंतरै जग नाहर मम कंथ ।
वेस्वा पदहम नागरी पोहवी पूरष समर्थ ॥
वद (वेद) विहाय मंत्र तस सतगुर के उपदेस ।
अही सरप मरजाद बलि सब अवनी सिर सेस ॥

जे सत्य हेत आहि सिर अवनी । सथो सीधु ताहिं तेता कवनी ।
नारायण ताके सोइ आसन । जो कोउ लहै कहै सोई चासन ॥
तैं तो सोसूं इह भलपन कीनो । मूये को अपजस नही लीनो ।
अब हुं मरत मरत जस लेहुं । तो कुं बहुत द्रव्यौ मैं देउं ॥
एह वांबी तेरे मुह आगै । तामै सरप अहो निल जागै ।
कनक रजत तास पर बैठो । क्रिपण काल रूप होय पैठो ॥
पाथर लो घर में धन ल्याए । कीहुं दीयो न आपन षाए ।
धीय न पूत बेहन न भाई । मर कर जोनि सर्प की आई ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

माया संगत्रि (ति) मन धरे बिलसी कबहुं न ऊस ।
तासे जिव तन मो रह्यो सरप भयो ते सूम ॥
सुन पंछी पन्नग कहे पानी तातो डार ।
कनक कराही इन तले सो निकले मोहोर अपार ॥

पंथी एक जो बुध्य सुन लीजे । बांवी कूं तातो जल दीजै ।
साप मरै अर भीतर भीजै । तब तू द्रव्या काढि कै लीजे ॥

जा धन पर पंनग रहै मुगता कुंजर हत्थ ।
मृगमद नाभि कुरंग के सो जीवत न आवे हत्थ ॥

(यह छंद प्र० ३ में नहीं है)

राम नाम रसना रटति देह प्रान अरथ्थ ।
पंथी सूं उपगार करि छोडे प्राण समत्थ ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

ओरगने मन चिंतियो कौन करेही उपाव
अचरज बात जरे नहीं नृप सुन ले जाय ॥]

पंनग पता के बंधे जो न्यारे । उरगना सब बात विचारे ।
इन तो मोकूं भरम भुलायो । सुपनातर सो सोहि फसायो ॥
बड़ी कराही कहां तैं लाऊं । दस पपाल पानी ओटाऊं ।
इतनो सामो जब करि पाउं । तब सो जल बांबी बूं नाऊं ॥

सती नाहर केहर करज पंनग लये गरत्व ।
सूर सुरन मृगमद ए जीवत न आवै हत्थ ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

केसरि केस भुअंग मणि सरन सिंह को लेह ।
सती प्रीत त्थूं को लहै सो येह जान चित देह ॥

केसरि केस कौन छुपै भाई । मनि पंनग को लियो न जाई ।
सती परोवर अगन समाना । निरषे जाको जाये षेयाना ॥
जंगल मों बांबी पोदाऊं । हेम चुराय मैं कहां छिपाऊं ।
नृप सुने तो लेन न पाऊं । अब में सूधो नृप पे जाऊं ॥]
एह आरंभ मो पै नही होई । राजा विना न खोदे कोई ।
ए सब वात नृपत सुनाउं । मेरे भाग लषो सोइ पाऊं ॥

(बांबी का सरप वाइक)

उरगना की बातै पंनग नै सगरी सुनी ।
बांबी नृप क जान सन्मुष होय बोलो फुनी ॥

[तृ० १ में अधिक :

से किह कारन योनियों बात करत भयो पाप ।
बांबी मां सूं निकर कर बाहिर आयो सांप ॥

च० १ में अधिक :

दूध मलाइ के ठांइयें जु दन्त्री तुगी हराय ।
नर्क लोक कूं संचरे सो जिसा काल कूं जाय ॥
पर घर सूली देख ले अपने मन रावे मनि ।
सुनो हमारी बात चुगली तुम कहि हो जनि ॥

तृ० १, च० १ मे अधिक :

उरगाने ऐसी चित धरिहै । बांबी सर्प कहा उच्चरिहै ।
सुन पथी मैं मन की कहूं । बचन एक तोही मैं लहूं ॥
तुम्हि भावे तो करूं उपगारे । दूध अहार भरूं भंडारे ।
कहे सर्प सांची है सोइ । पन अब सभाव कहां लौ होइ ॥

रत्न पुराणि मर्माणि जे वदंत नराधम ।
ते नरा भाय संदेहो वल्मीको विसिको अहि ॥

(अन्य प्रतियों मे यह छंद बाद में आया है

च० १ मे अधिक :

सुन पन्नग जब बोले बानि । ये तौ भई मलियापुर को कानि ।
तब पंथी तू नाग कहाइ । हो परतीत मेरे जिव होई ॥

तृ० १ च० १ में अधिक :

(उरगाना वाक्य)

कैसो नगर कैसी होइ बीती । सोही प्रसंग कहो मुझ सेती ।
सुनि प्रसंग जिय मों सुष मानूं । ता पाछे विचार जिय ठानूं ॥

(बांबी के सर्प वाक्य)

कहे पन्नग पंथी सुन लीजे । जो बूझे तो बचन सुन लीजे ।
मलियापुर मां भई है जेही । बात सुनो तो कहूं सनेही ॥
नगर मलियापुर हरदत्त राय । सूतो पेलियो सेज बिछाय ।
तिहां नागन एक गर्भ सूं रहे । भई प्रसन्न बालक संग्रहै ॥

भागो येक षातो जब जान्यो । सूतो राय सुष माहिं समानो ।
पीवे पवन बड़े अति देहे । षीन रोग बदे राजा की देहे ॥
अति घने देश के बैद बुलाये । निकाल रोग काहू ना पाये ।
अति दुष भयो बहुत ही राय । येक दिवस आहेड़े जाय ॥
प्रान सुषना उपजे अंग । रहे रैन बन तेही प्रसंग ।
निस निद्रा वस भयो है राय । बांबी सर्प निकस्यो तिहां टाय ॥

डोलो बड तले राजा पौढ्यो आप ।
बांबी सर्प जब बोलियो सुबद सुनो उन साप ॥
उतते बोलो बांबि को उदर सर्प सुनु कान ।
नृप भंपेउ निवेरसे सुष मां बैठो आन ॥
आस पास वातां करें होने लगी निदान ।
येही बात चित धार के सो मंत्री दीनो कान ॥

राजा सूतो नींद संभारी । पाछे मंत्री बहु दुष सारी ।
सर्प बांबी से बोलन आयो । नृप उदर से वे उठि धायो ॥
सुनतहि बचन उदर ते निकस्यो । आस पास पर बिग्रह परयो ।
नाहीं सर्प तू मूरष नानी । राजा कूं दुष देहे अग्यानी ॥
जे कोइ बैद मिले रे भाइ । चूनो घोल पिलावै राइ ।
मृत होइ अरु ठाहर छांडे । पुनि बिग्रह तू का सूं मांडे ॥
घरसी बहोत तहां सुष पावे । इन बातें जिय काय गमावै ।
उदर गंध बैठक कहा करही । सबल सुष जीव परिहरही ॥

(उदर सर्प वाक्य)

उदर सर्प कोप जो करही । कनक कराही तले दे रही ।
तातो तेल कर डारे कोही । सगरो माल ले जावे सोही ॥
धन बल तोहि बोल ना आवे । मिलै न कोऊ बैद बतावे ।
कृपन सुबरन देष भुलानो । सो कूं बोल वचन कियो सयानो ॥
मंत्री दोउ बात चित दीनो । प्रात भई तब गवन ग्रह कीनो ।
राजा तलफ मरे तिहां बारी । चूनो मंगाइ सुष में डारी ॥
तलफि सर्प मूवो तेहि ठाई । राय रोग सब दूर नसाई ।
सौ सब भाव कियो परधान । चित मां आन्यो वोही ग्यान ॥

तातो तेल उन डार्‌यो जबही। माल धन सब ले गयो तबही।
यह सारो तब बीति गयो। गायत्री जप मंत्री कह्यो॥]

केवल तृ० १ में अधिक :

आहि आहि मंत्री कहे यों कमायो पाप।
राजा के आनंद भयो यों करत संताप॥
कर्म लिख्यो सोही सो डरपानो राय।
मंत्री पलग मार के मन पाछे पछताय॥

केवल न० १ में अधिक :

पुरुष पुरुग को वित जादिन कबहू न भूगति।
नृप के प्रान हतानं दाची के उदर सपं॥

तृ० १, न० १ में अधिक :

वे जाने मेरो प्रान उपारूं। विग्रह काज भयो मिथारूं।
जो कोइ विग्रह करिहै भाई। अपने ग्रह में समुभो जाई॥
येते पर कोई विग्रह करिहै। तो फुनि राजग्रहे पाव न धरही।
येह कथा पंथी जब बोल्यो। रह्यो सरप बदन मुप तोलो॥

ऐसी कोन कराइये विग्रह बडे वड़ाय।
नृप दुआरे का लहे समभ आपने भाय॥
तू रजपूत राज बड़ धनी मंत्रि मिलावो तोहि।
नृप दुआरे जाइके जनि हत्या सिर लेहि॥
मोहर येक दिन प्रति देहूं जो सहजे चित लाय।
तेरे हाथ कछू नहिं केर चुगली कहा पाय॥]

राजपूत जो चुगली करै। घोरो जो फुहारा धरै।
रजक बराबर तन कू धरै। अस नही बात विस्तरै॥
(यह चौपई प्र० ३ में नहीं है)

जो घोरो फुहारा करै चुगल होय रजपूत।
वह जननी गधहा लग्यो वह बनिया को पूत॥

सो रजपूत रापि रज तेरी। मत चाहै सर हत्या मेरी।
करूं बीनवी जो चित आनू। हुं जाणुं कै तुमही जाणु॥

[तृ० १ में अधिक :

चुगली माहिं नाहिं कइ पावै। ये सब बात जाय सुनावै।
सगरो माल नृप ले जावै। तेरे हाथ कछू नहिं आवै॥]

एक मोहर मो पे नित लीजे। दया दान मो कुं जिय दीजे।
पीढी लग तोकुं पुहुचाऊं। जो एह ठाहर रहबे पाऊं॥

(डरगना वाइक)

जो नित को सो नहयो पाउं। तो काहे कुं वाची एदाउं।
दुध कटोरा भरि निति लाऊं। तेरो सेवक सदा कहाऊं॥

[प्र० १, २ में अधिक :

ऐसी वात करी उन तइया। मोहि परष्यो लाग्यो दइया।
मे इन कूं जातो नही तेग्यो। फिरि कवच न मो ऊपर फेर्यो॥
अव तो हंसी दुधी उपाउ। कही फकरि के फुरसत पाउ।
माया सुपी काहा दुष दई। मरन सामग्री मो कूं भई॥
अव तो चिंता वोहोत उपनी। किहि विधि वातें अव करनी।
जो छछुंदरी सांपे ग्रही। लेत न मेलत वात न परही॥
हरि हरि बुध्य मो ऐसि दीजे। वगर विचार्यो काम न कीजे।
डरगानो लोगो मोहे पिछें। मेरो द्रव्य लेन कुं अछें॥
कहुं तो रहें न सकुं इह भाई। स्वर्ग अत्य पाताल जो जाइ।
जिहां जाउं तिहा धन के लागुं। हर पैं कौन आग्या मांगू॥
समरन करी हुं रात दिन तेरो। ऐ हे संकर हरि हे प्रभु मेरो।
तुम सुष(दुष?)भंजन तुम सुप दाता। तुम ही राष्यो सरण की ष्यात॥
द्रोपद लज्या राखी लें भली। भले वीर ववावै लापी॥
भली बुरी उधी सर उवारी। मो पैं क्रिया करीहो मुरारी।
एह संकट सव दूरी करणा। मो कूं राषो तुमारे चरणा॥
मन में धीरज ऐसी धरीये। कवहूं काम न असी लहीये॥
रे भइया मोपैं काहा चाही। तुम धन चाहो मो चाहा नाही।
डरगनो कहै वचन जो पाउं। तोही तो कुं दुध पीलाउं॥]
सुनि रे वीर अवहि कछु दीजे। तो सूं मेरो जीय न पतीजे।
जो न विदेषे अपने नैना। तो न पतीजे गुर के वैणा॥

तेरो मोकुं दचन द्रे तो हुं देहुं तुरंत।
मोधी कछु अंतर परे तो होत हरव परंत॥

(उरगाना वाक्य)

अंग शीर्णा कृतात्मक ते चिगलाणकं ।
ततराः नरकं यान्ति यावत् चंद्र दिवाकर ॥

[लि० १ में अधिक :

परोचे कार्य हंता च प्रत्यचे प्रियवादिनं ।
वर्ज्ये एतादृशं मित्रं विषकुंभं पयोमुखं ॥
सुख पर मीठे होय जन पीठ पाछे कटु कूर ।
ऐसे तजिये मित्र को मानो जहर पाई दूर ॥]

बंधे बचन नर पंनग दोउ । ताको भेद न जानै कोउ ।
दूध कटोरा भरि के धाउ । एक मोहोर नित दे कै आउ ॥
ऐसे करत मास एक बहियो । डर भयो मो चित दे सुनियो ।
उरगाना घर विग्रह लागो । नयो प्रसंग भयो कछु आगें ॥

नगर नाम अमरावती अमरसेनि नृप तास ।
बांदी तें एकें कोलहु उरगाना को वास ॥
ताके घर की संपदा लषरे मानस तीन ।
अपने अपने लोभ कूं और और मति मीन ॥
धोता पेहली न्यारिको दूजी ब्याही और ।
उरगाना की और मति ताको चित कछु और ॥

(त्रीया वाक्य)

अहो कंत मोहि अचिरज आवै । तू निति मोहोर किहां थी ल्यावै ।
चाकर नही सो राह पै पावै । या बातैं मोकूं समझावै ॥
उरगानो बोले त्रिया ताही । यह कछु बात कहन की नाही ।
नारायण जंप तूलट ताही । सुष संपति घर वैठा ही मिलांही ॥
माहापुरुष भेट्यो एक मोकुं । ताकी वात काहा कहुं तुन कुं ।
अब कोइ न बात न कीजे । मैं लाउं सो चुप कर लीजे ॥

[प्र० २ में अधिक :

तुं ल्यावे किन ठोर सुं सोइ मोहि ठोर बताय ।
कोन देवता कुं सिद्धियो सो मोहि नेन देखाय ॥]

तुं राच्यो पर नार सुं हुं फुनि करहुं जार ।
सरब बात मोसुं कहो जीय में सोच विचार ॥

(यह छंद प्र० १, २ में नहीं है)

अली चंद देष्यो नहीं बिन देषे ही आल ।
अपत रांहसू काहा कहुं झूठे करत जंजाल ॥

[च० १ मे अधिक :

कोइ माती मैं संतरै सो देतहै तोहि मोहोर ।
वाको जिय तो सूं मिल्यो सो मोसूं सोच विचार ॥]

पूरष कछु दोस नही जो भुगते त्रीया चार ।
साध त्रीया कस रहुं हूं फुनि करहुं जाए जार ॥
लंघन दोय च्यारै करै सैथल की नित चाह ।
नातर भूवै ढोर लुं झापै झाल वहंत ॥

(यह छंद प्र० ३ में नहीं है)

आहेडी तै अधिक त्रिय वेधन हरै पधार ।
याके द्रिग अधिक वहै जत चितवत तत मार ॥
पर दारा पर द्रव्य पर सिर दोस धरंत ।
परमेसुरता स विमुष रौरौ नरग परंत ॥

(यह छंद प्र० ३ में नहीं है)

[च० १ में अधिक :

नई नार नई ता छकि कोन कोन से धार ।
ढोटा पहेली नार को सो चिहूं मन चिइ सार ॥]

नई नारि अर पुरुष पुराण । इनसै कहां भलप्पन जाना ।
जोरै गाडि परै नही पोतै । झैसै बहल बहल को जोतै ॥

[तृ० १, च० १ मे अधिक :

अनभ्यासी विषं शास्त्रं अजीर्णे भोजनं विषं ।
विषं गोष्ठी दरिद्रस्य वृद्धस्य तरुणी विषं]

मैं जानो मेरो घर बसो । त्रिया कुं काम काल होइ डस्यो ।
हूं अध बैस थै जोवन धस्यो । बूढो वाह करै सो भोरो ॥
आ द्रव्या लाइकै दोष लगावे । सो तो सब हात तेरे पावै ।

तादिन ते लरका ही आवै । बांध्यो रोज सो निति कै ल्यावै ।
युईं करत दिसव दस बीते । वो मन मै कछु ओरी चीतै ॥
ढीगा हाथ सदा भल रहै । ताकै घातै मारण कूं चहै ।
अति डराय जीय संका धरै । एह चंडाल मेरी अंत करै ॥
काचो दूध पीवन सुष भावै । ऊपर तै ढीगा फिरावै ।
साधक ज्यूं फूल हता केरै । मन में गूढ गुपत तन हेरै ॥

(प्र० ४ में यह छंद नहीं है)

[तृ० १, च० १ मे अधिक :

ढीगा हाथ सदा रहै अैसी चित मो भौन ।
फुन्नग हनि द्रव लेन की फिरत फिरत मरै कौन ॥
नवन करे अति साधकी सुष से सीठे बैन ।
दूध कटोरा पीवही सोत के सूढ़ मो देन ॥]

[तृ० १ में अधिक :

सर्प आपनो सुकृत संभार्यौ । औ अपने मन घात विचार्यौ ।
जो पै सर्प दूध कू पीवै । ढीगा लागत नहिं ओ जीवै ॥]

[द्वि० १, तृ० १, च० १ मे अधिक :

तासे दूध पीवन सुष नावै । वे ऊपर से ढीगा लावे ।
ज्यूं साध के हाथे जो फेरे । मन मो सूढ़ गुथत नहीं हेरे ॥]

एह जान ढीगा हणु सगलो धत ले जाउं ।
वह ताके वीगरे डसूं प्रथम नहुं विगराउं ॥

एह लरका यात्री बुधि काची । घटी वढी कछु लही न साची ।
ताकि ताकि एह ढीगा ल्याये । लागत रपट लरका हे पायो ॥
डसतहि प्राण पेल गयौ आगै । वाके जंग सवल सी लागें ।
नीत नीत बांबी मैं आया । वाके पिता सांझ सुध पायो ॥

[च० १ में अधिक :

डीगा कठोर वाघ रे निकस गयो है प्रान ।
रारे के मारग कोस पर ओर बांबी के सर दान ॥
ओरगना कौ पुत्र सो कड़कसी बाट सों परयो ।

अंग नदी से दान न कोउ मारयो न डरयो ॥
इसके अनंतर इनके ऊपर का छंद दुहराया हुआ है।]

(उग्गाना वाइक)

ऐसो कर्म सुंदी लग्यो लालुं तो मन आयो ।
जब रंडी विग्रह रच्यो तब तो यह फल पायो ॥
कित रंडी विग्रह रच्यो कित एह नरका पायो ।
किति मेरी मोडर मिंड आगे वात वढाए ॥
विग्रह तें धन छीजहि विग्रह तें धन जाइ ।
विग्रह तें विग्रह बढ़ै काहा रंक काहा राव ॥
विग्रह तें रावण गल्यो वीग्रह तें वजी पंड ।
जिहां जिहां वीग्रह भयो तिहां तिहां रही न मंड ॥
(यह छंद प्र० ३ में नहीं है)

[द्वि० १ में अधिक :

यस्य स्थान विरोधेन यस्य देशे विसर्जितं ।
काकी कीलके संग्रेण कुंजरः प्रलयं गतः ॥
कलह ते दानव घटे कोट अष्टदश सैन ।
क्रोध कूं कौरव करत दह्यो कलह हर सैन ॥]
फेरो कछु दूसन नहीं सुनि उरगाने राय ।
पुत्र सोक तोकुं भयो मोहि दीगा को घाव ॥

[प्र० ४ में अधिक :

गोठ दिखाई सज्जणा दूधा लाव न साव ।
तोही सालै डीकरौ सो साथै रो घाव ॥]
वैर चल्यो चित हुन मिलो जोरे मिलावै जंग ।
जोबन तात न प्रगस्यो सुपहु न लहीए अंग ॥
(यह छंद प्र० ३ में नहीं है)
मेरे तेरे प्रीत थी सो तो निवही लाज ।
तू तेरा फल पाइहै वाचा उथप्यो आज ॥

[च० १ में अधिक :

घर सो कलपत वांबी लो जाये । देष्यो पुत्र अति दुष पाये ।
सगा सजन सब पीछे सूं आय । वे लरिका कूं मंजिल पहुंचाये ॥

तेरो कछू दोस नहिं जो कीनो सो पाय।
सारन सूवा कूं लियो तो उनही सीस सुड़ाय ॥
आपनि बुद्धि बनाय ते तैसी संगत करे।
जो जैसे फल पाय ... ... ॥

नगर अवंती अति सुषदाई। राज करे तिहां विक्रम राई।
ओसवाल हीरा साहा रहिये। ताके घर कछु संपदा नहिये ॥
उन येक सूवटा मंगायो। सो पुनि सुषदेव आप ही आयो।
पढे वेद औ कथा कहानी। घर की रीति सबै उन जानी ॥
नाम सूवा मानक कहिये। त्रिया पुरष महासुष लहिये।
नित सूवा सूं राच्यो रंग। ज्यूं दुरभिक्ख मिल्यो जु अन्न ॥
येक दिना साहे बुद्धि उपाई। सो पूछे मानक कूं जाई।
मानक तेरी अग्या पाऊं। तो लइ पेप देसंतर जाऊं ॥
घर धनिया तिनी कंठ बुलाई। त्यासूं बात कही समझाई।
मानक केरी अग्या लीजो। जे यह कहे सो कस ही कीजो ॥
ऐसे कहि साहि लये चल्यो ही। सोप्यो काम वाकूं सब ही।
त्रिया वाकी विभचारणी आही। जिहां मन भावे तिहां जाई ॥
येह चरित्र देखि सुवा बोल्यो बानि। कहूं सीप मानो सेठानि।
ऐसे समे साह जो आवे। तो तू लजा काहा सुष पावे ॥

मानक की बातें सुनी साहन चल्यो बहु कोप।
उन चेरी सूं यूं कह्यो सो कर मानक कूं लोप ॥

चेरी वेग सुवटा कूं लीनो। पाष लुंझ के लुंझो कीनो।
दासी घर छुरी लेन कूं धाई। तो लौं सूवो पनाल मों जाई ॥
चेरी वही देहरे आई। देष सूवा वेह ठाहर नाहीं।
ढूंढी घर की दीवालें सारी। दासी मन सों कियो विचारी ॥
उन जानो मञ्जारी जायो। चेरी अपने प्रान बचायो।
सूवटा और बजार सूं ल्याई। रांधी मांस साहन कूं देषाई ॥

षाय मास हरषित भई सुवटा नाष्यो मराये।
निरभै काहू को नहिं धरे मन भावे तिहां जाये ॥
हर रच्छा जिनकी करे सिर है सिरजणहार।
करता राखे तास कूं कोण है मारणहार ॥

साहा कूं आवत देष के संकर की सत बात ।
मन मो हरषत यूं भई सो फूलत हे सब गात ॥
साहा कूं आवत देष के दीयो द्रग भउ मान ।
साहा कहे दुरबल क्यूं सो दुष पायो सेठानि ॥

सुवटा कूं मंझारी लीनो । ताको दुष मैं अतिसय कीनो ।
कूटी छाती मसतक दोई । ताथे गात अति दुष होई ॥
हरी साह सुनि येही बानी । सुनते सोंही पड्यो है धरनी ।
सो सेठानि ने आनि उठायो । कर परपंच अरसाहा समझायो ॥
मूवा पाछे मरे नहीं कोई । जो कुछ लिषी हती सो होई ।
रसोई पावन घरमों ले जाये । तब सूआ बैठो हाथ पर आये ॥
देषे साह तब अचरज पायो । मूवो सुवटा कहूं से आयो ।
हुवो हरष कछु कहत न बनही । जैसे बांझ घर कुंवर जनमे ॥

हरी साहा पूंछे सानक कूं काहे दुरबल बहु गात ।
तब सुवटा सारी कही जो बीती सो बात ॥
त्रिया तेरी बिभिचारिणी मन भावे तहां जाय ।
वाकूं सीष जो मैं दई सो मो नायो थो मार ॥
चेरी ने मोकूं लियो नोच पंष सुनि साह ।
छुरी लेन कूं वे गई हूं धस्यो पनाली मांह ॥

नित नित चोषा धोवे सेठानी । ताको नावे पनाल में पानी ।
ताके दाने मैं चुग चुग जाऊं । वाही ठोर को पानी पिऊं ॥
आये पंष बाहर भयो भाई । सित्र के आसर ठौर मैं पाई ।
अैसे संकट प्रान बचायो । सूवा समयो सो कहि समझायो ॥
हरी साह मन बुद्धि बिचारी । ब्याह करी फेर दूसरी नारी ।
जद ब्याह कर घर मो ल्याउं । तद रंडी को सीष लगाऊं ॥
सुवटा उपरी ऊपर छिपायो । बोल मत सुष कूं समझाओ ।
ब्याह मंडाण तुरत मंडायो । दिवस पंदरह में दुसरी लायो ॥
बाजा बजावत घर कूं आयो । निवतहरन कूं थानक कूं पहुंचायो ।
सुवटा को उन राष्यो छिपाई । बड़ी त्रिया कूं डरी बुलाई ॥
कैसे सुवा मंझारी षायो । देते ऊंचे थे हाथ क्यूं आयो ।
पिंजरे में कछु लाग जो नाहीं । येह मोकूं तुम कहो समझाई ॥

तबे त्रिया कही फिरि बानी। चेरी गान गई थी पानी।
मैं बैठी थी रसोई घरमों। कूदी बिल्ली बाई पलगां॥
धमक पाये सूवा मर जाई। साहन ने करी चतुराई।
तब साहन कूं डुबटा देपायो। मानक कूं वेही ठौर बुलायो॥
सुनत परपंच साहा कोप चढ़ि धायो। बिक्रम सेन कूं जाय सुनायो।
मुगल कूं वेही बेर बुलायो। दैके रुपया और नाक कटाओ॥

दीनी गधा चढाय कर चेड़ी राड़ ततकाल।
मुगल हाथ रसी दवी सो सेर लुटी विनिकाल॥

ऐसी सुन औरगना भाई। वा क्यूं डाग प्रथम क्यूं लाई।
जो वाकूं यो मारती नाई। तो वाकूं वो डसतो नाई॥]

एह सुनि उरगानो चलो सुत कुं सदगति लाय।
त्रीया सूं सब बातां कही वह कछु जिय न पत्याय॥
तें लरका कुं दरब दियो ले छोड्यो करि अंत।
सो सूं भेद दुराह करि मिथ्या बोलो कंत॥

[द्वि० १ में अधिक :

राजानो राजपुत्रस्य रागी रोगी च रावतः।
चंडिका कर्मकश्चैव षट रारा विवर्जितः॥]

[तृ० १, च० १ मे अधिक :

मेरा लरिका कुं मारके मोसूं कहो विवेक।
तेरो मरमठ भांजिहूं सो करूं तमासो देप॥]

रांड मांड अर मातो सांड। चढ़ी कुवाण अर काढ्यो पांड।
ए पांचु घर वाहिर आवैं। अपणो अपणो अंग जणावै॥

[च० १ में अधिक :

कलजुग आई कूबरी औ नाचन लागी रांड।
चेतना होय तो चेत जो नहिं तो रहो से मांड॥]

नृप के आगै जाये पुकारी। झूठी साची कहत न हारी।
दूत पठाए षसम बुलायो। उरगना सुनि तबही आयो॥
राजा अमरसेनि धरम धारी। सुनी बात जब न्यारी न्यारी।
रंडी की सब झूठी ठानी। उरगना की साची मानी॥

[द्वि० १ में अधिक :

सत्रू संग जो हित करे सजन दुरावत तंत।
गुह्य बात त्रिया सों करे ते मूरष मतिवंत॥
अहि क्रीड़ा वणिक मैत्रं लीलया विष भोजनं।
वर्जयेद्योषिता वृंदं यदि कल्याणमिच्छति॥
क्रीड़ा करे जु सर्प सो विष लीलत सहजान।
विना लीचते मरत है भेद करत तू अयान॥
आयुर्वित्तं गृहच्छिद्रं मंत्रमौषध मैथुने।
दानं मानौ च नव गोप्यानि कारयेत्॥
विषख्या सुत आयुद भेद छाड़ त्रिय संग।
मान मंत्र अपमान दुप ए नव करो न भंग॥]

[तृ० १, च० १ मे अधिक :

अनुचित कर्मारम्भः स्वजन विरोधो वलीय सास्पद्धा।
प्रमदाजन विस्वासो मृत्यु हाराणि चत्वारि॥]

अनुक्रम चित आरम ते सजन विरोध दरवार।
वड़े सपरधा तास के मरता के ठाहर च्यार॥

(प्र० ३ में यह छंद नहीं है)

(चोपई)

एक मोहर परवतो सारी। ता परि में ए बपत गुदारी।
अब घर कछु न आवै जावै। बासी रहै न कूता पावै॥

मेहरी को धनपुरष लो चाकर को धन राए।
पावैं तो नवनिध करे नही तर रहै छुहु चाह।

(यह छंद प्र० ३ मे नहीं है)

[द्वि० १ मे अधिक :

युवस्य यौवनं पुंसः पुरुष जोवनं धनं।
स्त्रियाश्च यौवनं पुंसः पुरुष योवनं व्ययं॥]

मो पै रोक सवायो लीजे। मेरे द्वार चाकरी कीजे।
बांबी षोद षाद धन लेहुं। तोकुं घर बैठा ही देहुं॥

[च० १ में अधिक :

घर बैठे तोकूं देहु सुन ओरगना राय।
तोये दूर कछू नहीं सो बांबी मोहि बताय॥

दोइ पालकी महल मैं आई। मधु कूं तारण ग्रह पठाए।
उही विरिया वीप्र बुल्याए। उतैत कवर दुह लै क लगन लपाए॥

(प्र० ३ में यह छंद नहीं है)

जैत माल सतगुर की जांनी। जो मालती नाहि मन मानी।
दोए कन्या एक मंडफ व्याही। मेरो एह धरम मे चाही॥
धरम व्याह तुम तबही करते। कन्या को उपहास न धरते।
ता पर गह गल काहे कुं मरते। पहली समझि जो ग्रैसी धरते॥
तब काहू को कहो न मान्यो। ज्यो कछु रुस्यो स्यो अपन्यो जान्यो।
हाथी घोरे टसम सूझाए। अब नृप आप धरम कूं धाए।

अष्ट वर्षा भवेत् गौरी नव वर्षे च रोहिणी।
दश वर्षे भवेत् कन्या ततो ऊर्ध्वं रजस्वला॥

(प्र० ३ मे यह श्लोक नहीं है)

[द्वि० १ मे अधिक :

उत्तम व्याह सात माहं मध्यम भाग दश जोग।
द्वादश ते ऊनी चमल पंचदशी संजोग॥

तृ० १, च० १ में अधिक :

पंच वर्ष की गौरी कहिये। सप्त वर्ष की रोहिनि लहिये।
दश वर्ष की कन्या मानो। आगे फिर रजस्वला जानो॥]
अलट वर्ष की कन्या गोरी। नव वर्ष की रोहण कुंवारी।
दस वर्ष सो कन्या माही। तत उद्ध रजस्वला॥

(प्र० ३ मे यह छंद नहीं है)

षोडस बरस कहां लुं रहैं। वर प्रापती सो कूं चहै।
जोबन सवे पढण कूं नाही। अछित हो सोई ढिग पाई॥
वाही ठोर सुरत सो मंडी। वह भागो वह गैल न छंडी।
वारी माहि जाइ कै पकस्यो। जैत मालती दोउ कर जकस्यो॥
जब कन्या अपनै धर्म बीती। जो रावरी षसम कुं जीती।

[द्वि० १ में अधिक :

कलि कुल हानि स्मृति यूं बोले। पुरव छिपत नृप ढूंढत डोले।
करत कथा अधिक वढ़ जाई। चित उपजे सो कहों सुनाई॥]

म० वार्ता १५ (११००–६४)

औषध अहार रान नर कीनौ । भजन समागम को रस लीनू ॥
इन्द्र सो श्रेम पुरुषनी सोनो । धरि कहा ईश्वर मूतो ॥
पहर पहर लुं ऐसहीं जुगावै । अति महमंत महाबल जुगवो ॥
एक हाकि दूजी कुं जुगावै । आमन भेद न दूजे जुग में ।
सु फुनि मान काम रस साधे । अति विपरीत कहा न समातो ॥
दोऊ आसन भोरागी चाहे । कोऊ बद न कोऊ घाटे ।
मूंदे नगर समर रस माहू । ज्यूं पारेवा कर मैदानू ॥
शामी श्यार में छिन दी रापी । इन चरित देखि के मापी ।
इम सुं ध्यान करी बोगन मारी । ते पुनि मिटी और का मारी ॥

काम रहित कोउ होय है त्रिया पुरुष मैं कोइ ।
एह रस नीके सनकोए सनकुर समटे सोइ ॥

[तृ० १, न० १ में अधिक :

विरह विथा सूझै नहीं जैसे जरत है आग ।
दोउ जन रंग में रांचहीं सो अपनो कछु ये न लाग ॥
रंग राचे तन दोय जगे और कछु एक कीनी बात ।
राम सरोवर बाग में सुख माने एक साथ ॥
तापे वहु विग्रह भयो वैत छुड़ायो आप ।
हाथी घोडा नर सबै ताको भयो संताप ॥]

(चोपई)

सात दिवस अपने रंग पेले । ता पीछे तुम विग्रह मेले ।
सो विग्रह तुमही कुं लागे । दल कूष्माण् आप ही भागे ॥
वे कोउ अपनो पानप रापै । रापी कनक माल युं भाषै ।
कितनिक बात गुपति अनेरी । साहब सुं कहिये काहा फेरी ॥

आयुर्वित्तं ग्रह छिद्रं मंत्रमौषध मैथुनं ।
दान मानापमानं च नव गोप्यं तु कारएत् ॥

(प्र० ३ में यह श्लोक नहीं है)

[तृ० १ में अधिक :

अपनो द्रव्य आयुर्बल मिथुन ऊषध जान ।
ओगुन गुन मंत्र रस त्रिया भेद मन आन ॥]

गुपत मंत्र जे बड़ो विचारै। मतो विहूण सो सब हारै।
जान बूझि अपनो वर षोवै। तो मीत्री काहा मूंड धरि रोवै॥

[तृ० १, च० १ मे अधिक :

राजा मतो न मन मो धरही। मंत्री होय कहा बुधि करही।
मनमथ उतपत पीर न बूझै। एती भई सगरो दल झूझे॥
जोवन रूप जिहां तिहां आवै। काम व्यापत ग्र संतावै।
वर प्रापत कन्या जेहि ध्यावै। ताकी सरन आगै आवै॥]

[६३४ अ]

प्र० १, २, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

(प्रस्ताव श्री रामचंद्र जी को)

[तृ० १, च० १ में अधिक :

चंद्रसेन इम उच्चरे कनकमाल सुनि ताम।
रघुवंसी जब अवतरे सो किन जाने थे राम॥

च० १ में अधिक :

लंका जारी बहु विध से ओर चले सीय को लेइ।
चित वारो मारग भये सो बंदर विदा करि देह॥]
राम लछमन सीतलो अरु चोथो हनूमान।
नमस्कार च्यारूं कियो अंजनी दियौ न मांन॥

[प्र० ३ में अधिक :

राम लछमन सीतसुं अरु चोथो हनुमान।
तप वेठी जिहां अंजनी कियो तिहां परणाम॥]

तृ० १, च० १ मे अधिक :

ये च्यारूं मूरख भये सीता लछिमन राम।
मैव जान्यों सब से बड़ो पंडित हनुमान॥
रामै कह्यौ कुराम तूं लछमन कहो कुलछि।
आव कुसीता सीयकुं रे हनुमान कुलछ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

सोच सरीर ऊपज्यो हिरदा कियो विचार।
लंका जिति आये अभी सो अंजनि दियो न मान॥

हनुमान हिये बिचार के बात कहै सुन गेह।
माता तुम मत उचरो सो सूझो यहै विवेक ॥]

(हनुमान वाइक)

निराहार द्वादस बरस कुछ न छवै कोइ।
लछिमन कुमाइ मन कहो लौं जीग मांगो होय ॥

(अंजनी वाइक)

रामचरित जानै नहीं भूल गयो मन मोन।
राप न सको सीत कूं पावर आनहुन कोन ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

सीता सूनी मेल के बन मों फिरिगो जान।
जो कोउ लावै श्रीराम कूं तब उपर करे को आन ॥]

(हनूमान वाइक)

सती रूप मोहन प्रबल पुहु पटंतर घोर।
हनू जंपे अंजनी सुनो एह अचरज नो होर ॥

(अंजनी वाइक)

कंध चढी लंका गई सती कहावै आप।
तबही भसम न कर सकै जर बर करती पाप ॥

[तृ० १, च० में अधिक :

सती सराप न चूकही जर बर उड़ती छार।
ऐसी बुद्धि उपावती सो क्यूं होतो जंजार ॥]

(हनूमान वाइक)

तीन लोक तारन तरन जग जंपै जसु नाम।
माता सूं हनूमान कहै सो क्युं कह्यो कुरांम ॥

(अंजनी वाइक)

करता हरता सकल को घट घट रहो समाय।
कनक मृग कीन्हो नही तो विभ्रम कित जाय ॥
न भूतपूर्व न कदंच दृष्टा हेम कुरंगं न कदापि वार्ता:।
तथापि तृष्णा रघुनंदनस्य विनाशकाले विपरीत बुद्धिः ॥

(प्र० ४ में यह छंद नहीं है)

[द्वि० १ में अधिक :

दुख्यो प्रगट बाढ़े न कछु यह जानत सब कोय।
कनक हानि कीन्हों नहीं क्यो चित विभ्रम होइ ॥]

(रामचंद्र वाइक)

इह भवस्य कबहुं न मिटे संसारी की गति।
सत्य सत्य गोतम सुता जो तुम कही सो सत्ति ॥
और एक दूजी कहुं तुम नंद्यो हनुमान।
एह सम को जोधा नहीं बल पोरष जग जान ॥
वंस छेद रावन किथो सीता मोहि मिलाय।
लंक प्रजाल तो भयो जो हनूमान सहाय ॥
पद्म अठारह मध्य जुष मेरे हित को दूत।
माता जोय हनूमान है कैसे कहो कपूत ॥

(अंजनी वाइक)

गिर तक के असन दियो चली दुध की धार।
त्रिण टीटे मै नीर ज्युं भई वार की पार ॥

[प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ में अधिक :

इण मेरो सो पय पियौ कहा गयौ उह जोर।
बाल पणें रवि ग्रासियौ मैं काढ्यो मुख फोर ॥
तैं इतनो कहि कत कियौ पद्म अठारह जोर।
रावण कूं लंका सहित करतौ साहस भोर ॥

तृ० १ में अधिक :

रावन भारथ बार के लंका लेतो कूद।
राम सिया न लावतो तासों कहो कुबुधि ॥

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ में अधिक :

सायर बांध्यो कूण पै बानर मारै भार।
आधी अंजलि नीर कूं ना पियौ तिहि बार ॥]

येह मेरे स्तन न पियो अदीन आयो सोइ।
वंभण हूते ते पर्‌यो मेरो पूत न होइ ॥

(हनूमान वाक्य)

धरा पकरि ऊंधी धरौं जो रघनाथ सहाए।
सोहि प्रभू की आग्या नहीं सकूं न त्रिण उठाए॥
सात समुंद अचमन करुं लंका कित एक मान।
दच्छिन ते उत्तर धरूं जो आग्या दें श्रीराम॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

हुकमी बंदो राम को कह्यो न लोपूं कोय।
जैसो हुकम तैसो करुं जो कुछ होय सो होय॥]
प्रलैकाल जग को करूं रावण कितोक आहि।
वे प्रभु की आग्या लई जाको अपजस नाहि॥
ज्युं कुंभार भाजन घडै एह घडी सब जोनि।
घडि भंजे फिर फिर घडै ताको अचरज कोन॥
तैं जो कहो रुघनाथ सुं ताको उत्तर एह।
सेस सहस दोय रसन सूं कहि न सकुं कछु तेह॥
बड़े कहै सो सुनि रहो उत्तर दिये न काम।
अंजनी की आग्या लही चले अजोधा राम॥

[तृ० १, च० १ मे अधिक :

तीनि लोक करता भये तिनकूं बायो बोल।
हिरदै येत विचारिये मानस केतो येक तोल॥]

च० १ में अधिक :

रानी सूं राजा कहे सत्त बचन सुन लेह।
हिरदै बुद्धि विचारिये सो पीछे कैयक केह॥]
रानी सुं राजा एह भाषी। सीताराम अंजनी साषी।
महा अपूरब इतनो दुख पायो। उनको कछू कहत न आवै॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

वै रघुवंसी बनमो होतो। रावन दुष्ट हरी लेई सीता।
राम कोप करि देस सिधारे। रावन के दससीस बिदारे॥

द्वि० १, तृ० १, च० १ में अधिक :

देव मुनी सब मानस रूषी। सबको कोइ बंधे करम के वसी।
लिष्यो लेष सोही फल पावै। बल पौरुष कछु काम आवै।

तृ० १ :

कर्म लेष नाही मिटे यामे कछू ना फेर ।
सुनो राय चित ध्यान धर कहा गऊ कहा सेर ॥

(राजा वाक्य)

सुन रानी तुम कहा बषानी । गऊ सिंघ की मैं ना जानी ।
जैसी भई सत सो कहिये । पाछे भेद बात को लहिये ॥

(रानी वाक्य)

ऐसे कर्म करावे फेरा । जेसे सिंघ गाय का वेरा ।
अब राजा तोहि कथा सुनाऊं । कर्म रेख को भेद बताऊं ॥
गऊ एक विप्र प्रतिपाली । देव अंस दूध मा आली ।
सो नित चरन जाय बन माहिं । एक पुत्र वाके घर माहिं ॥
चरे गाय मन संक न धरै । बन सां एक सिंघ अनुसरै ।
देषै गऊ सिंघ एक आयो । करुना भई स्याम गुन गायो ॥
गऊ अंतर सोच बिचारे । कर्म लिष्यो सो कोउ न टारे ।
चली सेर के सनमुष आई । देषत सिंघ उठो मुष वाहि ॥
बहुरि गाय मुष बचन प्रकासा । हम तो आहि तुमारे पासा ॥
तोरे कर्म तोहे दीनो अहारा । जो जाने सो करे बिचारा ॥
कर्म हीन मैं आई आजू । तोके कर्म गत छीजे काजू ।
सुनो बनराय संत के सूरा । जो घर जान देहु मे तुरा ॥

सुन वनराय कृपा निधि भापत (सत्य) सुजान ।
चंद सूर दोय साषहै कहूं वचन परमान ॥

रानी करे राय सुन बातां । बासि सेर चंक्र की घातां ।
गाय सिंघ सों बचन सुनावै । ब्रह्म वाच शिरवाचा वावै ॥
मेरे गुसाईं ब्राह्मन आइ । तिन्है मोहि आनी मोल बिसाइ ।
तिन मेरी सेवा कीनी बहुता । सुन ले सिंव बचन गाता ॥
अर मेरे एक बछरा आहि । तेहि मैं षीर पिवावा नाहिं ।
पुत्र हमारे कर्म का हीना । मेरी कूष जनम उही लीना ॥
पुत्र मेरो जो भयो निराला । फेर विप्र की टूटी आसा ।
आज का दिन मोहि मांग्या दीजे । मोसूं सिंव बचन कर लीजे ॥

देष्यो आज अतगया मेरा । सापी देव तैतीसो केरी ।
बहुरि सिष कहा बोले माता । आजहि आनि बनी मोहि घाता ॥
रानी कहे सुनि राय पियारा । कर्म रेष जो परी कपारा ।
कर्म रेष मैं कैसे कहूं । तुसे छोडि कर भपाऊं ॥
आज कर्मगत भोजन पावा । सो तुम मोहि पातन खिलमावा ।
जो घर जान देउं मैं तोही । पांच सिष ह्वाकरे मोही ॥
कालि मा मोहि देहां सब नारी । सुप अहार दीने तुम डारी ।
मे तो मरुं पंच के लाजा । तोरे कर्म छीजे काजा ॥
कहे वचन सिवन सुन गाय । तुम जाओ अपने घर कूं जाई ।
घर के गये फिर आवे कोय । काहे जीव गनावूं लोय ॥

(गऊ वाक्य)

नीर पीर वाचा बंधे वाचा धेन आकास ।
त्रिलोकनाथ बाक बांधे जिन लीनो गर्भ निवास ॥
करी प्रनाम सेर ते गाय चली छुटकाय ।
नगर निकट प्रापत भई विप्र हांक ले जाय ॥

गाय विप्र ले आवे तिहां । बछरा घर बांध्यो है जिहां ।
कर्म रेष ब्रह्मन कस कीना । बछुवा खोलि पुसावै लीना ॥
तब ब्राह्मण दोयनी ले आवा । दूध दोहि कर घर पठावा ।
ब्राह्मन अपने घर कूं जावा । बछरा गाय रहे इक ठावां ॥
चाटे बछरा कूं ढारे आंसू । कर्म रेष ते भवे बिनु...सु ।
बछरा जब देषै सिर काढ़ी । ऊपर माता रोवै ठाढ़ी ॥
गऊ बहुत मन लीन उदासा । अरु बछुवा बचन प्रकासा ।

(बछुवा वाक्य)

कहो मात वेदन तुम मोही । कवन कष्ट माता है तोही ॥
मैं तो कछु हूं पर उपगारी । तो माता जिन लावो बारी ।
जो मन बिथा कहो मोहि धीरा । काहे ढारे नैन भर नीरा ॥

सत्य बचन हूं पूंछ हूं माता कह्यौ सतयाय ।
पुत्र काम आवे नहीं काहे को जन्मौ माय ॥

(गऊ वाक्य)

काल गई हम पर्वत पारा । तिहां बहूतक देषा चारा ।
चलौं आज बनपंडा जाइ । जहां पेट भरबि चारो षाइ ॥

सुनो पुत्र तब हम कहा कीना। उनका बचन श्रवन सुन लीना।
अपने हाथ उन लीने हलवाइ। कर्म लाग मेट ना जाइ॥
अब गइ हइ पर्वत पारा। एक सिंघ देष्यो दंडकारा।
गाय सर्व सो गइ पाइ। सिंघ भमक मोहि ऊपर आइ॥

सिंघ देष मोहि सनमुष मेजान्यो मोहि षाय।
राम दुहाई दीन मैं सिंव रहे सिर नाइ॥

तबहि सिंघ सनमुष भी आई। दूसरी गाय की सरना उपाइ।
चल्यो सिंघ आयो मोहि पासा। तब मैं सुनी अलष की आसा॥
कर्म रेष हम कीन बिचारा। आज मोहि इन कीन अहारा।
जब ही सिंघ चली मो षिषाय। तब मै दीनी राम दुहाइ॥
बाचा सुनि के रह्यो लजाइ। पेट अहार छांड ना जाइ।
कर्म के डके आइ पूता। ऐसी बात भई अजगूता॥
बाचा कहि में आई पूता। आज दूध ले पियो बहूता।
सुनो पुत्र अब मेरी बात। तास से कहूं करो तस काज॥
जब हम जाइ सिंघ के पासा। पुत्र करो तुम आन की आसा।
ऐसी बात गाय मुष आनी। तब बछुआ के षुल गइ बानी॥
सुनो मात मे पुत्र तुमारा। काटो पेट उपारो डारा।
डार तोर मे आऊं माता। कर्म रेष ते कीनी घाता॥
जो माता को काम ना आवै। मोछ मोगत कैसे कर पावै।
तुम रह्यो माता बिप्र के पासा। मे सेर की पुरूं आसा॥
गाय कहे पुत्र सुन बाता। हम शिर काल लिष्ये विधाता।
बृद्ध बोल पुत्र होइ आइ। अंत जायगी षाष मिलाइ॥
बछुरा गाय तो झगरा ठाना। कर्म रेष के होइ निदाना।
ताते पुत्र रह्यो घर माहिं। अबे कछू तुम भोगता नाहिं॥
मेरे लेषे कर्म के आहे। बहुत दीन जीवै के नहीं।
सारी रात इन झगरा ठाना। बीती रजनी होइ बिहाना॥
आय बिप्र जब बोली गाय। बाछा छूट आगै भयो आय।
बाछरा विप्र जो पकरै लागा। हाथ न आवे आगे भागा॥
आगै बछरा पीछे गाइ। चले सेर के सनमुष आइ।
तब केसरी देसै सिर काढ़ी। बच्छ गाय सो आगे ठाढ़ी॥

रहा सिंघ जब आगे आना। दोय देष सिंघ दया जमावा।
रहै सिंघ मन माहिं गुमाई। इक की बाचा दो जन आई॥

(बछा वाक्य)

बोले बछा सेर सुन बातां। पुत्र जिवत करूं छलिहै माता॥
आपनि बाचा तुम्ह सर लेहो। घर जान मेरी माता देहो॥
माता जाय सिंघ के पासा। तोहि मोहि भाग पूर मन आसा।
जिन अपना मन मुक्त नासा। तिनहिं कुं परिहैं जम की फासा॥
गाय सिंह सूं करै दुआई। तिहूं सिंघ दया मन आई।
कर्म के लष्यो [न] मिटै अपारा। कहि गाय कहा सेर विचारा॥
गाय कहा सेर न माना। तो पुनि बछरा बिनती ठाना।
अब तुम भषो माहि कूं घाई। माता मेरी देहो छुटाई॥
सिंघ कहे सुन बौरे भाई। हम लोकन की यह बड़ाई।
आप मार अरु और पचावे। सोइ सिंघ जोर कहावे॥
नारी पुरष हम अपने आछा। तुम दोय जन गाय अरु बाछा।
कर्म रेष अरु भोजन पावा। तुम्हही छाड़ अंत कहा जावा॥
मास अहार सिंघ कूं आवा। कर्म रेष हम सिंघ कहावा।
दूजी बात छोड़ के भाई। दोय तुम होय हम मेल मिलाई॥
तुम कूं छांड कून पे जाऊं। पंचन में कहा मुष दरसाऊं।
एक जे हासी दूसरी गारी। पेट अहार कौन विध डारी॥

बोले गाय सेर सूं तुम अपनी बाचा लेहु।
पुत मेरो है लारेका घर जान तुम देहु॥

मात तात अरु बंधू भ्राता। ऐतो जुग में कूड़म नाता।
बचन बोल अपने प्रतिपाला। संतत माल कछु कुटालो॥
तूं अग्यान ग्यान नहि तोही। बाचा विचल अपनो धर्म षोई।
बंधे बचन धरती आकाला। बचन बचन क्रस्न घर बासा॥
जीव्रव कौन तापे एइ आसा। अंतकाल को होय विनासा।
यह सुनि ग्यान भयो आय। सत बचन जो बोले गाय॥

(सत्य सिंघ वाक्य)

धन धन गऊ माता तू मेरी। सेवा करूं दोय कर जोरी।
अब तो माता चेला मैं तेरा। गुन आगुन सब मेरो मारा॥

माता तेरो बछा जो आहें । वह तो मेरो गुरु भाइ कहावें ।
अब तो माता करो सुभाव । राम नाम अब मोहिं सुनाव ॥
देष गऊ भयौ लौलीना । जन्म जन्म मैं दास तुम्हारा ।
लूटे बहुत लूर षरी षावे । सिंघ अग्यान सकल बिसरावै ॥
हस्त कमल तब माया दीना । देष गुरू गाय कहं ले लीना ।
रामनाम जिन मंत्र सुनायो । हरषे सिंघ चरन चित लायो ॥
अैसै है सब कर्म कहानी । सो कछु जानंत न जानी ॥

गऊ सिंघ बछ्रा सहित बिप्र सहित बन म्फार ।
बिमान बेठाय प्रभू पें गये सो सब रेष हे कपार ॥

सुन राजा तारन साह बातां । ये तो हे सब कर्म को धातां ।
मोपै कछू कहत न आवै । कर्म रेष कोइ साध न पावे ॥]
अजहूं कहत हुं अैसी । मधुमालती जैत की कैसी ।
तुम तो कह्यो कूंवरी दोइ व्याहो । भली भई हम इतनो चाहो ॥
गंधरप वाह (व्याह) रामसर कीनो । देवचरित्र भावै सोइ लीनो ।
अब कोहो आपन कैसी कीजे । याकी बेग मोहि सीष दीजे ॥

(राणी वाइक)

राणी कहै राइ सुनि लीजे । आरण तो सगले सकीजे ।
गंध्रप वाह (व्याह) न कोई जानै । अपने सिर अपजस तब ठाने ॥
इतनो एक ठोर मिलावो । ज्युं ज्युं हाथै हाथ मिलावो ।
मेरे जीव मै असी आवै । फुनि जैसे रावरे मन भावै ॥

(राजा वाइक)

मोकुं वुधी देन तुम आए । दाभे ऊपरि लुंन लगाए ।
बिन व्याहे जुग हासी होई । जग माही अपकीरत होई ॥
राव रंक लरकन कूं वाहै । सब कोई अपने जस कूं चाहै ।
तन तप छै अरु लजा रापै । राणी सूं राजा युं भापै ॥

(रानी वाइक)

मैं अब लुं जानो नही नही व्याह को संच ।
मोसुं भेद दुराए के राजा कीयो परपंच ॥
कन्या को उपहास इत दूजै हारै पेत ।
कबहूं जीय मैं अैसी धरै तिहु मारण की नीत ॥

जो तुम अब ऐसी कही मेरो मेट्यो भरम ।
जीव प्रतीत आई अबै अपनो एह धरम ॥
(प्र० ४ तथा द्वि० १ में यह छंद नहीं है)

[द्वि० १, तृ० १, च० १ मे अधिक :
जो तुम मन ऐसी कह्यो मेरो मेट्यो भ्रम ।
जिय प्रतीत आई अबे सो अपनो एक धर्म ॥]

(राजा वाइक)

तुम अयान अबूझ हो अब कर चले प्रपंच ।
दीपक कर लै देदी के उन्हीं ले की अंच ॥
(प्र० ३ मे यह छंद नहीं है)

तीन फोज मेरी बली तापर उपज्यो भरम ।
चौथि पीरया हम चढे पोयो षत्री धरम ॥
(प्र० ३ मे यह छंद नहीं है)

हम न पतीजे जग कहे देषे अपने नेन ।
धन वह अकेला मंदमत कंकर मारे सेन ॥

[तृ० १, च० १ मे अधिक :
गोला असे ना लगे त्यौं कंकर की गाज ।
हस्ती घोरे सब मुये अजहुं न आवे लाज ॥]

ज्युं अरजन के बान के ज्युं गिलोल की चोट ।
एक छुटत सहसक लगै फूटत कोटा कोट ॥
प्रथम आय हसती हनै महामात मैमंत ।
सुंडि भिसुंडि छिन छिन किए छिद्र विछिद्र किए दंत ॥
(प्र० ३ मे यह छंद नहीं है)

बड़े पंछी भारंड दोह गिर समान ये दोइ ।
हाथी घोरें सब ग्रसै अर्ध दल ग्रास गये सोइ ॥
देषा एक महाबली उननै मारे गज कोट ।
फुनि त्रिसूल ताके लगै जित नित बाहे चोंट ॥

[८०२ अ]

[च० १ में अधिक :
हम तो भूले भरम सों जानी नहिं कछु येह ।
हाथी घोरा नर तुरंग सो सबने छोरी देह ॥

हम तौ दौरे और कूं वाहां भई कछु और ।
फौज हराये हम वीरह सो कहीं न पाई ठौर ॥
जुग मिल सब हासी करै रही नहीं कहु ठौर ।
अब मैं अैसे जानिये सो अपने जिये की दौर ॥
होनी थी सो हो गई अब होने की नांय ।
सब मिल अब अैसी कही सो मन्त्री दिये समजाय ॥]

[६३८ अ]

प्र० १, २, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

सबे सफाई व्याह की फुरमाए तब अब ।
सो हम आगे कर धरी दिन दस पहली हम ॥

[च० १ में अधिक :

लगन लिये बहु विधि से नग्र लोक सुष पाय ।
हंसी पुसी सबके मने सो हिये न हरष असाय ॥

द्वि० १, तृ० १, च० १ में अधिक :

ढोल दमामा और सैनाई । बंके भेर बजे कर नाई ।
झांझ मृदंग ताल डफ बाजै । संष पखावज नादर साजै ॥]

[६४० आ]

प्र० १, २, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

गुन गंध्रफ अपछरा अनंगी । संगीत कला कोक रस रंगी ।
गावहिं राग नृप सु बनचे । मानुं इंद्र सभा सर संचै ॥
बान फरै दुलहन दुलहा । बांधे मोहर सेहरा फूले ।
उरही सूजिन के चोरा । आगन लैन पावै भोरा ॥

दुलह कुन रप त्रिया आगरी मूरति काम ।
तापर बनवानै चढै चितवत मूरछ बाम ॥
बसन भुलानी देह की पंथि भुलानी गेह ।
प्रान भुलाने थिर रहे प्रगट्यो काम सनेह ॥
आरति ले आई त्रिया कहत सुवासन सोय ।
लंक लगावन कू कर ऊंच हाथ न होय ॥
राणी मिलि गारी गावहीं मधू देषि भई मून ।
मठ धूठ मानु रहे कहन नवारी कोन ॥

[च० १ में अधिक :

महा बिरह तन उलठ सुध सरीरा नाहिं ।
काम नागिनी डसि गई सो कौन संभाले जाहिं ॥

तृ० १, च० १ में अधिक :

आकुल ब्याकुल सब भये चित ना राषे ठोर ।
कामदेव तन प्रगट्यो सो बात नहीं कछु ओर ॥

च० १ में अधिक :

बिरह बान तन मो लग्यो उठि न सके कोय ।
परी पुकार बजार मो सो अब कहो कैसी होय ॥
बिरह बिथा कैसे सहे बिस्नु रहे नहिं ठोर ।
भूली गत भूले रहे सो काम लहत हे जोर ॥
बिरह पवन जब ही बहे तन मन रहे न धीर ।
अब मनकी मन जान ही सो अपने जिय की पीर ॥

द्वि० १ में अधिक :

जबे ते तिन यह कही नर कर सर रूप ।
छलन सकल को औतरे छत्री छत्रसिर भूप ॥]

(राजा वाइक)

इह बातैं स्त्रवन सुनी सोच भयो नृप चंद ।
लोक तमासे कूं मुए फेरि नयो दुष दंद ॥
ना कोउ मारे ना मुए द्रिगन समानो रूप ।
मुरछा गति नर कुं भई परे बिरह के कूप ॥

(प्र० ४ तथा द्वि० १ में यह छंद नहीं है)

तब परेच बांधी हुती नरहु न चिहिने नयन ।
अब परदे बिनु पालषी सोवत जागे नयन ॥

तृ० १ में अधिक :

जो नेन की जानीहै यह नैन के हेत ।
जाके हित है नैन को जग देषे दोउ नार ॥
दान दशमध्रू नहिन मिले ओर नहीं ब्याह को धंध ।
ताते तन अनंग चढ़ो दुगने परे जु फंद ॥]
नर समूह वाने मिले इहा नहीं कछु कार ।
ए देषे सब जगत कूं ए देषो दोय नारि ॥

दिन दस मधु नाहीं मिलै नवे व्याह की धंध ।
तन अनंग अति ही चढ्यो द्रिगन परे जग छंध ॥
काम सरप पाए सब लहर जहर की देत ।
घरी च्यार मुरछे रही पाछे भयो सचेत ॥

नर सचेत होय के सब आए । पालषी परदे वेग वनाए ।
वाजा वाजत महल में आए । मालती काम चरित्र दिषाए ॥
नून वार नृप गये ठिकानै । नगर लोक मगरे सुष माने ।
अन्न प्रवाह जुग कुं होई । भूखे पासे (प्यासे) रहे न कोई ॥
घरी साधक लगन लिषाए । वर कन्या एकंत्र मिलाए ।
पानिग्रहन वेद विधि कीने । वोहोतक दान विप्र कुं दीने ॥
चौरी चिहुं कित कलस चढाए । जांबु पत्र वंस पर छाए ।
पुनि दुलहिनी दुलहना तिहां आए । मोती फेरा सातक दीनो ॥
सिंहासन आसन बनवाए । आदर करी तापर बैठाए ।
कनक कोत दोहन कुं सब छाजे । सब नायक मध्य मधु विराजे ॥
(अंतिम तीन छंद प्र० ४ में नहीं है)

[६४१ अ]

प्र० १, २, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

जाको रूप जगत में घट घट व्यापक होय ।
ताकुं उपमा कोन की कहे कवीसर सोइ ॥

[६४५ अ]

प्र० १, २, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

(मधु वाइक)

एक गोकुल एक द्वारका एह तुहारो राज ।
हम कुंवर सुष विलसहों और न दूजो काज ॥
हम भोगीसर भवर हैं कहुं काहां लु अंग ।
महादेव धंधो कियो जब तै दह्यो अनंग ॥
एक दहे के तीन तन आधे के मधु सार ।
आधे तन की दोइ त्रिया जेष्ठ मालती नारि ॥
एह पाटल एह मालती हूं पुनि भंवर बसेष ।
पीतम पूरब अवतरे तीन जात तन एक ॥

सलित त्रिवेणी जायफल त्रिबली त्रिपत बिलास ।
जैतमाल मधुमालती जावंत्री घट निवास ॥

(राणी वाइक)

जैतमाल मधु मालती एक प्रान तन तीन ।
मैं नीके जानी सबै कोउ तन अंतर चीन ॥
तेरे बल कीमत नहीं कहूं कहां लुं मूल ।
भारंड भंवर गिलोल की फुनि केहर त्रिसूल ॥
गिरजा गीरवानी कही सरगहि सबद पुकारि ।
मोकुं चेत भयो नही सौ पाएक मारे एक बार ॥
अब अपराध षिमा करो ए मेरी मनुहार ।
राजपाट मो सरम की कै तुम कै करतार ॥

(राजा वाइक)

राजपाट की कहत है अब न कहो रहो मून ।
लरका है सोई जिहां कहन सुनन की कोन ॥

[तृ० १, च० ? मे अधिक :
क़हा सुनन की ओर है देन लेन की ओर ।
मन की मन ही जानिये अपने जिय की दौर ॥]
तुम जीओ घर भोगवो हम सेवा सूं काम ।
पाछै होय सो होइहै सोई करिहै राम ॥
काम निवास अंस काम अब समझ कहो अब तंत ।
सा देहा सव पेषही वग व्यापक कह तंत ॥
हस्त चरन आमिष रुधर कीस (केस) नष तन मान ।
मोकुं यह अचरज भयो रहे कहा को काम ॥
जा दिन ते पुहवी रची जीव जंत जप नाम ।
भवन मध्य दीप मधु त्युं घट भीतर काम ॥
प्रान कहा मनमथ कहा न्यारे एक ठोर ।
स्याने हुंत समझिए मूढ कहै कछु ओर ॥
गोरस मैं नोनीत जुं काठन मै जुं आग ।
देह भषन ते पाइए प्रान काम एक लाग ॥
म० वार्ता १६ (११००-६४)

[द्वि० १ में अधिक :

तिल्ल मध्य ज्यों तेल है दीप मध्य सिधाद ।
फूल मध्य ते पाइये प्राण आण संग्राम ॥
कष्ट किये रस पाइये देह सनेह की रीत ।
बासव में बस जात है फूल फूल की प्रीत ॥
मिजुरी ज्यों घन मों रहै मंत तंत मह राम ।
देह मध्य ज्यों काम है फल मध्य ऐं राग ॥
दर्पन मो प्रतिबिंब ज्यों छाया काया संग ।
कामदेव त्यों रहत है ज्यों नल पवन तरंग ॥
दान मध्य कीरत रहै औगुन अपजस बाग ।
काम रहत त्यों देह मों ज्यों चकमक में आग ॥
ज्यों सुगंध मृगनाभि मों जानत नाही न कोइ ।
काम सगाम त्यों लहत हैं आण जिह होइ ॥
ज्यों गज सिर मुक्ता लहत लहत जाको भेव ।
त्यौंही काम सरीर मों ज्यो संजारत मेव ॥
ज्यों पंडित दर्पन गहत है शेष वेप बहु होइ ।
मूरष मन ते कहत हैं तिमर रोग घसि होइ ॥
ज्यों शरीर मों व्याधि है अनुरक्त उपगार ।
सो गत उपजत काम वपु बस कीन्हो संसार ॥]
गोरस रस कूं जग मथे काठ मथन फुनि होय ।
देह मथन तब ही करे भोग रस सनद्दुष होइ ॥

(यह छंद प्र० ४ तथा तृ० १ में नहीं है)

जोगीसर खोजत मूए गुरमुप भए ज ओर ।
मनसा वाचा क्रमना तीन रहत ठोर ॥
एकादसी निग्रह करी दिन दस गहिये सोयग ।
फुनि अजि तेज ही करहि जोग के भोग ॥
कोक पढै नीके करी फुनि साधै विन मान ।
घरी अंस चूकै नही लहै काम को थान ॥

प्रानेसुर ढिग दास बतायो । यह तो भेद सबै सुन पायो ।
योनि बरूप सबै कहायो । लिए छिप न्यारो न रहायो ॥

जाने नही न कोउ असो । काहू सगें न काहू परसें ।
दूह समाय कहो मोहि आगे । मो मन को सांसो अब भागे ॥
सांस उदो सर्ग नही जानो । इहां जल कुंभ सरस भरि आनो ।
सबहु न जल बिंब प्रकासै । ज्यूं सब जोती पिंड मै भासै ॥
जल देषीइ जो एकहि इंदा । घट देषीइ सहस इक चंदा ।
लीपै छीपे न लब्र जुग व्यापै । अलष निरंजन आयो आपै ॥

[तृ० १ में अधिक :

जेतमाल मधुमालती बांधी तिहां की आस ।
जो रस सुष सजोग येह दिन दिन भोग बिलास ॥
सुष समा दिन दिन बढ़े मन बढ़े तिही योग ।
मोटो मंदिर बिलसिये सुष माहिं संयोग ॥

दिन दिन प्रति अधिक तिहां होइ । भोगे पु(र)स नाति रिहो होई ।
कनक माल राणी सुष पावै । हरष हेत मधु को गुन गावै ॥
षीर षाड व्रत भोजन करिहै । मन बांछित सबही फल फलही ।
कुंवर मधू बिलसै सुप धरही । जैत मालती अति रस भरहीं ॥]
हम है काम अंस अवतारी । इह कथै कहै सो नीकी न्यारी ।
अैसे कहि मधु नृप समझायौ । राजा सुनत बोहोत सुष पायो ॥

[६४६ अ]

प्र० १, २, ४, तृ० १, च० १ :

कायथ नैगम कुल अहै नाथा सुत भए राम ।
तनय चतुर्भुज तास के कथा प्रकासी तांम ॥
अलप बुधि दीठै दई काम पबंध पकास ।
कवियन सुं करि जोरकै कहत चतुर्भुज दास ॥

[६४७ अ]

प्र० ६२, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

वनासपति मै अंबफल रस मै एक रसंत ।
कथा मध्य मधुमालती घट रति मधि वसंत ॥
लता मध्य पंनग लता सोंधन मैं घनसार ।
कथा मै मधुमालती आभूषण मै हार ॥

[द्वि० १ में अधिक :

सरिता मौं गंगा अधिक देवन मौं हरि नाम ।
कथा मांझ मधु मालती रूप सिंगर रति काम ॥
देह मध्य ज्यौं नैन हैं रसिक मांझ निग धौन ।
कथा अधिक मधुमालती तथा मध्य सुप मौन ॥
द्रव्य मध्य ओ ग्यान सुप ग्यान मान सुप होइ ।
कथा मांझ मधुमालती सुक्क सुग तन मोइ ॥
छुधा मांझ भोजन अधिक भोजन घृत भरपूर ।
कथा सुनत मधुमालती मन सो निन मनि सूर ॥

तृ० १, च० १ मे अधिक :

काम विलास की येह कथा चतुर सुनो चित लाय ।
सुगन होय सुगड़ बढ़े निगनाथे कहि न जाय ॥]

राजनीति की यामें सापी । पंचाख्यान बुधि इहां भाषी ।
चरनाएक चातुरी बनाई । थोरी थोरी सबहु आई ॥
फुनि बसंत राजनीति गायो । यामें ईसर को मद छायो ।
ताकी एह लीला विसतारी । रसिकनि रसक श्रवन सुपकारी ॥
रसक होय सो रसकूं चाहे । अधातम आतम अवगाहे ।
चातुर पूरप होइहैं जोई । एहं फल रस समझ सोई ॥
किस्नदेव को कुवर कहावे । प्रदुमन काम अंस मधु गावै ।
पुत्र कलत्र सब सुप पावै । दुप दालद्र रोग नही आवै ॥

कामर्थी लभ्यते कामं निर्धनो धन प्रापते ।
अपुत्रं लभ्यते पुत्रं व्याधितस्य न पीड़ते ॥

[६४८ अ]

प्र० १, २, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

संपूरन मधुमालती कलस भयो संपूर ।
सुरता (स्रोता) वकता सबनकूं सुपदायक दुष दूर ॥

[६४८ आ]

प्र० १, २ :

केसर के पति सामजी तिण उपरा।
कनक बरनी कामनी ते पामीसै (

च० १ :

केवल निम्नलिखित अंश प्रति के फटे होने के कारण प्राप्त हैं :—

... ...

सुहै न सुगना जिये राचही नूग ना सूं कही न जाये ॥
... ... जिये की लाज ।
सब बास जल मों रहै तो चकमक जेने आग ॥
... ...और बसे दूर के बास ।
नैना मो पर दौ भयौ सो प्रान तुमारे पास ॥
... ... और राषत रहियो चीत ।
प्रीतम पतिया प्रेम की सो बांचत रहियो नित ॥
काम बिलास कियत कथा चौपाई भरपूर ।
पढे गुने जेहि घरे सो करै बिलास कपूर ॥

टिप्पणी

(विशिष्ट शब्दों के अर्थ)

[संख्याएँ छंदों की हैं ।]

३. चौवार <चतुर्द्वार = चार द्वारों के मंडप । नार <नारी । भूम <भूमि ।

४. कुरी छतीस = ३६ कुलों के लोग । मध्य युग मे छत्तीस कुलो के लोग श्रेष्ठ माने जाते थे : विभिन्न रचनाओं मे इनकी नामावली किंचित् भिन्न भिन्न है । सं० १५३८ की रचित भांडउ व्यास कृत 'हम्मीर चउपई' मे वह इस प्रकार है :

संदा वंदा दाहिमा जाणि । कछवाहा मेरा मुंकि आणि ।
बारहडा वो डाणा अति झूझार । वाघेला मिलिया तिह अपार ।
माटीय गवड़ तुंवर असंष । सुभट सेल चाल्या हसंत ।
हामिव डाडीय असि घणा हुण । डोडी ढाआण पयाण रुण ।
गुहिलत्त गहिलं गोहिल राव । परमार पधारया अति उछाह ।
सोलंकी सिंघल घणइ मंडाणि । चंदेल षाइडा नइ चहुआण ।
जाडा जादव महुउडा एव । सूरमा रणमल जाइ तेउ ।
राठवड मेवाडा निकुंद । छत्तीस कुली मीलिआ रंभ ॥

(छंद १६६-१६७)

चीस = चीत्कार, चिग्घाड़ ।

६. जांम <याम = प्रहर ।

७. ग्रह <गृह । अतेवर <अंतःपुर ।

८. अनोपम <अनुपम । ओर <अवर <अपर = अन्य ।

९. गज कपोतादि नायिका के विभिन्न अंगों के उपमान हैं ।

१०. सूर <सूर्य । अदेसा <अंदेशः (फ़ा०) = भय, विस्मय ।

११. लावरण <लावण्य ।

१३. र (अरु, और) <अपर । और <अवर <अपर = अन्य ।

१४. संध <संधि । होइ : बहुवचन क्रियारूप के लिए एकवचन प्रयुक्त हुआ है । इस प्रकार का प्रयोग रचना मे प्रायः मिलेगा । सुध <शुद्धि = स्मृति । भ्रंगी <भृङ्ग : कीट विशेष जिसके संपर्क में आने पर घास का एक कीट भी भृंग हो जाता है, ऐसा विश्वास है ।

१५. सैल <सैर (फ़ा०) । ढोली = रीझी, अनुरक्ता । मृगा <मृगी ।

१६. गेल < इगेर = श्रौर ।

१८. म्रन < मृत्यु ।

१९. बात < वत्ता < वार्ता । चातु < चातक = पपीहा ।

२०. सजन < स्वजन = घर के लोग ।

२१. तीस < तृषा ।

२२. सुं < सउ < समम् = साथ । गोउल < गोकुल = गोकुल, गोधन ।

२५. पिरोहित < पुरोहित । जोतिक < ज्योतिष ।

२६. प्रमोध < प्रबोध ।

२७. अवधार् < अवधारय् = निश्चय करना । सार < शाला = पाठशाला । अद्ध < अध्वन् = मार्ग, रास्ता । चउदै बिद्या < चतुर्दश विद्या = चार वेद + छः वेदांग + पुराण + मीमांसा + न्याय + धर्मशास्त्र । तुल० राजा भोज चतुर्दस बिद्या या चेतन सौं हेत । (पद्मावत ४४६.६)

२९. बोहोर (बहुरि) = पुनः । आएसु < आदेश ।

३०. करम < कर्म-रेखा । लख् < लिख् = लिखना ।

३१. अंतेवर < अंतःपुर । भेव < भेद । दुज < द्विज ।

३२. अक्खर < अक्षर = ज्ञान ।

३३. चांत = उत्कट इच्छा (?)

३४. सांक < शंका । चिन (चीन) < चिह्न् । नई < याद = निश्चय ही ।

३६. परेच = परचा ।

३७. सच = सुख ।

४०. उपन् < उत् + पत् = उत्पन्न होना ।

४२. बिचष्खन < विचक्षण ।

४४. मच्च = सुख ।

४४. कक्का = ककहरा । बारेखरी = बारहखड़ी, विभिन्न अक्षरों के साथ मात्राओं का प्रयोग ।

४६. चाणायक < चाणक्य = चाणक्य नीति, राजनीतिशास्त्र । सारस्सुत < सारस्वत = सारास्वत चंद्रिका । लीलावति < लीलावती = इस नाम का प्रसिद्ध गणित ग्रंथ ।

४८. चुंप (चोप) = उत्कट इच्छा । अस < एवं = इस प्रकार । सरस < सदृश = समान ।

४९. बबेक < विवेक । सरस < सदृश = समान ।

५०. आरन < अरण्य । गूझ <गुह्य = गोपनीय बात । मैन <मयण <मदन कामदेव ।

५२. गैंद <कंदुक = गेंद ।

५४. मयन <मयण < मदन = काम । ढोल् = ढुलकाना, गिराना ।

५५. गैंद < कंदुक = गेंद ।

५६. तलब (फा०) = इच्छा ।

५८. सेंवर < शाल्मली । अंब < आम्र ।

५९. राता < रत्त <रक्त = लाल ।

६०. चंच <चञ्चु । ठकोर् = ठोक लगाना ।

६१. बपरा <वप्पुडा (अप०) = बेचारा । बफेरा <वप्पीअ + डा = पपीहा । चूछिम < तुच्छ = पतली, हलकी ।

६२. ताम <तावत् = तब तक ।

६३. सैन <संकेत । मैंन <मयण <मदन । गल = बात ।

६४. संध् <सं + धा = साँधना, लगाना, जोड़ना ।

६५. केत <कियत् = कितना ही । खीघन < खिंहिनी ।

६८. नीला : नीले : बहुवचन विशेषण के स्थान पर एक वचन विशेषण का प्रयोग किया गया है, ऐसा प्रायः मिल जाता है । महमंत < मयमत्त <मदमत्त । गारा < गाँरव = गुरुता, अभिमान ।

६९. झरण <क्षरण । ईछ् = इच्छा करना । ठोह <स्थान । हरुव < हलुअ <लघुक = हलका ।

७०. पुलाई <पलायित = भागकर ।

७१. साषी < साक्षी = गवाह ।

७२. नहचो < निश्चय ।

७७. पतीज् <पत्तिअ् <प्रति + इ = प्रतीति करना । घूहड < घूअ+डा < घूक = उल्लू ।

८२. कूर < कूट = कुटिल । पै < परि (?) = हो न हो ।

८३. सलक् = सरकना, भागना ।

८४. पेल् <प्रेरय् = ठेलना । सिल < शिला । चूरय् = चूर्ण करना । टीटोरी <टिट्टिप । इंड <अंड = अंडा । सायर <सागर । अंच् = खींचना ।

८५. बात < वत्ता < वार्ता ।

८६. सुं < समम् = साथ

८९. सार् < सारय् = ठीक करना, दुरुस्त करना । सारी (सारिश्र) = सारिए ।

९१. जूझ < युद्ध ।

९३. साकर < सक्कर < शर्करा । पावग < पावक । लाकर < लक्कड < लकुट लकड़ी ।

९५. जन (जानुं) = मानो ।

९६. सवन < श्रवण = कान । तो (थी ?) = से ।

९७. गोस (अप०) = प्रभात ।

९८. सु < समम् = साथ ।

१००. मंदर < मन्दिर = भवन, प्रासाद ।

१०१. मिंदर < मन्दिर = भवन, प्रासाद ।

१०३. सरलोक = श्लोक ।

२०४. छास = छाछ, मट्ठा ।

१०५. सरभर = बराबरी ।

१०६, कूषमांडि < कुष्माण्ड = कुम्हड़ा । चीन < चिण < चि = चुनना, तोड़ना ।

२०७. धूवत < ध्रुववत् = ध्रुव के समान ।

१०९. घीघाय् = घिघिश्राना ।

२११. वसी = वश मे हुआ ।

११५. सच = सुख ।

११६. गाह < गाथा ।

१२१. श्रखिर < अक्षर = ज्ञान ।

१२३. समीय < समिइ < समिति = सभा, युद्ध, लड़ाई ।

१२५. अंछया < इच्छा ।

१२६. गारो < गुरु = भारी ।

१२९. सयल < सैर (फ़ा०) ।

१३०. भोरा = भोला-भाला, निरीह ।

२३१. गीधा < गिद्ध < गृद्ध = आसक्त, लम्पट, लोलुप ।

१३२. अस = ऐसा ।

१३३. सयल<सैर (फा०) । दुलाय् = दुराना, छिपाना ।

१३४. बेरी<बेला = बार ।

१३६. जीतब = जीना, जीवन ।

१३९. पारय् = डालना ।

१४१. समियो समिइ<समिति = सभा, युद्ध, लड़ाई ।

१४२. कासी<कासिअ<कासित = छींक । बीह = भय ।

१४४. सेल (दे०) = बाण, बर्छी, भाला ।

१४८. घाट = चिल्लाहट ।

१५६. समीय<समिइ<समिति = सभा, युद्ध, लड़ाई ।

१५८. सुहाग = सुहागा ।

१६२. समीयो<समिइ<समिति = सभा, युद्ध, लड़ाई ।

१६३. अस = ऐसा ।

१६५. सगर<सकल । गाह<गाथा ।

१६६. एता<इयत् = इतना ।

१६८. तारा कुंची = ताला-कुंजी ।

१६९. नै (नइ) = को । मंडवाना = मँड़ौवा, उपहास-काव्य । कौंरी<
कुमारिका।

१७०. रडी = राँड, विधवा ।

१७१. धी<दुहिता = कन्या ।

१७२. दृढाय् = दृढ़तापूर्वक निश्चय करना ।

१७७. सरवन<श्रवण = कान ।

१७५. उपाअ<उत्पादय् = उत्पन्न करना ।

१७६. परवार<परिवार ।

१००. इछ् = इच्छा करना । बारी<बालिका । भव = जन्म ।

१८१. हारिल की लकरी : टेक : प्रसिद्ध है कि हारिल पक्षी या तो वृक्ष पर रहता है और यदि वह भूमि पर उतरता भी है तो वह चंगुल में कोई लकड़ी का टुकड़ा लिए रहता है ।

१८२. स्रवन<श्रवण = कान ।

१८४. कांह<किम् = क्या ।

२१४. केता < कियत् = कितना। यहाँ भी एक वचन विशेषण बहुवचन अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। अयान < अज्ञान।

२१५. आंधी = अंधी।

२१६. हंस = सूर्य (?)। दे (दई) = दी (?)। उतपति = सृष्टि का आदि।

२१७. किरच = काँच की गुरिया (माले की मणि)।

२१६. तूट् = त्रुटित होना, टूटना। पाई (पाइय) = पाइए। जाई (जाइय) = जाइए।

२२३. गोरा = गोला, गोलियाँ। अड अड = 'हडहड' करते हुए।

२२४. फरस = स्पर्श करना।

२२६. मनवा = शायसुनी पक्षी। जार = जाल। सकाय् = रोका जाना। मैंन < मयण < मदन = काम।

२३४. झख् = झाँकना।

२३५. चाह् = देखना।

२३६. कित < कियत् = कितना।

२४०. कोर = छिद्र करना। अली = भ्रमर।

२४६. उगाह (उगाह) = उरोंकी। कित < कियत् = कितना। चानक < चाणक्य = कूटनीति।

२४८. पटा = परदा [जो जब मालती मधु के साथ पढ़ रही थी, दोनों के बीच में बंधा हुआ था]।

२४०. पचार = चुनौती देना। आयस < आदेश। सयन < संकेत।

२५१. रयणी < रजनी। भण् = कहना। राहु = वधिक, चिड़ियों को फँसाने वाला। विह < विधि।

२५२. चित्रसार < चित्रशाला = चित्रसारी। सच = सुख।

२५३. आ = यह। पंजर = पिंजड़ा। नाश् = डालना।

२५४. येता < इयत् = इतना। वागुर = पागुर (रोमन्थ) की हुई वस्तु।

२५६. बारी < बालिका।

२५७. ग्रभ < गर्भ।

२५८. भादुं < भाद्रपद = भादों मास। भाइ < भाव।

२५६. बिगूच् = विगुत होना [विगुत होने (पोल खुलने) से फजीहत में पड़ना]। ढूक् = जा पड़ना।

२६२. कित<कियत् = कितना भी। असी = ऐसी। निठानी = समाप्त होनेवाली।

२६७. दव्व<द्रव्य। लख<लक्ष = लाख।

२६८. काक<काकु। जुग<जगत् = संसार।

२७२. मृगमद = मृग के शरीर का मद—कस्तूरी। स्वातिसुत = मुक्ता।

२७३. जंतर<यंत्र।

२७५. पटल = समूह, संघात। कम<कर्म।

२७८. चात्रग<चातक = पपीहा। लुं (लौं) = सदृश। वेद्धी<विद्ध= वेधी हुई।

२८१. पखाल्<प्रक्षालय् = धोना। गरज<गरज (फा०)। समियो समिइ<समिति=सभा, युद्ध।

२८३. दाद (फा०) = सहायता।

२८४. आम<अब्भ<अभ्र = आकाश। नीपज् = निष्पादित होना, उत्पन्न होना। छेह<छेअ<छेद = नाश, विनाश, कमी, न्यूनता।

२८५. अंब<आम्र।

२८६. छाहा<छाया। और<अवर<अपर।

२८९. तोछ<तुच्छ। जाई (जाइय) = जाइए।

२९०. ख्याल = खेल, खिलवाड़।

२९१. पख (पक?) <पक्ष (?)।

२९३. चलन लचाऊं = चरणों में रचा लूँ।

२९४. होइ = होते हैं : एकवचन क्रिया रूप का प्रयोग बहुवचन अर्थ में किया गया है। सहु = समस्त। अर अपर = और।

२९५. सुद्धि<शुद्धि = खबर। कम <कंम = कार्य।

२९६. वैस<वयस् = अवस्था।

२९७. नेवर<नूपुर = चरणों का आभरण-विशेष।

२९९. किर<किल = अवश्य ही।

३०१. इत<चित = विचार। असारत<इशारा (फा०) = संकेत। सांध्<संधा = जोड़ना, लगाना।

३०२. ऊभी<ऊर्ध्वित = खड़ी। नै (नइ) = को। समल<समश्लिअ = सम्बद्ध।

३०४. कूर<क्रूर = कुटिल, निर्दय।

३०५. मुसट = मौन।

३०६. आक < अक्क < अर्क = मदार ।

३०७. कंटाई = कंटीला पौदा ।

३०८. फरस् = स्पर्श करना ।

३०९. आकर = खानि, समूह ।

३११. केसू < किंशुक = पलाश का फूल ।

३१५. मनछा < मनसा । अनत < अन्यत्र । सूक् = शुष्क होना ।

३१९. और < अवर < अपर = और, अन्य ।

३२२. पाडल < पाटल = पाँडर, वृक्ष-विशेष ।

३२४. बाकुल < व्याकुल ।

३२६. जाहर < जाहिर (फा०) = प्रकट । चीन् = पहचानना ।

३२८. सेवंती < शत पत्रिका = लता-विशेष ।

३३१. सैल < सैर (फा०) = घूमना-फिरना ।

३३३. किति < कियत् = कितना ।

३३४. बार् < ज्वालय् = जलाना ।

३३५. हेम < हिम = पाला ।

३४१. जुग < जगत् ।

३४२. सूक् = शुष्क होना ।

३४६. कूड < कूट = असत्य, छलयुक्त ।

३४९. दाख् < दर्शय = दिखाना ।

३५०. कोक (कोक) < काकु ।

३५१. जांन < ज्ञान ।

३५३. अंतरेष < अन्तरिक्ष ।

३५४. समो < समय = प्रसंग ।

३५६. तहे < तथा उस प्रकार ।

३६१. नागरबेलि < नागवल्ली = लता-विशेष । मंडफ < मण्डप ।

३१२. जै < यदा = जब ।

३६४. मूर < मूल = जड़ ।

३६५. फरस् = स्पर्श करना ।

३६७. सुद्धि < शुद्धि = समाचार ।

३६९. धरी < धरित्र < धृत = धारण की हुई । हेम = स्वर्ण ।

४१७. नूपर <नूपुर । रव् = शब्द करना । सूर <शूर = योद्धा ।

४२१. पाउक < पावक = अग्नि ।

४२२. भांग् = भंग करना, तोड़ना ।

४२५. बार < बाल = बालक ।

४२७. सेर <सइर < स्वैर = स्वेच्छा, स्वच्छन्दता ।

४२९. मूक् < मुच् = खोलना, निकालना ।

४३६. अवर < अपर = अन्य ।

४३९. तरम = नरम, मुलायम । माकर < मर्कट = बन्दर ।

४४०. सांध <संधा = जोड़ना ।

४४६. जै < जइ < यदि । ग्रथ = पूँजी, धन ।

४५३. समीय <समिइ < समिति = सभा, युद्ध, लड़ाई ।

४५४. जसु <यस्य = जिसका । अवर < अपर = अन्य ।

४५५. पुलंदरि <पुरन्ध्री ।

४५६. वारी < वाटिका । सयल <सैर (फा०) घूमना-फिरना ।

४५८ जाइ <जाती = जाही पुष्प । जूही <यूथिका = पुष्प-विशेष ।

४६१. सखिइन <सखीअण < सखी-गण ।

४६३. वु = वह ।

४६५. फरस् = स्पर्श करना । करसी <कलश ।

४६६. सहेट <संकेत = मिलन स्थल । रयणि < रजनी । समिय <समिइ < समिति । < समय ।

४६७. अछा <इच्छा ।

४६८. बरिया <वेला ।

४७०. कवाण । कुवाण < कमान = धनुष ।

४७५. आवध < आयुध ।

४८१. मुख = सम्मुख । सुद्धि <शुद्धि = खबर ।

४८३. प्रतीत <प्रतीति ।

४८५. सव <शत = सौ ।

४८७. को = कोई । कुमख <कुमक (फा०) = सेना । परचंकी = देवशक्ति ।

४८८. सुं <सउं < सयम् = साथ ।

४८९. वाड = बाट, तोलने की वजन । बाढ़ = बढ़ना, अधिक अथवा व्यर्थ का होना ।

४९२. कुटम < कुटुम्ब ।

४९३. मोहाल < महाल (फा०) = टोला ।

४९४. पुरषातन < पुरुषत्व ।

४९५. ऊखर < उलूखल = ओखली । आन < अन्न ।

४९७. खत्री < क्षत्रिय । सुम्म = सम्मुख । आवध = आयुध ।

४९८. सारि < सादृश्य । आ = यह । चिन् = चीनना, चुनना ।

४९९. भिरंड < बिलरुड ।

५००. चीस < चीत्कार । लूट < लुट् = लोटना ।

५०४. हाएल < हायल (फा०) = बीच में आड़ करनेवाला ।

५०५. कुमख < कुमक = सेना ।

५०८. परचक्री = देवशक्ति । आयस < आदेश ।

५०० बानीया < वणिक ।

५११. जुग < जगत् = संसार ।

५१२. तो = तुम ।

५१३. अनेरी < अणेलिस < अनीदृश = अनुपम, असाधारण ।

५१४. मुहाल < महाल = टोली ।

५१५. कंदर < कन्दर = कन्दरा । लसकोरी = चिमटनेवाली (?) ।

५१७. नह < नख ।

५२०. मुहाल < महाल = टोली । अते < इयत् = इतना ।

५२१. दाग् = दाघ करना, जलाना ।

५२२. मुहाल < महाल = टोली ।

५२३. वीछू < वृश्चिक् = बिच्छू ।

५२४. तार = चमकीले । अपाय = बेवश । मात < मत्त । मत् = चिन्तन करना । कवाण < कमान (फा०) = धनुष । नेजा (फा०) = भाला ।

५२५. जमधर < यमदंष्ट्रा = एक प्रकार की तलवार । गुर्ज (फा०) = एक प्रकार की गदा ।

५२६. अखूट् < (खुड्=टूटना, क्षीण होना) । आवध < आयुध । नेर < निकट ।

५२९. नाख् = डालना ।

५३०. पोकार = पुकार ।

५३१. परचक्री = देव-शक्ति । सरह < शरभ । शलभ । आप < आत्म = आत्म गौरव ।

५३४. दाभ्ह् = दग्ध होना ।

५३६. परचक्री = देवशक्ति ।

५३७. अन्यत < अन्यत्र ।

५४५. कुमख < कुमक = सेना ।

५४६. दासी = चरण दासी = जूती ।

५५२. दोह : मधु तथा मालती ।

५५३. हल्ला = धावा । सार = फौलाद । भलका = भाला ।

५५६. मुहाल < महाल (फा०) = टोली ।

५५८. चखि < चक्षु = आँख ।

५६०. दह < दश । षड = तृण, घास ।

५६२. विहड < विखण्ड ।

५६५. स्याम < स्वामिन् = पति ।

५६७. अवर < अपर । अनकी = इनकी ।

५६८. ख्याल = खेल, खिलवाड़, लीला ।

५७१. सोरी < शाबर । नै (नइ) = को ।

५७५. जादू < यादव ।

५७६. धीरप < धीरत्त्व । भव = जन्म ।

५७७. अयानप < अज्ञानत्त्व ।

५७८. जंप् = कहना ।

५८२. दस रूप = दशावतार । ब्रमा < ब्रह्मा ।

५८८. बार = स्तुति, प्रार्थना । दाद (फा०) = न्याय ।

५९०. मुसाल < मशाल (फा०) । चंच < चञ्चु = चोंच । कातर < कर्त्तरी = कैंची । उर (और) < अवर < अपर = अन्य ।

५९१. गिर < गिरि = पर्वत ।

५९४. सिंहार् < संहार करना । मूंड = शूकर ।

५९८. यंत्री < यन्त्रित । सांसा < संशय ।

६००. जे < जइ < यदि । सामुद्रक < सामुद्रिक = लवण ।

६०३. चाणायक < चाणक्य ।

६०६. अयान < अज्ञान ।

६०९. अंत्री = यंत्र-मंत्र का प्रयोग करनेवाला ।

६१६. बरदाई = वर पाया हुआ । मरजाद < मर्यादा ।

६१७. आन < आज्ञा । थिरना < थिरकना ।

६२१. स्वाम < स्वामिन् = स्वामी ।

६२२. चांगमी जप : चौगमी जद्दर यंत्रियाँ ।

६२५. आन < आज्ञा ।

६२८. बे < द्व = दो ।

६३२. अवधार् < अवधारय् = निश्चय करना ।

६३४. नालकेर < नालिकेर = नारियल ।

६३७. ख्योतेपाल < निर्भमग-पत्र ।

६३८. आन < अन्न । चाढ् = चढ़ाना ।

६३९. निसाण = धौंसा ।

६४३. किमहै = किसे ।

—००—

मधुमालती रसबिलास

श्री रामचंद्रायनमो । श्री गणेशायनमो । श्री संतजनायनमो ।

॥ श्री श्री ॥

अथ श्री मधुमालती रस बिलास लिषते

दोहा

नंमसकार सो माधवा श्री गुरु परम उदार ।
जाहि कृपा तैं जगत भव निहचै उतरैं पार ॥ १ ॥

चौपई

बर बिरंचि तनया बर पाऊं । संकर सुत गनिपति सिर नाऊं ।
चातुर चित हित सहित रिझाऊं । मधु मालती प्रीति रस गाऊं ॥२॥
लीलावती ललित येक देसा । चंद्रसेन जिहां सुघड़ नरेसा ।
सुआ धान धुन गगनिप वैसा । मांनौ सब विधि रच्यै महेसा ॥३॥
बलई पर पुर जोजन चारु । चौरासी चौहटा चौबारु ।
अति विचत्र दीसैं नर नारी । मांनो तिलक सब चंदन संस्कारि ॥४॥
करैं सेव कुल न्रिप छतीस । चढै सहंस दस नांवै सीस ।
बरैहि मंत कुजर करैं चास । करै राज जहां चौह विधि ईस ॥५॥

सोरठौ

हय दल अंत न पार कुंचर कारे मेघ ज्यौं ।
कुल छतीसौ साजि चढ़ै द्वारि नृप चंद के ॥ ६ ॥

चौपई

मंत्री बुधि पराक्रम नाम । तारन (तारन) सह जास कौ नाम ।
न्रिप कै अंतेवरि त्रीय च्यारि । संतति येक मालती कंवारि ॥७॥
बरनौ कहां रूप की अपार । मांनौ सची लयौ अवतार ।
वपमां कौन पटंतर कहुं । गुन अनेक छवि पार न लहुं ॥८॥
दिन दिन रूप अनुपंम चढै । ऐसी और न बिधना गढै ।
गज कपोत हरि बिंब प्रबाल । भ्रंगी मधुकर मीन मराल ॥९॥
कदली की सोभा अति सोइ । तैंनि समान नहीं छवि कोइ ।
जा दीठां चित चलै मुनेसा । दर्पै धरनी डारे लेसा ॥१०॥

सुर मुनै धरि जोग अंदेसा । मानो मनि की द्वांद परेसा ।
राजलोक बरनन किन कहु । थोरी सी संगी की लहु ॥११॥
थोरे दां कि बोहत भूप होय । एनि जावनि जिन राचौ कोय ।
तारन माह सुहद सुन सार । थांगा येक तहु येक कंवार ॥१२॥
जाको नांव मनोहर धरयौ । सांगो कांम मनो श्रौतर्यौ ।
जनन लगो छोड़ि करम कुमाजि । नागर मनो मदन सुरराज ॥१३॥
मनु मधु जाहि बुलावै तात । बाढ़ै मांनू कला निधि गात ।
भयौ परम दुम है कै नौर । निरगत श्रीया दोय रागि श्रोर ॥१४॥
नित नित कंवर करै कछु सैल । दौरी फिरै श्रीया नव गैल ।
कबहुं क राम सरोवरि जाय । श्रगनि पुष मांनो चौकि भुलाय ॥१५॥

दोहौ

राम सरोवर ताल की सोभा कही न जाय ।
सेत श्ररुन पंकज तहां मुनिवर रहे लुकाय ॥१६॥

चौपई

सोभा बहुत रांम सर कहैं । याहै विधि तहां विहंगम रहैं ।
प्रफुलित कमल बास महमहैं । उपमां मांनु रांम सर लहैं ॥१७॥
त्रीया जिनी येक जल कौं भरैं । चितवत कुंभ सीस तैं ढरैं ।
सो बातैं सब ही जांनई । मधु निरष्यैं तैंहि यह गति भई ॥१८॥
यह बात मालती सुनि पाई । मधु है सकल रूप सुखदाई ।
तब ही मालति मन मैं आई । किहि विधि मधु देष्यैं ही जाई ॥१९॥
मन की किहि ही कहि न सुनावै । जैसे विहंग बुंद कौं ध्यावैं ।
येक दिन मन मैं साह कैं आई । मधु के चरित सुने करि राई ॥२०॥
पिजिहै सुनि हम कुं तैंहि यारा । तातैं अब करि पीय पयारा ।
मधु को कहै पिता बड ग्यात । पढौ पुत्र विद्या विषात ॥२१॥
अब तैं अनत कहौं जिन रहो । पंडित कै ढिग बैठन चहो ।
विद्या विना सोभ नही पावै । विद्या विना ग्यांन नही आवैं ॥२२॥
बिद्या बिना घर नां होइ । विद्या विना जनम वल षोई ।
दोय दोय लोचन पसु पंछी नर । तीन ज लोयन विद्या केवर ॥२३॥
लोयन सपत धरम जो करै । ग्यांनी लोयन अनत ही धरै ।
तब ही पंडित परम सुजांन । बेगि बुलायौ नृपि परधान ॥२४॥

कह्यौ पढावा मधु कौं सोय । जातैं करम आपनौ होय ।
तब ही महौरत पंडित लेय । मधु कौं विद्या बहुविधि देय ॥२५॥
जेते अछिर पंडित कहै । ते ते कंवर कंठ ले गेहे ।
येक दिना मंत्री कौं राय । पुछन लग्यै बात सुष भाय ॥२६॥
कहां रहै मधु निकट य आवै । साह कहे दिन पढि र गवावै ।
बरस साठि पैंसठि कै अंति । पंडित हैय महा गुनवंत ॥२७॥
सुनि कैं न्रिप ग्रैंसैं पयरै । जौ मालती पढिवे की करै ।
तौ ज पढायां कछुक सोय । भीतरि जाय बुझिहौं लोय ॥२८॥

दोहौ

काली कलम कपाल की विधना लिखी सुभाय ।
मधु मालती मिलाप कौ लागौ हुंन वपान ॥२६॥

चौपई

गयो राय अंतेवरि जहां । कनक माल रानी ही तहां ।
राणी प्रति पुछै यह भेव । पंडित येक महा दिजदेव ॥३०॥

दोहो

राणी पहली मालती कहै बयन तव राय ।
मेरे मन भी पढन की सो नित्य मिली ज आय ॥३१॥

चौपई

मन मैं सांसौ भयौ भुवाल । देखि तबहि मालती बिसाल ।
कन्या वर प्रापत कुं भई । वेगि वपाय करनौ अब दई ॥३२॥
छिनक वार चिंता इम करी । फिरि मन मांहै अवरै धरी ।
पढिवे कारनि लागी रहै । तौलुं वर ढुढ निप कहै ॥३३॥
चंद्रसेनि पुनि रांनी कहै । पंडित ढिग मंत्री सुत रहै ।
ताकौ कीजे कौन वपाय । रहत संदेह मांहि मन आय ॥३४॥
मंत्री पुत्र नाम जब कह्यो । सुनि मालती जीय सुष लह्यौ ।
जाके संनि मिलिवे की तीस । मनसा कौ दाता जगदीस ॥३५॥
रानी कहै पढैंवो तहां । पट परेष बंधियौ जहाँ ।
मालती कहै होह कीउ जाम । मेरै येक विद्या सुं काम ॥३६॥
यौं ज वचन न्रिपि सुनि कै पायौ । तब ही पंडित वेगि बुलायौ ।
पट परेच आडी तहां भई । पढिवै कौं पाटी लिषि दई ॥३७॥

जो जो अछिर पंडित देय। सो मालती सबै लिपि लेय।
नांवा बांचे आराम गढी। मानौ चद्र मांझि ही पढी ॥३८॥
मंत्री सुत कछु अधिको पढौ। तब मालती चौप चित चढो।
निमष येक में लेय सिलाय। दोऊ दसन वरने जाय ॥३९॥
पट परेच कैं वोहित रहैं। वचन ववेक परसपर कहैं।
मधु मालती दोऊ परबीन। दोऊ अधिक कोऊ नहि हीन ॥४०॥
येक दिना गुर बन कुं गयौ। मन सैं गुफ मालती थयौ।
जब परेच डिग भरी कै नैं [न]। निरष्यौ मधु जैसो ही सैन ॥४१॥

सो [र] ठौ

भई विरह बर नारि मधु सुरति निरष्यौ जहां।
कीजै कौन उपाय मन मैं यौ सोचन लगी ॥४२॥

चौपई

मालती तबै परेच ज फारी। कर गहि दई फुल की मारी।
लागत मधु ऊचौ सौ देष्यौ। मालती बदन चंद सौ पेष्यौ ॥४३॥

सोरठौ

चितवन चाख्यो (चारयो) नैन मानौ लाये बानवरि।
प्रगाट्यै (प्रगट्यौ) मदन जलाय प्रीत हेत मधु मालती ॥४४॥

चौपई

मधु तौ सकुचि तबै यौ करी। नीचा दिसटि धरनि मैं धरी।
तब मालती अैसै जस भारौ। मधु ऊपरि फिरि फूल ज डारौ ॥४५॥
मालती निकटि पठैवन सोय। तौं परबीन सदन त्रिधि होय ॥

सोरठौ

तू ज रह्यै (रह्यौ) सुप मोरि हुं निरषु तुव बदन कुं।
कुंन सयानप तोहि बोली अैसे मालती ॥४६॥

चौपई

मालती वाच :

मधुर महाफल देखि रसोई। खायें बिन ना रहै ज कोई।
फल न छोडि ज देषि र नैना। कहत सकल हैं अैसैं बैना ॥४७॥

मधु वाच :

चंद्रायन फल सुंदर होय। षादे कुं ईछे ना कोय।
बिन बुझै जो चपै जोई। ताहि समान ना सुरिष कोई ॥४८॥

मालती वाच :

भरे सरोवर मै रहै प्यासो। फले ब्रिछ जित रहै निरासो।
कैसे कै ताही कु कहिये। पुनि ताकौ वतर क्यै (क्यौ) लहिये ॥४९॥

मधु वाच :

फल की भुप न जल की प्यासे। मैंन रंग तैं रहै वुदासैं।
मेरे वयन जोय चित दीजे। भागै ताकी पीठि न कीजे ॥५०॥
मधु मालती सी बौहतैं टारै। मालती यह मनसा नही डारै।
मधु तव (?) येक अपरव बात। पटतर दई मालती गात ॥५१॥

दोहौ

बाढै सकलि सनेह म्रग सिंवलि जैसी भई।
मधु जंपै गति नेह समझि देपि जीय मालती ॥५२॥

चौपई

मालती मधु कौं सबद सुनावै। म्रग सिंवनि की बात बतावै।
कैसैं भई सोय हम कहिजे। लै बिचार जाकौ कछु एहिजैं ॥५३॥
मधु जंपै हु कितेक जाऊं। जौ बुझै तौं तनक सुनाऊं।
येक म्रिग अति कांम कौ मातौ। म्रिगिनि मांझ रहै रस मांतौ ॥५४॥
चरैं हरयै तिण निस दिन सारौ। अति रसमंत भयो जीय गारौ।
नौ दस म्रिगिनि मांहि हजारौ। जामै बल चौह सायर कारौ ॥५५॥
दूजै बनि येक सिंवनि रहई। बिरह विथा वौहते तन सहई।
येक दौस सिवनि म्रग देष्यौ। अति मैमंत जुपरमधि पेष्यौ ॥५६॥
तबही सिंवनि लागी जरना। प्रगट्यै काम महादुष भरना।
मन मैं आई प्रीतम करिये। हिरन कनै जाय रहि रहिये ॥५७॥
म्रग केहरी की चाल ज पाई। वेगि ठिकानो चले पुलाई।
तब ही सिंवनि नीयरैं आई। थिर हो म्रिग भाजौ मति जाई ॥५८॥
तेरे जीय की रछया करिहुं। मनसा वाचा तैं चित धरिहुं।
याके पवन सूर हैं साषी। अैसे सति सति कहि भाषी ॥५९॥
जौ अपनौ चित ठाहर राषै। बाल कहां यौं सिंवनि भाषै।
तोकौं अपनी पीर सुनाऊं। जौ हुं तेरी आज्ञा पाऊं ॥६०॥
मेरे तन कुं विरह सतावै। ज्यावै जौ तव पीर बुझावै।
हुं तुम कौ यह जाचन आई। ह्वै प्रीतम मुझ करौ सहाई। ६१॥

सिंवनि प्रति बोल्यै म्रग कारो। तुम तैं नही हमारो चारौ।
मोहि तुम्हरौ साच न आवै। कपट रूप तोहि को पतियावै ॥६२॥
तू अपनै मारगि किन जाई। मोकु छलन हतन क्यैं धाई।
कुंवर विना न सिंव सिधारै। म्रग कुं कहा विसासै मारै ॥६३॥
पूरिब वैर जाहि जेहि होई। ताके वचन न मानै कोई।
से ज सुनी है येक कहांनी। तातैं ना मानै तुम बानी ॥६४॥
सिंवनि म्रग कु पुछै असैं। कौन कहानी कहियौ कैसैं।
हिंरन कहै सुनि जीव हतारी। बात कहत ही जिन मोहि मारी ॥६५॥
येक ठौर घूघन बौहतेरे। रहैं रैन दिन सुष के घेरे।
तिन मैं अलिमरदन बड राजा। करैं सकल घूघन के काजा ॥६६॥
येक दिना सब कागनि ठानी। मारौ घूवनि करौ पुलानी।
तिन मधि येक काग बुधिवंता। कहै सबद सबस्यैं विरदंता ॥६७॥
काचौ मंत्र न कबहुं कीजे। हुं ज कहौं तिण ही विधि कीजे।
मीठे वच[न] कहौ वन जायर। कहौ सबै हम तुमरे चाकर ॥६८॥
वै तुम कौं कीजे गे जबही। जारैंगे बनकुं मिलि सबही।
औ विधि काज भलौ किन कीजे। गुड़ तैं मरै सो विष का दीजे ॥६९॥
मेघ बरन कागन कौ राजा। मन मैं मानि लयौ यह काजा।
सब मिलि चले छलन कुं तबही। जहां अलिमरदन घूघू रहही ॥७०॥
गोसैं वैसि बसीठ पठायौ। कहियो मेघ बरन कीहां आयौ।
गयौ बसीठ संदेस सुनायौ। राजा सुनत बहुत सुख पायौ ॥७१॥
अलिमरदन मंत्री ज पठायौ। कागनि आदर के बौह लायौ।
मेघ बरन आयो वन जबही। दोऊ मिले अंक भरि तबही ॥७२॥
कुसर कुसर कहि पुछैं दोऊ। कागनि मतौ न जानै कोऊ।
कागन कह्यौ तौ घूहर कोनौ। सो माग्यै जोई ले दीनौ ॥७३॥
घुहर अंधे द्यौस न सूझौ। रैनि बदै ना पंछी दूजौ।
येक दिना घूवनि मिलि आई। बैठे गुफा मांहि सब जाई ॥७४॥
तब कागनि मिलि अगनि लगाई। भसम कीये यै विधि सब आई।
भयौ कागलो घूघन केरौ। राज सकल ग्रह्यन करि डेरौ ॥७५॥
करता कीयौ बैर जिन जीवन। जिनमै रस कौ बनै ज पीवन।
यातैं मोहि प्रतीत न आवै। असैं सिंवनि म्रग सुनावै ॥७६॥

सिवनि अगपति बोली बानी। तैं ते हुं ज काग करि जानी।
अैसी बुध तोहि अग बौरे। जैसैं दुध छाढि दे धौरे ॥७७॥
काग सिव द्यौ सरसरि होई। वतिम मधिम मानै लोई।
लूटे हुंहि चोर जेति घरही। सो फुनि साध देपि की करई ॥७८॥

दोहौ

बर छुडै सुष सुरि चलै हाहा करै विघाय।
सुनि हो अग दुख मोचना ताकु सिव न पाय ॥७९॥

चौपई

सुनि करि बचन अगहि सुप पायौ। तजी आस सिवनि ढिग आयौ।
सिवनि अग लायौ वरि रसिया। तू मेरे प्रान नेह मन बसिया ॥८०॥
तोकौं मैं दीनी यह देही। करि सुप पूरन प्रान सनेही।
मो तन सुरत नेह सुप कारी। अगनि भली क लाहुं(नाहर)नारी ॥८१॥
याकौं मोहि परेपौ दीजे। मेरो बचन मानि सुप कीजे।
सुनि सुनि वचन हिरन मन फूली। सिघनि राचि हिरनि कौ भूली ॥८२॥
अति वभंग देही अति मानौ। सींवनि केरे तन स्यौं रानौ।
बढ्यौ पेम कछु कहत न आवै। रैनि दिना सुप वभरि गंवावै ॥८३॥
सुप मैं रहत भये दिन केते। ह्वै मैं कोऊ येक न चेते।
तौलुं सींव सेल तैं आयौ। सिवनि जाकौ आहट पायौ ॥८४॥
तब सिवनि वनि (?) र म्रिग राष्यौ। आवत सिंघ तबै यौं भाष्यौ।
तुम कारनि मैं वर भल धरिये। आवो वेगि काज सब सरिये ॥८५॥
निरषित वै मोटौ अग कारौ। दौरि सिंवि अग छिन मैं मार्‍यौ।
प्रीति भरे के बाध्यौ मरे। ताको दोस कवन सिर धरै ॥८६॥

मालती वाच :

सुनि हो मधु तु कहत विसार्‍यो। अैसे नाहिन वह अग मार्‍यौ।
मोस्यैं अैसे झुठ न कहिजे। मोरे सुप तै सति सुनि लीजे ॥८७॥
जा दिन सीह सेल तैं आयौ। सिवनि तै अग दूरी दुरायौ।
पहर येक जहां सुरतन कीनौ। फुनि जब पीवन कौ चित दीनौ ॥८८॥
नदी तीर चलि आये दोऊ। वहां सिघ बैठो कौ सोऊ।
देपि सिंघ जब सिवनि रोई। केहि विधि रापौ अग अब सोई ॥८९॥

तब यह मन में निहचौ कीयो। म्रग मरिया तौ म्रग मो जीयौ।
म्रग पहला तन कुं देहु। ऐसे प्रीति साच करि लेहु ॥९०॥

दोहौ

अंतर जिन पारौ दई अब मरिबे की रीति।
म्रग कौ तौ सोभा भई मैं तनि बंधी प्रीति ॥९१॥

चौपई

अतनां में म्रग थिर हौ कैंना। निरषि र सिंघ क्रोध भये नैंना।
तब सिंघनि मन में यह आई। परी दौरि म्रग सींगनि जाई ॥९२॥
फूटे सींग दोउ वर आगे। पांन निकसि सिंघनि के भागे।
सिंघनि करी ज कोचु न कीही। ऐसौ सूर मनिष जा धरही ॥९३॥
पाछै आय सिंघ म्रग मारयौ। ऐसौं बनी दहुंन तन दारयौ।
विधि के अहिर लिखे ज जोय। तातें कछु अंतर ना होय ॥९४॥
म्रग की मौत सिंघनी साकौ। चित दे कह्यौ समयौ ताकौ।
सिंघ गयौ बन कु फिरि छंडि। मालती कथा कहीयौ मंडि ॥९५॥

सोरठौ

मधु मरिवौ येक वार और वडे के कंधि चढि।
सवद रहै संसारि म्रग पहलां सिंघनि मुई ॥९६॥

मधुवाच :

चौपई

सिंघनि यह के कारन कीनौ। यासैं सुख जीवन का लीनौ।
त्रीया की बुद्धि ववेक न चीन्हौ। म्रग मराय आप तन दीनौ ॥९७॥
मधु समयौ सुंनि जीव दुख पाई। मालति के मनि येक न आई।
मालती वहै वात फिरि मंडे। जैसैं धोरी देय न छंडे ॥९८॥
मालती फिरि ऐसै करि कहई। तैं कछु ना मधु मो जीय लहई।
विरह अगनि मोरै तन लगई। फुनि येते वुपरि तन जरई ॥९९॥
मो मनि मधु तू निस दिन वसई। छिन छिन कांम कालतन डसई।
तू तौऊ मोतन ना चितई। कैसै कैयां देह न रहई ॥१००॥

चौपई

मधु जपै मालती अयानी। सिषयां बुद्धि न होय सयानी।
जितौ क प्रेम दूरि मुष दरसैं। तितौ क चैन नही तन परसैं ॥१०१॥

चंद चकोर कुमद किन देपै । पुनि रवि और कमल किन पेषै ।
वम नत निरपै वौह सुप देही । परसे जात सकल गुंन तेही ॥१०२॥

दोहौ

लोचन केरी प्रीतड़ी जो करि जांनत कोय ।
जो रंग नैंना ऊपजैं सो सुष सेभ्र न होय ॥१०३॥

मालती वाच :

भनैं मालती रे मधु मांनी । कैसी तैं अपनैं जीय ठांनी ।
और पुरिष ते त्रीय निरुपावे । त्रीय बोलै नही वै ललचांवे ॥१०४॥
देपौ सुरवर कौ व्यौहारा । मन मैं सोधि करौ विचारा ।
मेरी कही तोहि नही भावै । हुं कछु कहुं तो तू कछु गावै ॥१०५॥
मधु जंपे मालती सुंनि लीजे । सत छोडे दिन कितेक जीजे ।
तु अयान ह्वै वातैं कहई । सुनन हारे सुनि के कहई ॥१०६॥
हम तुम गरु येकही पढंई । दूजैं तू मो त्रिय करि धरई ।
यह जीय समझि विकट मति बुझै । बुरौ करम यह सव दिन सुझै ॥१०७॥

मालती वाच :

मधु तू झूठ वौहत ही काढौ । हंम तुम कुलि अंतर वौह वाढौ ।
येक ग्रंथ तैं वुपजैं दोऊ । तास्यैं दोस धरै ना कोऊ ॥१०८॥
त्रपति न पावक काठहि जरें । त्रपति न सायर सलिता भरें ।
त्रपति न काल प्रांन कुं लेतही । त्रपति न नारी रस हेत ही ॥१०९॥
सुनि मंत्री सुत मंनहि विचारै । त्रीय स्यैं वचन कहत नर हारै ।
तजिये कंनक स्रवन जैंहि टूटै । तजिये पंथ चोर जैंहि लूटै ॥११०॥
तजिये प्रीति जहां दुप पइये । विन स्वारथि पर धरि ना जइये ।
रवि घर गये चंद भयौ मंदा । वावन वप बलि के घरि छंदा ॥१११॥
संकर जटा सुरसुरी आई । रही समाय तहीं ही जाई ।
यंद्र भयौ लवु दिषि ग्रह जाई । अैसे वडे भये लघुताई ॥११२॥

दोहौ

चंद यंद्र अर सुरसुरी तंन बावन बलि भूप ।
विन स्वारथि पर घर गये सव भये लघुक ॥११३॥

चौपई

मधु यौं सीस मनै मनि गायौ। ता दिन पछै पंढन न आयौ।
मालती कै मनि वप ज्यौं दाहा। मधु देषन कौ मिटियौ लाहा ॥११४॥
आपन हो पढिवे तैं रही। निस दिन मधु कौं जोवत चही।
मधुं षेलन कुं सरवर जाय। जहां बौहत सुष वपजत आय ॥११५॥
भरैं जहां जल सुंदर नारी। मधु के चरित्र देषि सब हारी।
प्रगट्ये मैंन त्रीया सबहिंन कै। ढरके कुंभ सीस तैं जिनकै ॥११६॥
मधु यौ चरित्र देषि कैं लज्यै। जा डर डरि कैं वन कुं भज्यै।
सो डर जहां तहां ह्वै आगै। छुटौ अबहि कौंन प्रति भागैं ॥११७॥
चमकि तुरी चढि कै ग्रह आयौ। वै ठाहर कौ षेल मिटायौ।
मधु कौं मालती चेरी देषत। घर वन मांहै पेषत डोलत ॥११८॥
येक दिना सरवर गति षारी। दई षबरि मालति पैं वारी।
राम सरोवरि मधु निति जाई। करै केलि वौहतै सुष पाई ॥११९॥
मधु दिन दोय डरपि नां आयौ। जा पाछैं सरवर फिरि धायौ।
तब मालती मन मांहि वपाई। षेलन मिसि त्रीय साठि बुलाई ॥१२०॥
राम सरोवर चलि कै आई। जहां षबरि मधु कीन बताई।
मालती आय सरोवर झंषी। चितवत बिकल भये सब पंखी ॥२११॥
सषी सकल ढिग मौज बिलाकैं। चंद कनै ज्यौं बडगन झलकैं।
महा अमित छबि कहत न आवै। वपमा कौं रति कछु न पावै ॥१२२॥

सोरठौ

ससि सब कला समेत रबिकै ढिग फीकौ सदा।
मालती बदन निहारि तेज रहत दिनकर भयौ ॥१२३॥

चौपई

छिन मैं सांझ भई तेहि काला। फूलन लागे कुंमद रसाला।
पंछी जाय उडै ना कोई। निरषत रहे मालती सोई ॥१२४॥
तब येक भंवर बोलियौ बानी। मालती मोहि संदेह गमानी।
तेरे वदन तेज अलि बंधे। अरुन बंस कवलनि पट वंधे ॥१२५॥
सुनत बचन मालती रिसानी। म्रगी कौज दई किन बानी।
काहें काठ धाम सजि रहये। अलि कवलनि बंधन कत सहये ॥१२६॥

म्रगो वाच :

सोरठौ

परें प्रेम की पासि कटे न जौ कोटिक करौ ।
नैन मन अरपै लाल प्रीति रीति यह मालती ॥१२७॥
प्रेम प्रीति के काज पंछी हुं बंधन सहैं ।
नातर अहरी बाज गये गयनि फिरि को गहै ॥१२८॥
स्रवनन रांचैं राग म्रग वत ही थकित भयौ ।
सर सनमुष वर लागि प्रेम न मुकै मालती ॥१२९॥

चौपई

म्रंगी प्रेम बढाय बतायौ । मानौ बिरह बान वर लायौ ।
तब ही मधु मनसा मैं आयौ । तन चटपटी जानु कछु पायौ ॥१३०॥

सोरठौ

विरह व्यापि कै नारि पैंड चारि पर ही गई ।
वन चकई करै विलाप सबद सुनें यह मालती ॥१३१॥

चौपई

चकई पीव पीव कहि कहि जंपै । लेय उसास हाय कहि कंपै ।
मालति के सुनि अति रिस आई । चकई क्यैं चांनक सी लाई ॥१३२॥
कठिन प्रान तेरे सुनि चकी । पति वियोग कहि क्यैं सहि सकी ।
चरन पंष नहीं थिर थकी । ढिग ही रहत जाम चहुं वकी ॥१३३॥
कहै मालती सुनि जलचरनी । मो पर परी राम की सरनी ।
तुव विच पट यह नाहिन कटै । तौ मेरे सराप कौन तैं कटै ॥१३४॥
चकई जौ हुं तोहि मिलाऊं । रहियौ तो तुमपै का पाऊं ।
मो विच कौ यह पट जौ कटै । तौ तेरौ स्रा.प काम अब फटै ॥१३५॥
मधु कौं मालती सरवर हेरै । जैसैं दामनि घन सैं घेरै ।
कोईक वार लग रहि वरि आई । चकई कारनि बधिक बुलाई ॥१३६॥
चकवा चकई पकरि मंगाया । घालि पांजरै साल बंध[ा]या ।
मालती अरध निसा मैं आई । चकवा चकही टेरि जगाई ॥१३७॥
मैं तो तुव पीय आनि मिलाई । विरह वियोग कना सुष पाई ।
चकई यौं जंपै सुनि सजनी । तुं पुछे सो ना यह रजनी ॥१३८॥

जौ ऐसैं मिलिये मध पावैं । तौ पंछी पीहल पींजरै गावैं ।
झूठै ही मन क्यौं ममकाइयौ । चातुरि के कुंमे रस दइयै ॥१३९॥

मालती वाच :

सुन विप्रोत कुच कूरां सियाणां । कौन मलिन गंगा छिन हाणौ ।
पीव क्यौं मिलि रस मध निस पागौ । चातुरि कुचैं मोहि लगागौ ॥१४०॥
सरस निरस कौ यौं गति जानैं । तु कंवरी अजानी कत जानैं ।
प्रथम समागम नूतन न सुमी । चातुरि चुंग कहां मैं सूझी ॥१४१॥

सोरठौ

सुरिज नाद्र चोटि कवरी कबहौं दरस लौ ।
नंद जानि पिनलाय सो कुमंद कहा करन है ॥१४२॥

चौपई

हुं पंछी थोरी बुधि मेरी । पढे गुने की मति है तेरी ।
तु ज कवरि दुरि हीं ढूकी । मलय भुवंगम की गति चूकी ॥१४३॥
मालती सुनियौ बोह सच पाई । तनहि निज सपि बेगि बुलाई ।
जैतमाल ता सपी कौ नामा । मन पहली ज संवारै कामा ॥१४४॥

सोरठौ

प्रेम संपुरन सोय दोय डील बिन ना लहौ ।
तीजो करना होय जेहि यौं सब घट निरमयौ ॥१४५॥

चौपई

दोय के बीचि वसीठ न होई । परम चतुर नर जानौ सोई ।
सपी तैं बात कहत मन डरई । ना जानौ सपी का मन धरई ॥१४६॥
फल दुराथ सषी आप ही पायौ । पै मेरैं कछु हाथि न आयौ ।
जो कछु करता दुतर लहिये । तब तौ आनि सषी प्रति कहिये ॥१४७॥
छुध्या पास सबै मोहि भागी । काम रहत निस दिन तन जागी ।
मधु सूरति मिलवे अभिलाषी । देषौ वदन देत है साषी ॥१४८॥
जैतमाल तू दिन की बारी । मेरै सब सषियन तैं प्यारी ।
तुव तैं दुरै नही कछु मेरै । मेरे प्रान सब रस तेरै ॥१४९॥
दिन कौ सकल लोक ही ध्यावौ । सुनि-मत जो चाहै सोई पावै ।
याकौ भेद कौन कहि मोसुं । पाछै मन की पुछुं तोसुं ॥१५०॥

जैतमाल जंपै सुनि बाई। तैं मो कु काक ही सुनाई।
सब जुग रहै देव के धंधे। देवा सकल दिजन के बंधे ॥१५१॥

सलोक

देवाधीनां जगत्रांणं मंत्राधीना स देवता।
सो मंत्रा ब्राह्मंणाधीनां तसमात ब्राह्मंण देवता ॥१५२॥

चौपई

मालती वाच :

ग्रैसौ मंत्र रहै सुष तेरैं। काज नि आवै कबहुं मेरैं।
मधु मधु कहत एक छिंन बीतै। कोडि तैतीस देव किम जीतैं ॥१५३॥
म्रिग न ज्यैं किसतूरी षाई। मुकत माल ज्यैं गजकंठ नाई (नग्राई)।
ग्रहि मणि कब हौं होय न चीन्हा। तेरे मंत्र इहै गति कीन्हा ॥१५४॥

दोहौ

म्रग मद गज सिर स्वाति सुत ग्रहि मणि क्रप धन राज।
या थैं निरधन ग्रति भले जीयत न ग्रावै काज ॥१५५॥

चौपई

तैं मो पान नहीं कछु ग्रंतर। विधना देह रची द्वै ग्रंतर।
मो मरतै तु निहचै मरिही। तब यौ मंत्र काज कहा करिही ॥१५६॥
जैतमाल फिरि वतर दीनौ। तैं ग्रपजस मेरैं सिर कीनौ।
जीय प्रपंच मधु मोहि दुरायौ। नैक न कबहौ भेद जनायौ ॥१५७॥

सोरठौ

रहैं सदा येक संगि भेद ग्रभेद तासु करौं।
करै न ताकौ काज प्रीति कपट जैंहि मालती ॥१५८॥

चौपई

मालती तबहि चरन लपटानी। मेरी चूक सबै मैं जानी।
ग्रब मोकुं तुम तुरत जिवावो। मधु सुरति जौं नैन दिखावे ॥१५९॥
ग्रै जैतमाल यौ गोरी। ग्रारतिवंत काज बुधि थोरी।
तैं मनसा चातुक लौं वंधी। विहवल भई काम की ग्रंधी ॥१६०॥

दोहौ

सो गति ग्रंध्यां ग्रंध की जो गति कामा ग्रंध।
मानौ ग्रति गज ग्रंधरौ ग्रारति पूरन ग्रंध ॥१६१॥

जैतमाल वाच :

प्रथम स्यांम फुनि लाल फुलैं हि पात गंवाइ के ।
केसु कुसमहि लागि अली लगे कौ कौन गुंन ॥१८७॥

मधु वाच :

केसु पावक जानि कैं मधुकर मरिवा हेत ।
जरन काजि वहिं द्रुसि गयो सति वचन सुंनि जैत ॥१८८॥

जैतमाल वाच :

नप सिख कंट कटाय नीच प्रीति के गुंन तहां ।
कवलनि परस्ये जाय वहा विरंच्यै कौंन गुनि ॥१८६॥

मधुवाच :

दोहौ

तन बंधन कै कारनै गयौ वहां सुनि जैत ।
फिरि वत ते निकसौ नही निवहै वसही हेत ॥१६०॥

जैतमाल वाच :

पीलौ सुष मधुकर यह कंहि गुंनि । द्रुम वेली भटकत सब वनि वनि ।
साची वात मोहि समझावो । कूर कलांवत ज्यैं मति गावो॥१६१॥

मधु वाच :

कूर कलांवत ज्यैं घर भूले । मधुकर ज्यैं पंवन वसि झूलै ।
अचिरज इहै लागत मेरे मनि । तुंम ही भटकत हौ अैसे वनि ॥१६२॥
जैति सकुचि मंन लज्या पाई । मेरी बात सोंहि पर आई ।
मैं मधु साच साच करि बूझी । तेरें जोय कछु औरे सूझी ॥१६३॥
वनिता लता और पंडित नरा । यनकै सहज अनेक और धरा ।
जौलुं नैंक न आस्रम गहई । तौलुं भलै न कोऊ कहई ॥१६४॥

मालती वाच :

हुं तौ नारि नही हौ तैसी । और फिरत हैं घरि घरि जैसी ।
मोकुं सकल बात मधु सूझै । जोय कहुं सोई तू बुझै ॥१६५॥

मधु वाच :

मधु जंपे तू चतुर सयानी । तौ कहियों साकु यह वांनी ।
कौंन मालती कौंन ज मधकर । वतपति कहौ सकल पछिली हर॥१६६॥

वैतमाल वाच :

सुंनि मधु अब पछिली ज सुनांऊ । जो तुम······हुं पाऊं ।
स्रुग माहि करतें सुप दोई । गंध्रप येक अपछरा लोई ॥१६७॥
ते काहु कौं गिनत न डोलैं । मदन अब मैं अलबल बोलैं ।
तिनकें सुप की कहत न आवें । राति द्यौस मरि जौं कोउ गावें॥१६८॥
येक दिना नंदन बनि जाई । रहे बहुत पर तहां लुभाई ।
अतना मैं रिपि सपत ज आये । तिनकुं देपि कछु न लजाए ॥१६६॥
हिलि मिलि रहे येक तंन जैसें । निरपि क्रोध रिपिन भयौ अैसें ।
तुम तौ हम तैं नही लजावौ । होह मालती भवर सिधावौ ॥२००॥
हुं बनकी होतौ तब चेरी । सेवंती की गति भई मेरी ।
परे वहां तैं निहचे तवही । बन मैं रहे आय दोउ तब ही ॥२०१॥

दोहौ

गंध्रप तौ संमरौ भयौ गंध्रपि मालती सोय ।
सपी सेवती जहां भई करता करै सहोय ॥२०२॥

चौपई

अति ही मगन भये बन दोऊ । कबहुं नाहिन बिछुरैं कोऊ ।
कबहुक सैल काजि बनि फिरई । मालती बिन मनसा नहीं धरई ॥२०३॥
मधि रयन संमयौ जहां होई । वहे देव तन प्रगटे सोई ।
अति रस सुरत केलि जहां करई । बासर भये वहे तन धरई ॥२०४॥
कितेक द्यौस अैं बिधि बन रहई । अभि अंतर किणि ही ना लहई ।
निकट ही सेवती पहिचांनें । भमर मालती तास न जांनें ॥२०५॥
ससि(ससिर)बसंत ग्रीपम रुति बीती । बरिपा सरद दोउ दुति जीती ।
कठिन भई हेम दुति भारी । बन रुति तब मालती प्रजारी ॥२०६॥
फिरि कें बनि बन मैं दौं लागी । मालती भसम निपट तब दागी ।
हेम जरी अर पावक जारी । बिधि लुहार केरी गति धारी ॥२०७॥
सेवंती वहां कछु येक बांची । दिन द्वै रही प्रान तन पांची ।
मधुकर जरत मालती निरषी । मैं तब प्रीति भवर की परषी ॥२०८॥
यौंम दूसरे कीनी फेरी । भीनें बचन मालती टेरी ।
मैं निरपी गति एकै तिहारी । तुम तैं प्रीति करे जेहि गारी ॥२०६॥

सोरठौ

जरी मालती जोग मधुकर के भाये नही ।
दिन द्वै कीयौ न सोग लोक लाज या भी तजी ॥२१०॥

दोहौ

जरियौ सरियौ कठिन है मधुकर मालती संग ।
मैं नीकैं सब परिदियौ भेद तुमारौ अंग ॥ २११ ॥

सोरठौ

मुप दीठा की प्रीति ऐसी सौ सब को करे ।
वे कलि कोई मीत जीयत जीय मुये मरैं ॥२१२॥

दोहौ

सेवंती यो भंवर ने कहे बहुत तव बोल ।
सुनि करि भंवर पुलाइयौ गयौ भंवन कहुं कोल ॥ २१३ ॥

चौपई

और तबै भाप नही लागी । मधु चुप कह्यौ जैत की आगी ।
फिरि कै मधु बोल्यौ तैंहि दारा । जैसैं भयौ सति निरधारा ॥२१४॥

मधु वाच :

सेवंती येती बात कहा जांनै । झूठी बात घनी ही ठांनै ।
जैहिं वपु बीतै सो तैंहि बुझै । पर घर कहा परोसनि सुझै ॥२१५॥

सोरठौ

जरती मालती देखि मधुकर तौ पहली मुवो ।
सो प्रतीति अब पेपि मुंवा बिन कोऊ औतरै ॥ २१६ ॥

चौपई

मूवां बिन कोउ जुग न देषै । मूवां बिन औतार न पेषै ।
मूवां बिन परतीति न मानै । मूवां बिन कोउ सति न ठांनै ॥२१७॥

दोहौ

जो मेरैं पाछे भई गति मालती स जोहि ।
जैतमाल सति करि कहौ सब जानत है तोहि ॥ २१८ ॥

जैतमाल वाच :

सति वचन सुनि हो मधु मेरो । ज्यौं सुष पावै, जियरो तेरो ।
जा पाछैं वरिषा रुति आई । जल वरष्यै कछु अमित रिसाई ॥२१६॥*
शोभा फूटि मालती फूली । प्रीति पुरातन मांई सूली ॥२१६॥
मधुकर प्रेम संपूरन दांष्यो । जैतमाल ऐसैं करि आष्यो ।
कितेक द्यौस बीते फूलें करी । मालती वौहरि सीत पावक जरि॥२२०॥
तव मैं भी तंन दीनौ डारी । आप भई इत विप्र कंवारी ।
मालती न्रिप घरि कन्या होई । वंनिक पुत्र भये तुम सोई ॥२२१॥

मधु वाच :

मालती लयौ जनम न्रिप आई । तु व्रिहमन के बड कुल जाई ।
मैं लीनो वनिक घरि जनमां । केहि कारनि कहियौ अव मन मां॥२२२॥

[जैनमाल वाच :]

तेरे मधु मंन मैं या आई । या कारनि मैं देह गंमाई ।
यातौ फिरि कैं अजहुं फूली । मेरी सकल वात ही भूली ॥†
त्रीय नै प्रीति न कीजे कवही । तैं अपना जीय मैं या लहई ।
मालती जनम लयौ न्रिप घरिका । मैं वांनिक घरि ह्वैस्यौं लरिका ॥२२३॥
तुम मन मांही इहै चुपाई । न्रिप वांनिक ना होय सगाई ।
ता तैं तुम इत प्रगटे आई । मालती तैं ऐसे न रिसाई ॥२२४॥
तुम दोऊ हो देवन अंसा । प्रगटौ आय कही हरवंसा ।
अव मालती मिलन की ठानौ । पूरिवली वातैं सति जांनौ ॥२२५॥

दोहो

मधु वाच :

सवै सयानप छाडि कै जैतमाल सुनि वैन ।
पूरिवली पूरिव गई वह वासुर वह रैन ॥ २२६ ॥

चौपई

पूरिवली वातैं अव डारौ । वो तौ लादि गयौ वंनिजारौ ।
तिकि वीतां कोउ विप्र न वूझै । नीकां जैत सयांनप सूझै ॥२२७॥

---

* यह छंद एक ही अर्द्धाली का है और संख्या भी बाद में दुहराई हुई है ।
† यहाँ छंद-संख्या नहीं दी हुई है ।

राजा मीत सुनै ना कोई। तीन लोक में पूछौ सोई।
काहू करी न कोऊ करिहै। निप की प्रीति काज बिगरीहै ॥२२८॥
येक त्रीय जाति और नृपवंसी। यनके प्रीति संपूरन कंसी।
जैसी लता करेली करई। और बकांनि जगत मधि फरई ॥२२६॥
काक सबुचि सुनै ना कोई। जुवा ठौरि सति ना होई।
कारे साप पायें ना रहई। फुनि त्रीया कांम सांति को कहई॥२३०॥

सोरठौ

राजा मीत न होय तुम्हौ जौ कोऊ कहै।
मन गति लहै न कोय दंत न गज के को गहै ॥ २३१ ॥

जैतमाल वाच :

मधु तू दछिन लछिन धारें। मालती तो अनकुल बिचारें।
पुरब प्रीति जानि चित धरई। नातर वनिक मीत क्यौं करिहीं ॥२३२॥
छाडि और भूपन के बालक। तुम बर बरत है पूरिबली तक।
दीपग मैं ज्यौं पतंग सिरावैं। तैस्यैं तुमसौ को सुख पावै ॥२३३॥

[मधु वाच :]

मधु जंपै तुव बडी अयानी। यन बातन मै नाहिन जानी।
राज काज की बात न बूझै। दिज कौं सीप मांगि वै सूझै ॥२३४॥
सीषौ जाय बाप की कीली। पाछै यौं कछु करौह ढीली।
देषी सुनी न कबहौं कीजै। अपनै कुल के क्रमि चित दीजै ॥२३५॥
ज्यौं चकोर पावक भष करई। पंछी और छुवत जरि मरिही।
राज की बातनि होहैं नारी। को पूछै गुंगन की गारी ॥२३६॥

जैतमाल वाच :

मधु मो वचन मांनि निरधारा। अपनी गरज सहौ तोहि गारा।
तुम सनबंध लिष्यौ करतारा। जदि तदि गंगा सोरं पारा ॥२३७॥
नर त्रौह आप सयानप करहो। तौलुं त्रीय स्यैं काम न परही।
नैन कटाछि बान वरि लागैं। ग्यान ध्यान तब तन तैं भागैं ॥२३८॥

दोहौ

तौलुं पुरिष करै सबै तौलुं ही करै सयांन।
तौलु वरि भेदै नही त्रीय नैनन के बांन ॥ २३९ ॥

चौपई

यौं मधु स्यैं बातन भर लाई । सषी पठाय मालती बुलाई ।
औचकि आय दामनि सी कौंधी । निरषत नैंनं भई चकचौंधी ॥२४०॥
तहि परेच भंखत सुष देष्यौ । अब के रूप सकल ही पेष्यौ ।
वपमां दैंन पटंतरि को है । सुर नर नाग सकल मन मोहै ॥२४१॥

दोहौ

द्वादस अभरंन अंग सजि पुंनि सिंगार नवसत ।
आंन लोभ सोभा भई अैसौं मालती गत ॥ २४२ ॥
काट सिंगार वनाइये सो पुनि सोभा होय ।
विन भुषन तंन राजही साची सोभा सोय ॥ २४३ ॥

चौपई

मालती विन भूषन ही सोहै । मैंन देषि जाके तनि मोहै ।
भुवलोक मैं हुई न ह्वैहैं । विधि वनाय सर काकर येहैं ॥२४४॥

दोहौ

मधु भूले जहां देषि के वतर देय न कोय ।
मालती वचन कहा कहै चित दै सुंनिज्यै सोय ॥ २४५ ॥

सोरठौ

अब के जनम स येह निहचै करि मन मैं गढी ।
कै मधुकर रस लेय कै दौ दांऊ मालती ॥ २४६ ॥
ववपति येक समूर प्रीति हेति तंन ह्वै धरे ।
पुहिपिं न वुगं सूर अंतर देई मालती ॥ २४७ ॥
जौ कछु जीय मैं षोट तौ साषी संकर कहै ।
कै तन रहै अवोट कै परसै मधु मालती ॥ २४८ ॥

मधुवाच :

तो तंनि जरलहि देषि मैं देही ऊपरि दई ।
विछुरंन निमष ज पेषि सो येते दिन क्यैं रही ॥ २४९ ॥

चौपई

त्रीय तैं प्रीति करौ जिन कोई । नातर दुष तौ निहचै होई ।
मैं अपनै जीय तोपर दीनौ । तैं प्रपंच मोसुं यह कीनौ ॥२५०॥

मेरो देह छार ह्वै निवटी। तुव मन मैं नव पल्लव प्रगटी।
पुरिष मरत त्रीय पुपरि मरही। पैं त्रीय ऊपरी पुरीष न मरही ॥२५१॥

मालती वाच : सोरठो

पुरिष प्रेम बसि होय त्रीय तौ परगंचै गहो।
देषी सुनी न कोय नागबेलि संडप छुटी ॥ २५२ ॥

[मधु वाचः] चौपई

मधुकर वचन सुने जब अैसौ। उत्तर देय मालती कैसौ।
पुरिष कहै सो सब त्रीय सहियो। पैं त्रीय वानी कठोर ना कहियो॥२५३॥

मालती वाच :

नव षंड सपत दीप मैं भटकी। निस वासुरि कबहौं ना अटकी।
अज पुरिय षोजन हुप पायो। पैं काहु नहीं षोज बतायो ॥२५४॥
ज्यौं निस उडगन चंद विहुनी। फुलवारी चंपक विन सुंनी।
रुति बसंत पिक बिन नही नीकी। बरिषा बिन दांमनि ज्यैं फीकी ॥२५५॥
सेनि सुभट है अरु निप नाही। सरवर जल द्रुम बिन ज्यैं पांही।
मंनि जैसैं कंचन बिन सुनी। अैसी त्रीय है कंत विहुनी ॥२५६॥
मालती करुना करि ज सुनावै। वे अलि मधु की बात न पावैं।
अब हुं निहचै प्रांन गंमाऊं। तुम विवोगि कैसे सुप पाऊं ॥२५७॥

जैतमाल वाच :

अब के मधु तु और ज कहि छुहै। सुंनत मालती अब मरि जैहै॥२५८॥*
सबै सयानप जैहे तेरी। मधु तू मांनि बात सब मेरी।

[मधु वाच :]

मधु जंपै तुव वचन न धरिहौं। फुनि त्रीय सेती प्रीतिनकरिहौं ॥२५९॥
जीयते तजिहौं सति न मेरौ। करिहौं जैत कहां लग केरौ ॥२६०॥†

जैतमाल वाच :

पूरिव नेह ग्रेह चित दीजे। येह वात कौ विरंम न कीजे।
ऊषां अनुरुध भई गति ज्यैं ही। गंध्रव व्याह करौ तुम त्यैं ही ॥१६१॥

---

* इस छंद मे प्रति में एक ही अर्द्धाली है।
† इस छंद मे की प्रति मे एक ही अर्द्धाली है।

मधु वाच :

पूरिबली बीती को जांने । अब तौ नृपति वंनिक की ठांनैं ।
लरक बुधि जौ तीय मैं धरियो । तौ इन वातन ही सुप भरिये ॥२६२॥
सुनि राय छिनक मैं मारे । काहे कों यह बुधि विचारे ।
विगरे मतें वसीठ ज करिहो । साप चतुभरि की गति परिहो ॥२६३॥

मालती वाच :

ऐसे वचन कौन बुधि भापैं । मो कुं ते सु मोन ही रापैं ।
पुरिव प्रीति जौय चित धरिये । तौ मरिबे तैं नाही न डरिये ॥२६४॥
यौं ज परसपर वौहत जगायो । हारि जीति कोऊ न अवायो ।
जा पीछे बोलियौ वानी । पंवन देवता सति वपांनी ॥२६५॥

सोरठौ

मालती सई न नारि मधुकर सौ प्रीतम नही ।
पवन सुनावै टेरि सत्ति सत्ति जानौ सवै ॥ २६६ ॥

दोहौ

पवन कहै मधु मालती कोऊ घटे नही लेप ।
मसि काजल ऊपरि चढी इहै पटंतरि पेपि ॥ २६७ ॥

चौपई

यौं करि पवनि कही सति वांनी । तव मधु रीस मिटी जिय कांनी ।
पुरिव डरि मनको भ्रम भागौ । मालती वदन देपने लागौ ॥२६८॥
मधु मालति तुप मांझि निहारी । पढि तव मंत्र मोहनी डारी ।
जैतमाल तव यंत्र ज कीनौ । मधु तव ऊतर निठि से दीनौ ॥२६९॥
तवही मालती रूप लुभांनो । रुति वसंत पायक पिक मांनौ ।
नर अति आप सयांनप धारे । सगरे जग कौ जीवत वुवारे ॥२७०॥
करता कैहि ठाहर अव गारे । अंति ही आय त्रीया पैं हारे ।
जा पीछैं वंन मधु कों कहौ । त्यैं तों ही मधुचित मैं चहौ ॥२७१॥
कीनौं वौहत मोल विन चाकर । पुनि कीनौं वाजीगर सांकर ।
मालती के मधु रस वस हुवो । तव मालती विचार यह कीयौ ॥२७२॥

दोहौ

परसौं मधु केतनिहि तंन करौं सुरत सुष केलि ।
हैं तन मांहे बिरह सर सो षोवुं अव मेलि ॥ २७३ ॥

चौपाई

मधु तौ सब विधि चतुर विनांमी। मालती मनहि बात सब जांनी।
तब मधु वन प्रति यौ वच रई। विना व्याहि त्रीय भोग न करई ॥२७४॥
त्रीया कवारी भोग करै नर। ता समान पापी नाहिन धर।
जैतमाल सुंनि करि यह वानी। कहै ज व्याह करौं तुम ठांनी ॥२७५॥
लीनौ लगन वेद विधि जबही। करे नेवटा सब विधि तबही।
कंकन कर अंचर गहि वंध्यौ। टुटौ मन फेरि कै संध्यौ ॥२७६॥
रच्ये कलस जहां अंबज केरो। मधु मालती फिरायौ फेरौ।
मंगलचार जैति ऊचरई। दोऊ मनहि मांहि सुष धरई ॥२७७॥

दोहौ

वन्यौ विवाह मधुमालती सुरभी अति सुष होय।
फुनि विसतर बाढै कथा चित दे सुनियो सोय ॥२७८॥

सोरठो

गंध्रप भई विवाह करि कै मधु अर मालती।
विलसन लागे भोग मोद मांनि जीय रैनि दिन ॥२७८॥*

चौपई

रास सरोवर के ढिग भारी। विलसन लागे सुष नर नारी।
जीवन सुफल मालती मान्यौ। सुष मैं यौ तन मन जव सान्यौ ॥२७९॥
गति होती सो सुग मंझारी। भई आंनि सो अब नर नारी।
वै समये की सुष की वातैं। कहि नही आवन मेरैं गातैं ॥२८०॥
सुष मैं बीते दिन दस जांही। विसरि गये सब ही गति ताही।
जा पीछै सरवर कौ माली। आयौ ढुढन कौ फुलवाली ॥२८१॥

दोहौ

माली कुसुम न कारनै गयौ जहां दोऊ मिंत।
ढुरे निरषि मधु मालती माली भयो सचिंत ॥२८२॥

चौपई

माली मन मैं तबै विचारा। कहत हुते ज नंगर मधि सारा।
राज कंवारी गुंन निधि होई। छलि लै गयौ साह सुत सोई ॥२८३॥

---

* प्रति मे संख्या दुहराई हुई है।

जे ये सरवर रहे लुकाई। कहिहै जाय बेगि दुराई।
आतुर तैं माली तव आयौ। जाय तवै न्रिप कुं सिर नायौ ॥२८४॥
कहन लग्यै नर के भुवारा। वतऊ तोहि कंवरि के जारा।
मै दीठे सरवर के मांही। घमडि रही फुलवादि जहां ही॥२८५॥
मंत्रीसुत अर राज कंवारी। दिन दस वीते वन सुषकारी।
करैं केलि कछु संक न धरई। मौपै तै कछु कही न परई ॥२८६॥

दोहौ

जिती जाति संसार मैं तिन मैं माली सोय।
मति धीजौ कोऊ चतुर नर निहचै अति दुष होय ॥२८७॥

चौपई

सुनत राय अति ही ज रिसाई। कनक माल रानी पैं जाई।
करि कैं लाल क्रोध स्यै नैना। बौल्यै औं बिधि के तव वैंना ॥२८८॥
सुनी वात कंन्या जुत केरी। नांक कुंपली षोई मेरी।
मंत्री के सुत स्यैं मिलि जोई। करी केलि सरवर मैं सोई ॥२८९॥
अब धहुंनंन नै मारि वहांही। कीजे धरनि मांहि कर कांही।
कंन्या वदर परौ जिन कोई। सुष चाहै ज तहां दुष होई ॥२९०॥

राजा प्रति राणी वाच:

कंनकमाल बोली तब राई। भली भई ज कंवरी सुधि पाई।
अब हुं कहौं सोय तुम कीजे। मारन कौ तौ नाव न लीजे ॥२९१॥
अब तौ हुनी नाहिन होई। मारि र षोवो अब कौं दोई।
अपजस होय पाप सिर चढ़ई। सो नरनाथ भूलि मति करई ॥२९२॥
दहुंन कौ इत पकरि संगायो। मांनि वचन औसैं ज बुलावो।
न्रिप कौं वचन कहे त्रीय जोई। मांन्यौ नाहिन तासै कोई ॥२९३॥
तवही राय कियौ हंकारौ। मधु मालती दहुंन कौं मारौ।
जाको पुत्र ताहि भी ल्यावो। पगां जंजीर घालि दुष द्यावो ॥२९४॥
न्रिप के वचन येह सुनि रांनी। वोलि लई येक सषी सयानी।
राय सरोवरि हैं दोऊ भौरो। वेगि जाय करि कहौ निहोरो ॥२९५॥
मधु मालती दहौन स्यैं कहियौ। पहली ठौर वेगि तुम तजियौ।
राय दुत पठये तुम मारन। आई वेगि ईहे सुनि कारन ॥२९६॥

गई सपी जित कंवरि कंवारा। कहियौ सकल राय व्यौहारा।
सुनंत मालती अति बिलषांनी। मधु के कंठि दौरि लपटांनी ॥१९७॥
हाय हाय करि वोह विधि रोई। वौहत धकधकी तन में होई।
करता कौन पाप हम कीयो। सुष मेटि र दुष बहुते दियो ॥१९८॥
दीन वचन बोल्यौ मधु जबही। सें ग कर्‍ा सो भई ज अबही।
मांनी नही सीष कोउ मोरी। तो अब वोत दुष पैहे जोरी ॥१९९॥
कहौ अवहि कौन मति कीजे। सिर परि आय परी ना जीय जीजे।
तुम अपने मनि धीरज धरई। हम नृप सेती निहचे लरई ॥२००॥

मालती वाच :

मधु मेरी विनती चित धरिये। नृिप स्यौं जुध कहां लगि कीये।
चहु वोर जुझ तव परिहे। विन आयुध तुम कैसें लरिहै ॥२०१॥

जैतमाल वाच :

मेरी बात कानि मधु दीजे। ओहि ठाहर केहि नीर न पीजे।
चढि तुरंग अब बिलम न कीजे। चलौ जहां सुप तैं जित जीजे ॥२०२॥

मधु वाच :

सोरठो

अब तो कितै न जांह रहि यां इत ही जैत सुनि।
लै गिलोल कर मांहि तुम धीरज मन मैं धरो ॥२०३॥

मालती वाच :

मधु तुम बुरौ आपनौ करिहौ। हा हा करूं म्रित विन मरिहौ।
मैं तौ तुंम नठि नठि करि पायो। ताहु मैं ऊपजी यह भायो ॥२०४॥
तबही मालती विनती करिही। पारबती पति स्यौं कर जुरई।
श्री हर अब के याहि ववारौ। तुम उदार हौ परम उदारौ ॥२०४॥*
ज पाछे मधु मतौ उपायौ। चढ़ि तुरंग भाजन कौं धायौ।
अतना मैं नृिप के दल सब ही। आये मारन मधु कौ तब ही ॥२०५॥
मालती धोरे चढ़न न पाई। मालती लई पकरि निप आई।
मधु तुरंग चढ़ियौ ही देषै। मन मारै विचार यह पेषै ॥
तौ मरिबौ निहचै होई। जावुं तौ अब प्रीति न कोई ॥२०६॥

---

* संख्या प्रति मे दुहरा उठी है।

दोहौ

मंत्री उदरथें जानिकैं हरषे सब नर नारि ।
तारन सम मंत्री भयौ नाहिन जगत संसारि ॥३२०॥

मालती तबै महल मैं पठई । कनक मान रानी जित रहई ॥
नैन मूंदि मुख रही झुकाई । मालती जीय वांहूंत जल जाई ॥२२१॥
कनकमाल सनमुख तब धाई । कर गहि कन्या उदर सैं लाई ।
तू है मेरी प्रान पियारी । जिन दरपें अब होय कंवारी ॥२२२॥
जैतमाल स्यैं कछुक कहियौ । ऐसौ मत करन क्यौं दीयौ ।
जैतमाल जब उत्तर दीनौ । कहा करूं मधु छून रस भीनौ ॥३२३॥
जा पीछें नृप भी उन धायौ । रानी प्रति यौं सबद सुनायौ ।
ढील न करौ मालती व्याहन । फिरि श्रौ जु हैहै अरि चाहन ॥३२४॥
रानी कहै भलो कोउ दीजे । निृप अब नाही विलंब न कीजे ।
जो कोऊ मालती सम होई । ताही कौं परणावौ सोई ॥३२५॥
राजा ऊठि श्राइ इयौ जबही । स्याम पिरोहित बुलायौ तबही ।
जावो सोधौ निृप के बालक । मालती सम जो होय कपालक ॥३२६॥
माल दोय ढूढे निप सबही । श्राप कहे नाम निृप तबही ।
चंद्रसेनि रानी प्रति कहिये । मालती कहै सोई वर बरिये ॥३२॥

कनकमाल उत सैं चली जहां मालती बाल ।
कहन लगी मन मानवौ सो वर बरौं रसाल ॥३२८॥

सुनि मालती बोलई नाहीं । उपजी लाज देह के माहीं ।
सुनि रानी बोली तेहि बारा । कहौं पुत्रि समझि र निरधारा ॥३२६॥
मालती कहै सुनौ वर माई । कैसैं कहौं दोय बिधि श्राई ।
येक लाज उपजैं ही प्रासैं । दूजी श्रौर जीय सैं भासैं ॥३३०॥

राणी वाक्य :

सो तेरे जीय माहि जो मोकूं कहि मालती ।
मेरे तू है प्रान ज्यै उपाय वेगी करौ ॥३३१॥

मालती वाक्य :

मेरै मनि तौ श्रौर न कोई । मधु जीय माहि रहै बसि सोई ।
वा मूरति नैना बिन देषैं । जीवन जनम गिनत ज अलेषैं ॥३६२॥

जौ वर वरौं तौ मधुकौं वरिहौं। नातर दुप दौहते भरि मरिहौं।
और कहा कहि मात सुनाउं। तुमही तें मधु वर कुं पाउं ॥३३३॥
सुनि कैं वचन धीय के रानी। मन माहैं ज कछुक मुसकानी।
रानी कहै मालती वारी। ऐसी बात मनें क्यों धारी ॥३३४॥
वरिनै कोई राज कुंवारौ। सो तुम वड़कों होय उजारौ।
वाणिक वरे कहो कित वारी। जिते जगत मैं राजकंवारी ॥३३५॥

और बात जानूं नहीं सुनि माता निरधार।
ऐहि तौ जनमि भयौ सही मधु वानिक भरतार ॥३३६॥

मारौं पिता मोहि किन अब ही। मधु विन वरौं न निहचै कबही।
ऐहिं तौ जनम दुरैं भरतारा। जिन ओगाई सरोवर पारा ॥३३७॥
कनकमाल रानी उठि आई। चंद्रलेनि कौ यौं ज सुनाई।
मालती मो कुं कछू न वोलै। मुष लजाय कीयौ अंचर वोलै ॥३३८॥
चलत कह्यौ मेरौ मन मान्यौ। वरन वरे नृप परौ सयानौ।
राजा और त्रीया परवारी। लई बुलाय तहीं ततकारी ॥३३९॥
सब त्रीय जाय मालती कहियौ। वरनै वरौ आप मन चहियौ।
सुनत वचन त्रीय उततैं चलई। जहां मालती महल ज अठई ॥३४०॥

सकल त्रीया मिलि आय कह्यौ वरौ वर मालती।
जो इन में मनि चाय बड़े देस के छत्रपति ॥ ३४१ ॥

मालती वाचः

कहे बड़े नृप जोय मेरे मनि मानें नहीं।
मधु चित रह्यो सजोय काहि पुकारूं किन कहूं ॥ ३४२ ॥

कहौ राय प्रति जाय मधु विन दूजो ना वरौं।
कोटिक करौं उपाय ना तर यह देही तजूं ॥ ३४३ ॥

सुनि कें नारि मालती केरी। हंसी सकल कर दे कैं तेरी।
परस परस सब कहत लुगाई। देषौ मालती की वौराई ॥३४४॥

हसि हसे पर की सबे जाय कहै नहीं कोय।
इहै जगत की रीति है जिन चित जानौ सोय ॥ ३४५ ॥

कहैं नारि मालती कंवारी। कौन बात तैं कही गंवारी।
हम जानें तू चतुरी होई। समझि बात कहै किन सोई ॥३४६॥

जौं मधु कौ जौं नाम न लीयौ । ताकौं भूलि गई दुख दीयौ ।
जौं तुम मधु सौं ब्याह कराई । तौ नृप कूं कौ दंग भलाई ॥२४७॥
वनिक पुत्र वंश कछुं न हीनौ । तैं आपनै मनि नाहिन चीन्हौ ।
छांडि कुबुधि वरौ नृप सुत कौं । जुगतौ भोग सकल विधि वितकौं ॥२४८॥

मालती वाक्य :

लिख्यौ भाग कौ होय दुख सुख सौं टारै नहीं ।
मधु बिन निहचैं भोग करूं नाहि त्रिभुवन धनी ॥ २४९ ॥
परण्यौ पाई कौन दूजै कौं परणा नहीं ।
यह जानौ सब लोय दुखी आगागि वनिक घरि ॥ २५० ॥

नारी वाक्य :

भई बरस षोडस तुम बारी । कहि परणी हम कूं कहि भारी ।
असी बात बालक प्रति कहियें । हम सब दिन कूं कहि क्यौं दहियें॥२५१॥

जैतमाल वाक्य :

मन लागें दोइ दिन भयौ परणया मास ज दोय ।
सुनौ नारि चित दे सकल सरवर निकट ज सोय ॥ २५२ ॥
मालती कैं मनि और नि भावै । वे फिरि फिरि कहि मन ललचावै ।
जिती कहै सोई नहीं मानैं । मालती मधु की बात न जानैं ॥२५३॥

जैतमाल वाक्य :

तुम न करौ हठ नारि सयानी । मधु मालती मेल हरि बानी ।
मधु तौ है गंध्रप अवतारा । जानौ कहौ बनिज कंवारा ॥२५४॥
मालती गंध्रपनी वड लोई । भयें स्राप इत प्रगटे दोई ।
मालती कह्यौ सति तुम मानौ । हूं याकै जीय की सब जानौ ॥२५५॥

वचन कहे ये जैति सुनि करि नारी सकल ही ।
फिरि बोलीं नहिं सोय अचिरज मनमाहीं भयौ ॥ २५६ ॥

तबहीं गईं सकल उठि नारी । चंद्रसेनि नृप जाय जुहारी ।
नारी कहैं सुनौ भूवारा । मालती तौ कछु मूंढ़ विचारा ॥२५७॥
कहै बिना मधु नाहिं न बरिहौं । नातर निहचै करि हूं मरिहौं ।
असी नाहि हठीली देषी । हम तौ और कंवरि भी पेषी ॥२५८॥

राजा सुनि कै अति दुष पायौ । हमरौ सब मालती गंवायौ ।
पहली तौ वह क्रम ज कीनौ । अब भी ब्याहन वह चित दीनौ ॥२५९
अब तौ नाहिं न कोय उपाई । विस दे मारि गेरिजे जाई ।
यह मन मैं न्रिप मतौ उपायौ । रानी सुनि न्रिप प्रति फिरि गायौ ॥२६०॥
मारें कन्या कूं न भलाई । राषौ महल माहिं दुराई ।
जाहि बुराई तैं ही डरिजे । मार्यां कन्या सोभा लहिजे ॥२६१॥

कनकमाल के वचन सुनि मालती महल मंझारि ।
राषी बौह विधि गाढ़ तैं संगि सषी दे चारि ॥ २६२ ॥

अब सुनिज्यें मधु की गति सोई । सखा छाडे पीछें होई ।
जाय बस्यौ दस कोस कहौंही । रह्यौ सकल निस औार दिहौंही ॥२६३॥
चलत चलत दिन दस मधि भइयो । नींद भूप दुष देह सहीयो ।
दुरबल देह ह्वै गई भारी । सुधि करि रोवै मालती वारी ॥२६४॥
मधु तब वेगि मधुपुरी आयौ । देषि पुरी दुष दूरि गंमायौ ।
कीयौ घाटि विस्रांति सनांना । असु कहु ब्राह्मणि दीनौ दाना ॥२६५॥
द्वायर के सब देव जुहारा । करी परकरमा बौह विधि धारा ।
होली द्यौस भयौ उत जबही । बौह विधि पेलत देषे नर ही ॥२६६॥
चतुर लोय लोग मधु देषें । चतुर राय कल्यान ज पेषे ।
रह्यौ द्यौस दस पंच वहां ही । पायौ दुष पाछिलौ तब हांही ॥२६७॥
वड साधन कौ दरसन पायौ । सुन्यौ कीरतन मधु मनि भायौ ।
जेई देषत मधु कौ नैना । तेई कहत नारि यौं वैना ॥२६८॥
कोई है यौ राज के वारौ । तजि कै आयौ सब व्यौहारौ ।
रुति वसंत ता पाछैं आई । मधु श्री व्रिदावन कौं जाई ॥२६९॥
देषी भूंमि जहाँ सुषदाई । रतन जरित मानौ ज बनाई ।
भांति भांति के व्रिच्छ जहां ही । फल फूलन तैं रहैं लुभाहीं ॥२७०॥
बोलैं कोकिल चात्रग मोरा । घमडि रह्यौ मोहन मन सोरा ।
जमुनां बहै लयें छवि भारी । व्रिदावनि मानौ माला धारी ॥२७१॥
क्रस्न केलि के ठाव जहांही । निरषत सुष पावै ज वहांही ।
कुंजन की रचना जित बनई । ब्रह्मादिक जाकौ मनहरई ॥२७२॥
मधु देषिर हिरदा के माहीं । फूलै अंगि अंग मैं जहां हीं ।
राम सरोवर विचर नहारौ । व्रिदावनि जब यौं जनिहारौ ॥२७३॥

जहां तहां मधु देषत डोलै। काहु तैं कछु नाहिन बोलै।
भोजन हरि द्वारें करि पावें। कथा कीरतन तहीं सुनावें ॥२७४॥
मधु तो जनन आपनों जैसें। पोषन लागौ सुष मैं ऐसें।
पूछियतो फल कोऊ जान्यौ। तातें मधु ब्रिज दिस कौं भाग्यौ॥२७५॥
येक द्विना पुरान कछु होई। दसम सिकंद भागवत सोई।
सब पुरांन माहीं ततसारा। जानत है जे जाननहारा ॥२७६॥
जासें क्रस्न चरित ही गुनियें। और कथा नाहिनें सुनियें।
मधु बैठो उत जाय तहां ही। सुन्यें चरित रस केलि जहां ही ॥२७७॥
राधा क्रस्न प्रीति इम होई। बिचरे श्री ब्रिंदावन सोई।
ऐसी प्रीति और ना कोई। तैसी क्रस्न राधिका सोई ॥२७८॥
मधु सुनि यौ प्रीति ज निरधारा। तब चित करी मालती कंवारा।
कथा महारस होग र निबहो। उत तें मधु चाल्यें उठि तबही ॥२७९॥
गयौ जहां द्रुम बौह बिधि होई। बौहत सघन अति रस में सोई।
ढुंढत ब्रिच्छ मालती केरौ। प्रतना में है गयौ अंधेरौ ॥२८०॥
रैनि भयौ उतही तब रहियौ। तब भी सकल द्रुमन मैं चितयौ।
अरध निसा जब बीति रजाई। जब कहौं भवंर बड़े दरसाई ॥२८ ॥
जान्यौ ये अभंवर घर तेरा। बिन मालती नाहिनैं सबेरा।
गयौ जहां जित भंवर ज देषी। तहां सही मालती सेषी ॥२८२॥
डाल नही ते मिलियौ भारी। जैसैं अंक माल नरनारी।
रह्यौ मास येक लौं जित ही। पायौ मधु सुष बौहतै तित ही ॥२८१॥*
वहां भई कछु हरि की बाणी। मधु तु जाहु देसि परवाणी।
मधु के सुनि चिंता मनि हुवो। जीनन कौ हरि दीनौ हुवो ॥२८२॥*
सुष की ठौर रह्या मन लागौ। तातैं मधु उत ते ना भागौ।
ऐसैं मधु ब्रिंद्रा वनि माहीं। रहियौ जीय सकल सुष पाहीं ॥२८३॥

श्री ब्रिंदावन विचरियौ मास तीन मधु सोय।
पल पल मैं सुष माधवा जहां अमित सुष होय ॥२८४॥

श्री ब्रिंदाबन तैं मधु चलयौ। जिहचै तबै महादुष पइयौ।
कछू ध्यान हरि कौ चित चाही। राषन लागौ मधु मन माहीं ॥२८५॥
उत तें चलि गोबरधनि गइयौ। गिरधारी कौ दरसन पइयौ ॥
सात राति उत बस्यौ लुभाई। देषि महा छबि अति सुष पाई ॥२८६॥

---

* संख्याएँ दुहरा उठी हैं।

औरन के मुष ही की बाणी। गावत सुनै महारस जाणी।
तव मधु भी हरि के गुन गावै। होरा होरी जनम सिरावै ॥३८७॥
जित तित क्रस्न केलि ब्रिज माहीं। मधु देषी र जहां अति सुप पाहीं।
जान्यौ मनक्कैं अति ही रहियौ। परि परालब्ध वास मधु चित चलयो॥३८८॥

परालब्ध ही होय मन चाल्यौ कोटिक करौ।
मधु चित रह्यौ ज सोय सोय ब्रिंदाबनि ना रह्यौ ॥३८९॥

ब्रिज तजिकैं मधु फिरियौ जितही। पूरिब दिसि धरि हुतौ ज तितहीं।
कोस आठ लग दिन मैं चलयौ। पंथी संगि बिना ना हलयौ ॥३९०॥
मन मैं चंद्रसेन नृप केरौ। आनै डर मारन बहु बेरौ।
चलत चलत दिन चारि ज बीते। कोस तीस अवनी द्वै जीते ॥३९०॥*
ब्रत मैं हुतौ येक द्रुम जितही। पीपलौ नांव बड़ौतर तितही।
जहां दीयौ मधु आय र डेरौ। सूतो रजनी भयें अंधेरौ ॥३९१॥
गरड़ पंछि जित रहै सदा हीं। पुत्रन सहित सकल बिधि ताहीं।
निति षबरि सत जोजन ल्यावै। सो आय र पुत्रनै सुनावै ॥३९२॥
ता रजनी मधि ऐसैं तिज दाष्यौ। गरड़ पंछि पुत्रन प्रति भाष्यौ।
सुनौ पुत्र येक वचन ज अजही। वड़ौ भयौ अनरथ येक कितही ॥३९३॥

बोले पुत्र सबै तबै गरड़ पंछि के जाय।
बड़ अनरथ कितही भयो कहौ बेगि तुम माय ॥३९४॥

गरड़ पंछि वाक्य :

लीलावती नगर कौ राजा। चंद्रसेनि तसु नांव विराजा।
जाके हय दल अंत न पारा। जीते ताहिन सब संसारा ॥३९५॥
पुत्रहीन जाके को घरनी। कन्या येक सुनी बड़ वरनी।
छार मासि के अंति ज सोई। भरे पर जित नृप दोई ॥३९६॥
येक पषि तौ इहै ज कहियौ। दुजै पषि करनौ नृप रहियौ।
कांकड़ मधि जुड़े रिस भरिकैं। कहैं आप मैं देस्यां भरिकैं ॥३९७॥
चंद्र सेनि की भीड़ ज सबली। करम नृपति की फौजै निबली।
छूटन लगे जंबूर हवाई। करनि राय देवी तब ध्याई ॥३९८॥
देवी सिंघ चढी तब आई। मारयौ चंद्र सेनि नृप जाई।
तोरो मूड़ चक्र की धारा। और सकल दल मीज सिंधारा ॥३९९॥

---

* संख्या दुहराई गई है।

बोहेत भांति उपदेस नरिता दीनौ न्रिपबधू।
तब कछु समझि बसेषि रोवन तजि सत ही गह्यो ॥४४१॥

मंत्री बचन सुने करि जबहीं। राणी ग्यान धर्‌यो मनि तबही।
चंदन पीपल काठ मंगायौ। तासैं वीरल सुगंध मिलायौ ॥४१६॥
तीन त्रीया अर चौथे राई। ससम होय येकत्र रहाई।
मंत्री फिरि अपनै घरि आयौ। नगर माहि न्रिप सोक जनायौ ॥४१७॥

हय गज चढ़ि त्रीय भोग की रहतौ अति सुष मानि।
माधव अैसे न्रिपति की यह गति भई निदानि ॥४१८॥

स्रग रसातल भुव कौ निस दिन भुगतै राज।
बिना भजन ही माधवा कोई न आवै काज ॥४१९॥

गरड़ पंछि पुत्रन प्रति बातैं। कही सकल न्रिप बीती गातैं।
फिरि के पुत्र कहैं तैंहि बारा। माय सुनो येक कहौ बिचारा ॥४२०॥
चसौ न्रिपति अर पुत्र विहीनौ। ताकौ राज कुंन कौं दीनौ।
करौ हमैं सोई निरधारा। हम हैं तेरै बालक प्यारा ॥४२१॥
गरड़ पंछि बोली तब उनसैं। सुनौ पुत्री वाभी हुं गुनिस्यौं।
अब ताईं तौ सोक मंझारी। बैठे नगर सकल नर नारी ॥४२२॥
क्रिनै और भी राजन लीयौ। नाहिन उन मिलि न्रिप को कीयौ।
कातिग मास दिवाली होई। करिहैं ना दिन मतौ ज सोई ॥४२३॥
अरध राति बीतैगी जबहीं। न्रिप के लोग मिलैंगे सबही।
नगर नाहिं जित पैस न होई। बैठैंगे सब मिल करि सोई ॥४२४॥
जो आवैगौ जित करि कोई। भावै तिसौ मनिष को होई।
जाहि तीलक देंगे पुरबासी। ह्वैहै न्रिपति महा सुषरासी ॥४२५॥

गरड़ पंछि तौहि काल सत्ति बचन अैसैं कहै।
मधु नीचै चित लाय सुनी कान दै वात सब ॥४२६॥

मधु के सोच मने मनि भइये। अब उपाय कुन्न विधि करिये।
चंद्रसेनि गति अैसी भई। हम दुष देजैं हि दुष दे दई ॥४२७॥
करता न्याव नाहिनैं करै। तौ सब लरहै निबलहि मरै।
हम त्रिप कौ ना महल जोड्यौ। नाहिन द्रब कनक कछु चोड्यौ ॥४२८॥

और नाहिनै कहीं पिछान्यौ। मालती देषि र मधुही जान्यौ।
जाकै मनि जो सदा रहाई। सो नीकां देषि र दरसाई ॥४४४॥
और सबै नर मधु कौं भूले। मालती के मन माही फूले।
तातै उणि नीकां जा पिछान्यौ। और लोगि काहू ना जान्यौ ॥४४५॥
मालती मन मैं यौं ज कराही। करता मधुही होज्यै याही।
मो अभागनी कौ को नाहीं।तुम बिन नाथ सत्ति करि गाहीं ॥४४६॥
मधु सिंघासनि आणि बैठायौ। चंद्रसेनि के महल सुवायौ।
छैत्री ब्राह्मण बाणिक तबही। आय र सूता घरि घरि सबही ॥४४७॥
मालती हु तब ऊतरि आई। जैतमाल तैं वचन सुनाई।
हे सषी महा तोहि परवीनी। तु कछु जानत जो हरि कीनी ॥४४८॥
जाके बिरह भरैं दुष भारी। सो मधु नृपति लोचनां निहारी।
जो या बात सत्ति करि करिहै। तो हम काज सकल ही सरिहैं ॥४४९॥

चंद्रसेनि के महल मैं पौढ़ायौ है सोइ।
जाय लगी तुव देखनै जो निहचै मधु होइ ॥४५०॥

जैतमाल तब ऐसैं कहियौ। मधु तौ भाजि कहूं ही गईयौ।
ऐं मौसरि मधु भाग बिहूनौ। मालती कित आवत वह दूनौ ॥४५१॥
ये ते लोग मिले छै सोई। तामैं थिणि तौ आज्यौ होई।
तौ को मधु सब दीसत नैंना। बौरी होय काहि सुनि बैनां ॥४५२॥

भई छींक तेहिं बार ऐसे बचन करे सषी।
मालती मनै बिचारि बोली फिर कै जैति स्यौं ॥४५३॥

कहै मालती जैति सयानी। कहै छीक सो कहि न जानी।
मेरे निहचै मनि मधु आवै। तू मो कूं क्यौं नै ज कुटावै ॥४५४॥
मेरौ कह्यौ मानि क्यौ न जाई। देषिर नैंना सबै पताई।
मालती बचन कहै जब ऐसे। जैति चली देषन कौं जैसे ॥४५५॥
गई जहां मधु सूतो होई। आसि पासि चौकि जित सोई।
निद्रा वसि ते भये सकल हीं। जैति नृपति मधु निकट ही लिबही ॥४५६॥
मधु अंचर मुष ऊपरि देई। पौढ्यौ सुष मैं राज ज लेई।
नप सिष लौं तब जैति निहारै। मुष देषौं जो बदन उघारैं ॥४५७॥
बिन मुष दीठां नाहिं न जोई। ना जानौ कोई और ही होई।
घरी दोय लग ऊभी रहई। जैति बिचार आप मन करई ॥४५८॥

मालना मैं भेद बिषहर भारौ । भागौ जन सिर मैं नहिं धारौ ।
जैति निरखि तार्की औ नैना । मुरछ्या अंग गदाल थिति चैना ॥४५९॥
सखौं पकरि मूर पकि आयौ । धीमैं करि मधु करट निवार्यौ ।
भा पीछे दूर गैंसी जरस्यौं । दूरि भीगो अंचर सुग परिस्यौं ॥४६०॥
मधु मूरछि नैना उघराई । देख्यौ बदन सदा सुखदाई ।
जैति निरखि मन चैन न होई । जान्यौ मधु जिननैं वह सोई ॥४६१॥
कहन लगौ मन मैं नहिं धारा । भखि बदा फिरौ करतारा ।
जिन मधु मालती फेरि मिलानी । ऐसी विधि करि मद नहि ठानी ॥४६२॥
तातू ना पाऊँ नैन उजारा । जैतमाल निरखी नहिं बारा ।
मधु कातर मन माहिं होई । कब मिलिस्यैं मालती जोई ॥४६३॥

निरखि जैति कुं उठियौ मधु पल माहि संभारि ।
मिलियौ जाने भयौ चतुरि अंक माच को प्यार ॥४६४॥

जैतमाल वाक्य :

मधु भागि हमारे आयौं । देख्यौ दई ज पेल बनायौं ।
पूछियत्यौ अंजोग न होई । मेटि न सकै नाहिनैं कोई ॥४६५॥
पहली तो तुव भाजत डोल्यौ । मालती तो सुने मज बोल्यौ ।
पाछै सरवर के मंझारा । मिले करे के बौह परकारा ॥४६६॥
चंद्रसेनि मारन कौ धाई । तब तुम भाजि कहां ही जाई ।
अब ऐसी गति विधना ठानी । नृपति भये तुम इत ही आनी ॥४६७॥

मधु मालती कवारि विलविलात ही दिन गयौ ।
भूली सकल संभार तेरे देषन कारनै ॥४६८॥
मालती को नृप सोय व्याहन औरे कहि रह्यौ ।
मूड़ पटकि सिर फोरि तोऊ मधु तू ना तज्यै ॥४६९॥
मालती को सो नेह कलि मैं कोई ना करैं ।
जनमत मधु स्यौं हेत और न कोई चित धरयौ ॥४७०॥

मधु वाक्य :

तैं तौ जैति सकल ही दापी । परि मेरी बात नाहिनैं आपी ।
मालती कौ तैं हेत निबाह्यौ । मेरौ हेत नाहिनैं चाह्यौ ॥४७१॥
मालती तौ सरवर सैं जबही । आई फौज राय की तबही ।
मों कुं जाहु कहे बौह बैनां । मैं तब उतरी कह्यौ ज रैंना ॥४७२॥

आपरि कहि कहि संगति भजायौ । ऐसौ नेह कराही गायौ ।
हुं तौ भाजि गयौ व्रिज मांही । जहां परम सुप हरि रस पाहीं ॥४६३॥
उतहु मालती व्रिछ ढुढेर्यौ । रह्यौ बहुत दिन ता ढिग नेरौ ।
पाछैं चलि उत कौ हुं आयौ । सो मेरौ रेत नाहिने गायौ ॥४७४॥
यौं करि और घरी द्वै बीती । जैतमाल मधु तैं ना जीती ।
चारि घरी मैत्रि पति कुंवारी । दुप पायौ अति मौन मझारी ॥४७५॥

आग्या मधु की लेय जैत माल उत तैं चली ।
आई मालती जेत कही पवरि सब तास कूं ॥४७६॥

सुनि कै मधु की बात कंवारी । करन लगी सोलहो सिंगारी ।
बसन अमोलिक अंग पराहीं । राजित मानौ ससि की छाहीं ॥४७७॥
नप सिप लौं आभूषण पहरे । होते रतन कनक के जहरें ।
सोहन लागी अति छबि जाकी । कहि न सकुं उपमा हूं ताकी ॥४७८॥
चंदन और सुवास लगायो । महल माहिं सब ठैंध भडायो ।
मधु लग तबै वास वह जाई । जान्यौ मधू मालती आई ॥४७९॥

यंद्र वधू सम मालती सजि कै चली सिंगार ।
अति आतुर तें पग धरत मिलिन हेत भरतार ॥४८०॥

मालती जाय कंठ लपटानी । जनम सुफल आपनौ मानी ।
हो पीव तुम विन मो दुप भारी । भयौ सोय जो नाहिंन पाई ॥४८१॥
अब जौ तें मोहि दरसन दीयौ । तौ मैं जान्यौ अपनौ जीयौ ।
मेरे प्रान बसे तुव माहीं । जैसे अगनि काठ ही पाहीं ॥४८२॥
को ईक दिन जौ औ जु रहती । तौ हुं तम विन निहचै मरती ।
करता कीयौ आपनो लेप्यौ । प्रीति हमारी कांनी देप्यौ ॥४८३॥
सुनि मधु वचन मालती केरा । चुंबन लागौ वदन रसेरा ।
प्रफुलित कुसम सेज पर बैठे । रस बस करन लगे मन तेठै ॥४८४॥
मिलि या तरसि तरसि तन दोई । बौहत दिन तैं सुप अति होई ।
मन के कीये मनोरथ सबही । हूं न लग्यै परभात ज तबहीं ॥

हून लग्यै परभात जैतमाल तब यौं कह्यौ ।
भवनि चलौ तजि प्यार रहन नाहिं अब मालती ॥४८६॥

मालती मधु तें मिलि सुप पाई । वदिही और महल मैं जाई ।
मालती कें जदि आनंद आयौ । सो काहू मैं जात न गायौ ॥४८७॥

जा पीछे उद्दोत रवि कीनां। मधु तौ निस काहू नहीं चीन्हौ।
ता नर साह भोग बहु ले करि। आयर बैठौ तब ही नृप घरि ॥४८८॥
कोउ हय गज भेंटन आयो। किनहूं रतन अमोल बिसायो।
केऊ मोहर रुपये पालि धन। केऊ ल्याये बसन सिही तन ॥४८९॥
केऊ चीता हीरन ज लाये। केऊ बाज पंछी बौह धाये।
जो जाको जैसो उनमाना। सो सो भेट आइये राना ॥४९०॥
बैठे लोग सबै चित लाई। जानैं कब नुप नृप दरसाई।
घरी चारि दिन चढ़ियौ ऐसौ। ता पाछे मधु आयौ जैसैं ॥४९१॥
कंचन मई पाग सिर दीनौ। सिही चोलना सोंधैं भीनौं।
बांधे कट्या कटार ज सोई। कर मेंहि और तेग पुनि होई ॥४९२॥
मानो हुतो नृपति ही कोई। ताहू मैं यह सुंदर होई।
उठी निरषि सभा सब जबही। जाय नये भेट देब तबही ॥४९३॥

नृप देषि र सब लोग चित मैं सब चिवत्रत रहे।
मधु सरिषौ नुप येह पाछै लति जानैं दई ॥४९५॥

ता नर साह भेंट ले जबही। ले करि गयौ नृपति ढिग तबही।
मधु तब हसि करि लागौ पाई। देषै सभा सकल ही जाई ॥४९४॥
ता नर निहचै पुत्र निहार्‌यौ। दई खेल मन माहिं बिचार्‌यौ।
तिन पहलां नाहिनै पिछान्यौ। ता रन पाछै सगलां जानै ॥४९६॥
बोल्या सकल लोग यह बानी। करता करै सोय परवानी।
बड़े सिंघासन ऊपरि जबही। नृपति द्वै मधु बैठौ तबही ॥४९७॥
सारनि पिता बात सब बूझी। कह्यौ तबै मधु ही जैसी सूझी।
नगर माहिं सब बैही सुनियौ। मधु तौ राय सही प्रति मनियौ॥४९८॥
सुनियो कनक मालती रानी। बिनना मधु ही त्रिपति ज ठानी।
हरनी अपना हीय मंझारौ। भूली चंद्रसेनि दुप सारौ ॥४९९॥

कहन लगी हठ मालती करता दीयौ मिलाय।
अब निहचै मधु परखिसी लियौ भाग नहीं जाय ॥५००॥

कनक माल के मन में आई। मधु मालती बेगि परणाई।
बोहत भरे दुष मेरो बाला। सुंदर रूपवंत सुक माला ॥५०१॥
दूजौ दिन भी भयौ ज आई। सकल सभा बैठी तब जाई।
कनक माल ऐसैं करि पठयौ। मधु मालती ब्याह की अठयौ ॥५०२॥

ढील न करौ कह्यौ मो मानौ। तुम अपनी जीय में भी जानौं।
बात सवनि माने करि लीनी। लगन लिपाय तवैंही दीन्ही ॥५०३॥
अगहन मास तिथि दोईज होई। हूंहि काज मनवांछित सोई।
जो कछु मौज व्याह का होई। सवही आनि मिलाई सोई ॥५०४॥
देस देस के भ्रिपति बुलायो। मधु मालती व्याह के टायो।
बाजे वजन लगे दहौं ओरा। रह्यो नगर में मादक सोरा ॥५०५॥
मंडप बहुत रंग को कीनौ। दान बहुत मांग्यें जेहिं दीनौ।
अन प्रवाह सकल मैं होई। भूषौ प्यासौ रह्यौ न कोई ॥५०६॥
घर्ग साधि के लगन लगाये। वर कन्या येकत्र मिलाये।
पानि गहन वेद विधि कीनौं। बौहत भंडार विप्रन कुं दीनौ ॥५०७॥
चौरी चौह दिस कलस चढ़ाये। फिरि तहां दूलौ दुलहनि आये।
भौंरी फेरी मातक दीनी। कुला कर्म विधि गति सव कीनी ॥५०८॥
सिंघासन आसन सुप लाये। मधु मालती तहां वैठाये।
कनक कांति त्री दहौं दिसि छाजे। मधु नायक ता विचि विराजे ॥५०९॥

येक सरवर के माहि व्याह भयौ मधु मालती।
दूजें औहिं विधि साजि परण्यौ नृप मधु मालती ॥५१०॥

कनक माल रानी मधु देपैं। त्यौं त्यौं जनम सुफल करि लेपैं।
मन हरपित ह्वै लेय वलाई। जुगि जुगि जीवो कंवरि जवाई ॥५११॥
पूरन भयौ व्याह सुपकारी। वरनौं कहा वहुत विसतारी।
मधु मालती अनंत सुप करहे। निस दिन महल मझि असुरहे ॥५१२॥
भांति भांति की केलि कराही। नाहिन उपनें सुप जहां ही।
हसैं परसपर वदन निहारैं। दोउ मिलि करि राग उचारैं ॥५१३॥
कवहुं वेणि तंबुर वजावैं। कवहुं निरति आपही करावैं।
जा देपन कूं गंध्रप आवैं। मधु महल माझि सुप पावे ॥५१४॥
ये तौ कही महल की गाता। अव सुनि नृपतिपना की बाता।
ऊंचौ वड़ो सिंघासन होई। तापरि मधु वैठे निति सोई ॥५१५॥
जहां आय सिर नावैं भारी। वड़े वड़े छत्री कुल सारी।
मधु तिन माहैं ऐसैं छाजे। तैसे उडगन चंद विराजे ॥५१६॥
लेय महोलौ सवहिन केरौ। हय गज वाज पसू बौहतेरौ।
माते मद के गज जो होई। ताहि लरावैं नृपति ज सोई ॥५१७॥

चलि दी गौनिया चतुरी निसानै । दुंद नंद रोहिरन लखावै ।
द्वार भमान नाग चौपवीरो । नाचै नट यति भुंमर घेरो ॥५१८॥
आनो विविध भाँति की भाजा । मधु भोगवै सकल विधि काजा ।
मालति पर आत्यो सुख पायौ । मधु नो पोष माहिनै दिखायौ ॥५१९॥
चन्द्र सैनिजो राजन हो तौ । तिनकौ भयौ दुरगुन जैतौ ।
चौति भारि नाम यौं जबही । सेन चाल मधु मानि उपजाही ॥५२०॥
सेठी तुरी सभा सब सोई । मंत्री और विरोधिन कोई ।
सेठ दिना मधु बांधौ ऐसें । चंद्रसेनि आयौ यौं कैसें ॥५२१॥
कहौ सौहि सभनौं बिरदंता । ज्यौं हुं उनकु भीज कहंता ।
सुनि ते बचन त्रिपति यौं भिनि ठौ । मंत्रीनि कह्यौ बात या सबही ॥५२२॥
तेनै चंद्रसेनि यौं दुखो । करनौ नृपति ज्यौ करि दुखो ।
मधु तब सुनि करि बीयौ विचारो । चंद्रसेनि के अरिकौं मारो ॥५२३॥
औरो सकल आप दुख होई । लहै न जात तास्यौ कोई ।
कितोक करन हमारे आनै । मारौ निहचै के यौ भागै ॥५२४॥
ढील न करौ सबार चढाई । मेरा बचन मानि ल्यौ भाई ।
ऐसें कहे बचन नृप जबही । सुनि करि भये तयार ज सबही ॥५२५॥
करन लगे जुध कौ साजा । हूंनन लागे बौह बिधि बाजा ।
हसती दोय सहस सिंगारे । सातै बौहत ढाल बलि भारे ॥५२६॥
तुरी आठ लष पायक बाहेते । काहू पे ना जात न गनते ।
बौहत आरियां सजिल यौ संगा । चढयौ नृपति करि कै यह रंगा ॥५२७॥
देय निसान चले जेहिं दौरा । तहां करन कौ बहुतो बसेरा ।
जा दिन मालती अति दुष पायौ । मधु ग्रह माहि नाहि नैं आयौ ॥५२८॥

प्रीति वहै कलि सोय जो बिछुरत ही तन तजे ।
देषौ हसीन ज सोय जल बिछुरन कैसी करे ॥५२९॥

जैसी प्रीति मीन जल होई । तैसी ही मधुमालती सोई ।
दीठां बिन मधु मूरति नैना । मालती जीय मैं होय अचैना ॥५३०॥
मधु की फौज गई ततकारा । करन गोरि पैदल नहीं पारा ।
सुनि तब करन संक बौह मानी । जीतौ नहीं मनै मैं जानी ॥५३१॥
करन नृपति भी मन कौ सूरौ । भाजे नहीं दलानि मधि पूरौ ।
सनमुष आगौ दल बल सजिही । हूंन लगौ जुध अति तबही ॥५३२॥

मधु जीत्यौ सब मारिकें करन नृपति दल जोय ।
लयौ बैर नृप चंद कौ मालती मधु पति सोय ॥५३३॥

जा दिन मधु करनौ नृप मार्‍यौ । वा दिन देवी सेव बिसार्‍यौ ।
तावैं करन हारि यौं सोई । दूजें मधु कौ अति बल होई ॥५३४॥

देय नगारौ जिति जब लयौ । मधु को लोग येक ना मरियौ ।
आयौ अपनैं नगर कनारैं । राम सरोवर जहां विहारैं ॥५३५॥

येक दिन मधु उतही रहियौ । बालपनैं निस दिन वित बसयौ ।
जा पीछें आयौ ग्रह मांही । दीनौं सीष लोग घरि जाहीं ॥५३६॥

चंटी नगर में बौहत बधाई । मधु तौ कनक माल जित जाई ।
कही बात सबही जुध केरी । भई जीति असी बिधि मेरी ॥५३७॥

सुनि कें कनक माल तब रानी । हरषी जीय बहुत सुष मानी ।
मधु की लई बलाय बहुत बर । जीवो बहुत बरस तुम अैं घर ॥५३८॥

इतनैं दिन कौ विरह सही कनि । मालती ऊभी निरषै मधु तनि ।
निरषि निरषि लोचनि सुष पावै । मधु विन जाकूं क्यौं न सुहावै ॥५४०॥

जा पाछैं मधु आयौ जितही । हुतौ पहल मालती तितही ।
अंक भुजा भरि मिलीये दोई । वोयौ विरह जोय तनि होई ॥५४१॥

बौह बिधि सुरत केलि जहां कीनी । असैं जनम सफल करि लीनी ।
बहुत दिना बीते सुष असैं । भुगतै इंद्र सरग रस जैसैं ॥५४२॥

येक समैं पवढे दोउ सैना । मालती भयौ सुपिनौ मधु गौना ।
मालती पिय बिछर्‍यौ मनि धारो । हाय हाय करि टेरि पुकारो ॥५४३॥

हम तुम मधु असौ ना नेहा । जो पल भरि अंतर सहै देहा ।
जब ये कहे मालती बैना । सुनि मधु कानि जीय भयौ चैना ॥५४४॥

मधु जंपे मालती पीयारी । कह कह्या तुम नींद मंझारी ।
हूं तुम तजि कितहुं ना जैहैं । बिछुरन केरौ नांव न लैहैं ॥५४५॥

मेरे प्रान बसैं तुव ओरा । तुम संग विना कौन है ठौरा ।
सुनि पीय बचन मालती सिरानी । नैन उघारि बहुत सुष मानी ॥५४६॥

शुद्धिपत्र

(स्वीकृत पाठ)

प्रथम संख्या छंद की तथा दूसरी उसके चरण की है।

स्थल	अशुद्ध	शुद्ध	स्थल	अशुद्ध	शुद्ध
३·१	बसति	बसहि	३११.२	गुलाल	जु लाल
४·१,४	नृप	न्रप	३२०·४	भला	भली
३८·२	दूर	दूरे	३२५·	निर्मल	निमष
३९·१	बोले	बोलै	३४१·४	झ ंग	अंग
४५·२	दोउँ	दोनुं	३४३·१	कहा	कही
४८·३	बोलती	बोल	३४३·२	आकि	आनि
६४·४	पुनि	फुनि	३५७·४	मोरि	मोहि
६८·४	हो	वो	३६४·१	धरे	परे
६९·४	(हरवे)	हरवे	३७०·३	गमाव	गमावै
९०·२	परयो	पारयो	३७०·४	पाव	पावै
९७·४	मिलिबे	मिलबे	३७०·१	कुं	क्युं
१३५·१	सींघन	सींघ न	३८१·४	तिन	ति
१५२·१	इडं	इउं	३८२·४	नृप	न्रप
१५६·४	छंडे	छंडै	३९२·३	कीगै	कीजे
१६२·२	कुमार	कुमर	३९४·३	त्रिष्ना	त्रिस्ना
१७९·३	'प्रिथी'[2] मांझ'	पृथी मांझ'[2]	३९५·४	मंगवौ	मांगवौ
१९५·४	'कून	कून	३९९·१	ताभ	ताप
२४७·२	सहई	सकई	४०४·१	डु ंह	भुंह
२५२.३	आप धरि	आप	४०५·१	कम	कसल
२६२·४	॥४	॥	४०७·४	सो	सी
२६५·२	करि	कहि	४१२·१	गोभा	गोभा
२९२·३	घिरित	घ्रिरित	४१६·२	काम···है	'काम···है'[3]
२९२·४	कहै	कहै तो	४१७·१	कँवल	कंवल
३०६·१	कुसमल	कुसम तैं	४१८·२	इह	एह

५४५'२	तु पै	तुमै	५९४'४	भुंड	भुंढ
५५३'२	मलका	भलका	५९७'४	छाटा	फाहा
५५३'३	राव	राम	६२१'१	'वच्चन' १	'वचन
५७२'१	जो वन	जोवन	६२१'२	स्याए	स्याम
५७५'२	सर भी	सरभर	६२२'२	नरकन	नरक नें
५८३'३	पवाह	प्रवाह	६३०'२	मेटि	मेंट
५८६'२	मागी	भगती	६३६'२	वे	वेह ज
५९०'३	भुवन	श्रवन	६३६'२	अ वेह[२]	'अर'[२] वेह
५९२'१	जै	जे	६४०'२	वरनाईं	करनाईं
५९३'३	लीदी	लीडी	६४६'४	लप	लप

पादटिप्पणी

पहली संख्या छंद की है और दूसरी उसकी पादटिप्पणी की है ।

३'२	वि०	द्वि०	७४'६	होत	कोटि
३'४	नाइ	मानूं	७८'२	तृ०१,२	तृ० २
१०'२	धाइ	थाइ	८०'२	केति कह	केतिक
१३'२	क्रांत	क्रांम	८४'३	अवसन	असवन
१७'४	देवल परमरे	केवल महमहे	१००'१	एह	एहि
१९'१	इहे	ईहे	१७२'३	प्र ३'१	३' प्र०
२१'२	सुगहे	सुगहे	२४०'१	पटी	परी
२४'१	पर	वर	२४७'८	नाम	जाम
२७'३	में जोड़ें	४ द्वि.१चढ्यो	२५७'४	मृग हीयो	हीयों
३०'२	समान	समाव	२६८'४	वधे	वंधे
३१'४	तित	हित	२९२'२	उदध	उदक
४२'१	वांधी	वाधी	३३५'५	विद्या	विध्या
४७'१	उधम	उद्यम	३४६'२	ढिढ	द्रिढ
५२'३	नीती	नीती पंपें	३४८'१	महमह	महमहे
५४'४	सहसु	सहस्र	३५१'१	होपैं	लेपैं
५८'६	मारैं है	मारैं	३५१'४	मूंडी	मूंरी
६३'२	के रहुं	ते रहुं	३५३'३	१	प्र० १
७०'३	दिन	कित	३५८'१	निकटा	निकटी